वीर सेवामन्दिर-सस्ती ग्रंथमालाका द्वितीय पुष्प

महिला शिक्षासंग्रह

पं० परमानन्द जैन, शास्त्री

—:o:—

—:o:—

प्रकाशक

वीरसेवा मन्दिर

७/३३ दरियागंज, देहली।

द्वितीयवार ५००० | वीर नि० सं० २४७६ | लागत मात्र सवा रुपया

दो शब्द

भारतीय वातावरणमें धर्मका स्थान महत्वपूर्ण है। धर्मके अहिंसादि सिद्धान्त अत्यन्त व्यापक, लोकोपयोगी एवं आत्म-कल्याण करने वाले हैं। उनपर चलनेसे हरएक आत्मा अपना पूर्ण विकास कर सकता है इन सिद्धान्तोंके सर्व-साधारणमें प्रचारका अभाव देखकर हृदयमें एक गहरी ठेस सी लगती है कि इन सर्वजनीन सिद्धान्तोंका प्रचार आखिर क्यों नहीं हुआ ? यदि उनका प्रचार हो तो कैसे हो ? आजकल धार्मिक साहित्यके ग्रन्थोंका जो प्रकाशन हो रहा है उन ग्रन्थोंका मूल्य अधिक होनेसे सर्व-साधारण उन्हे खरीद नहीं सकता, अतएव वे धर्मकी सुखद शीतल छायाके लाभसे वंचित ही रह जाते हैं। एवं भौतिक पदार्थोंकी अभिलाषा-वन्हिसे सन्तप्त होकर इधर उधर भटकते फिरते हैं। आत्मिक (धार्मिक) साहित्य उन्हें सुलभतासे मिल सके और उसका अध्ययन कर स्व-हित साधन वे कर सकें इसी पवित्र भावनाको लक्ष्यमे रखते हुए श्री १०५ पूज्य क्षुल्लक चिदानन्दजीकी प्रेरणानुसार वीर सेवा मन्दिरके तत्त्वावधानमें 'सस्ती ग्रन्थमाला' की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य स्वाध्याय प्रेमी पाठकोंको लागत मूल्यमें ग्रंथोंको प्रकाशित करके देना है। ग्रंथमालासे इस समय पद्मपुराण (रामचरित), मोक्षमार्गप्रकाश, रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्रावकधर्मसंग्रह, सुखकी झलक, सरल 'जैनधर्म चारों भाग, महिला शिक्षासंग्रह और छहढाला इन आठ

ग्रन्थोंके प्रकाशनकी योजनाकी गई थी, जिनमें छहढाला, सुखकी झलक और 'सरल जैनधर्म चारों भाग' इन ग्रन्थोंका प्रकाशन द्वितीयबार भी हो चुका है, महिला शिक्षा-संग्रह सजधजके साथ फिरसे आपके हाथोंमें है।

मोटे टाइपमें प्रकाशित होनेके कारण उसका कलेवर बढ़ गया है इससे मजबूरन ग्रन्थके मूल्यमें चार आनेकी वृद्धि करनी पड़ रही है।

नारी-समाजमें अभी तक उनके उपयोगी साहित्यका प्रायः अभावसा बना हुआ है। जो कुछ थोड़ा-सा साहित्य लिखा गया है वह भी अपने ढंगका निराला है। पठन-क्रमका साहित्य तो बिल्कुल लिखा ही नहीं गया। अतः इस सम्बन्धमें अच्छे एवं ठोस साहित्यके निर्माण करने और प्रकाशित होनेकी जरूरत है। इस सदुद्देश्यको लेकर 'महिला-शिक्षा-संग्रह' नामकी इस पुस्तकको संग्रह करके प्रकाशित किया गया है और यह ग्रंथमालाका द्वितीय पुष्प है। इसके संग्रह और प्रकाशनका उद्देश्य स्त्री-शिक्षाको प्रोत्साहन देना और उन्हें अपने कर्तव्यकी दिशाका ज्ञान कराना है। इसका संग्रह पूज्य क्षुल्लक चिदानन्दजीकी प्रेरणानुसार किया गया है। इसमें बा० सूरजभानजी वकील, पं० जयदयालमल्लजी और पं० दीपचन्दजी वर्णी, इन तीन विद्वानोंकी कृतियोंका—गृह-देवी, 'श्रावक वनिता बोधिनी' 'ससुराल जाते समय पुत्रीको माता का उपदेश' नामकी तीनों पुस्तकोंका—क्रमसे संग्रह किया गया है जिसके लिए लेखक महानुभावोंका मैं बहुत आभारी हूँ। दो-

तीन प्रकरण पं० सुन्दरलालजी न्यायतीर्थके भी संकलित हैं जिन्हें उन्होंने अपनी स्वरुचि अनुसार लगाए हैं।

इस द्वितीय आवृतिमें प्रूफ रीडिंगका कार्य पं० विजयकुमारजी शास्त्री साहित्यरत्नने सम्पन्न किया है एतदर्थ वे धन्यवादके पात्र हैं।

पुस्तकमें यदि प्रेस सम्बन्धी कोई अशुद्धि रह गई हो तो पाठक महाशय सूचित करें उसे अगले संस्करणमें शुद्ध कर दिया जायगा। आशा है पाठक इस महिला समाजके लिये अति उपयोगी पुस्तकको पसन्द करेंगे।

——परमानन्द जैन

विषय-सूची

मुद्रक: राजहंस प्रेस, सदर बाजार, दिल्ली।

भावना—

जागर्ति उषाकी मधु वेलामें,
नव चेतनता जागे ।
भारतकी महिलाओंमें भी,
क्रान्ति लहर लहरावे ॥

अबला सबला बनें परस्पर
जीवन सुखी बनावें ।
शिशु-संरक्षण सीख स्वयं
सन्तति को सुदृढ़ बनावें ॥

कर्तव्य मार्गपर रहें अटल
लख कर निजकी स्थितियां ।
कभी न हर्षें शोक मनावें
पाकर विधिकी विधियां ॥

कर्मठ कुशल कलाविद्,
बनकर सदाचारिता पालें ।
व्यय परिमित करके जीवन,
में विपदाओंको टालें ॥

रखें सदा सन्तोष सादगी-
को ही नित अपनाकर ।
वैभव पूर्ण बनावें घर सब
निज विवेक को पाकर ॥

सदा जगे मातृत्व दिलोंमें
पर पत्नीत्व न रीते ।
जन्म-भूमि के अर्थ मरें पर
जीवन कभी न मीते ॥

निज कुटुम्बके हर सदस्य—
पर प्रेमामृत बर्षावें ।
क्षुद्र स्वार्थ तज शान्ति-सुधा,
पी—निज घर स्वर्ग बनावें ॥

—विजय कुमार चौधरी

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	११	गृहणी	गृहिणी
६	१९	मरने को	मरेको
२४	१६	सुथरी	साफ-सुथरी
२८	११	आगन	आंगन
५२	३	जिठानी की	जिठानी के
५४	१४	ही रहा है	हो रहा है
७१	१३	बनाने की	बननेकी
७६	६	ग्रहस्थ	गृहस्थ
७८	६	त्रुद्धता	शुद्धता
७८	१६	शुद्ध-अचारयुक्त	शुद्धाचारयुक्त
८०	६	हरिवंश पुराण	हरिवंश पुराणसे
८६	१३	गड	गढ़
८९	१९	अपन	अपने
८९	२१	तोत	पोत
१००	१९	संभवः	संभवतः
१०२	१६	दोदी	दादी
१०५	११	जस पर	जिसपर
११६	१९	वदेद्वक्यं	वदेद्वाक्य
१२०	५	जगत्भये	जगत्रये
१२०	१४	भावसे	भवमें
१२०	१८	स्याच्चेटो दरिद्रोऽपि	स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि
१२२	१८	अष्टकर्मविनाशकम्	कर्माष्टक विनाशकम्
१२६	१९	डाक्कर	डाक्टर

१३५	१	शुद्धना	शुद्धता
१४०	७	व्याभिचारिणी	व्यभिचारिणी
१४८	७	३८	४८
१४६	२	अगृहीत	गृहीत
पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४६	१६	×	देखो आदि पुराण-पर्व ३७ ३८
१४६	२०	देखो आदि पुराण-पर्व ३७–३८	×
१५०	१	नरह	तरह
१५३	१२	अत्म	आत्म
१५३	१७	सेवयं	सेवणं
१५४	७	मत्सये	मणणाये
,,	८	धम्म णिहं	धम्मणिहिं
१५५	२	भिक्षुक	और भिक्षुक
१५५	३	शस्त्र	शास्त्र
१६४	७	सद्भाव-भंजन	सद्भाव-भंजक
१६५	१२	घर	नर
१७६	१	ह्यज्ञानान्दन्य:	ह्यज्ञानादन्य:
१८३	२१	सतक	सूतक
३०५	१०	रखन-।×	रखना × ।
२१५	२	सापेक्ष्य	सापेक्ष
२१५	२१	व आदिके	व हँसी आदिके
२२२	१६	गृहस्थाश्रम	गृहस्थाश्रम
२२६	१२	नित्य वगैरह	वगैरह
२३३	१०	जाजीदार	जालीदार

महिला शिक्षा संग्रह

भारत—महिलायें सभीं, शिक्षित हों सविवेक ।
सदाचार पालें सदा, रखें धर्म-कुल टेक ॥
'युगवीर'

स्त्री-पुरुषका कर्तव्य

स्त्री और पुरुष गृहस्थरूपी गाड़ीके दो पहिये हैं। गृहस्थ की गाड़ी इन्हीं दोनोंसे चलती है। पुरुषका काम है कि वह घरके बाहर जाकर और मिहनत मशक्कत उठाकर दो पैसे कमा कर लावे और स्त्रीका काम है कि वह घरमें रहकर घरका काम चलावे। बाल-बच्चोंका पालन-पोषण करना, बड़े, बूढ़ों और रोगियोंकी टहल-सेवा करना, सारे कुटुम्बके खाने-पीने पहनने-ओढ़नेका प्रबन्ध करना और घरको आनन्दका स्थान बनाये रखना स्त्रीके मुख्य कार्य हैं। स्त्रीके इन कामोंकी वजहसे ही उसको गृहणी या घरवाली कहते हैं। स्त्रीका यह काम है भी असलमें ठीक ही, क्योंकि घरकी सारी शोभा और घर का सारा आनन्द स्त्रीसे ही है। दिन भर की मेहनत करके जब पुरुष हारा-थका शामको घर आता है और अपनी स्त्रीका प्रसन्न मुख गुलाबके फूलकी तरह खिला हुआ देखता है, तो उसकी दिन-भरकी सारी थकान दूर हो जाती है वह

अपनी सारी चिन्तायें भूलकर स्वर्गका आनन्द लेने लगता है।

अपने पतिको घर आते देख स्त्रीने अपने गोदके बच्चेके हृदयमें उसके पिताके आनेका चाव पैदा करना शुरू कर दिया है॥ 'आहा! पिताजी आ गये, हमारे नन्हेंके लालाजी आ गये। वह आये, वह आये, वह देखो आ रहे हैं यह कहती जाती है और बच्चेको गोदमें कुदा-कुदाकर उसके पिताकी तरफ लेजा रही है और दरवाजे तक पहुँच गई है। बच्चेने भी अपने बापको देखकर आँगु-आँगू करना शुरू कर दिया है, और अपने बापकी तरफ देख-देखकर प्यारभरी निगाहसे मुस्करा रहा है और पिताकी गोदीमें जानेके वास्ते गिरा पड़ता है। बापने भी चट उसको गोदी में लिया है और छातीसे लगाकर अपने कलेजेको ठण्डा किया है। दूसरा लड़का जो इससे कुछ बड़ा है बापकी टाँगोंसे लिपट गया है और तोतली बोलीमें मीठी-मीठी बातें बना रहा है। बापने उसको भी दूसरी गोदीमें उठा लिया है और उसकी बातें सुनना शुरू कर दिया है। तीसरा लड़का जो उससे भी बड़ा है पाठशालामें पढ़ता है वह भी बापके सामने आकर खड़ा हो गया है और बड़े चावसे अपनी पाठशालाकी बातें सुना रहा है। इससे भी बड़ी एक कन्या है जो हाथमें पंखा लिये खड़ी है और पिताजीको हवा करनेके वास्ते उतावली होरही है। स्त्री भी बहुत ही चावमें आकर हंसती हुई पतिके चारों तरफ फिर रही है और खुशीकी

बातें बना-बनाकर बच्चोंको हंसा रही है और अपने पतिको प्रसन्न कर रही है।

इसप्रकार वह पुरुष अभी बैठने भी नहीं पाया है कि घरमें घुसते ही ऐसे आनन्द सागरमें मग्न हो गया जिसका कुछ भी वार और पार नहीं है। आरामसे निश्चिन्त बैठकर जब वह अपनी स्त्रीकी प्रेमभरी बातें सुनेगा तब तो सचमुच ही उसके हृदयकी कली खिल जायगी और उसको वह आनन्द आयगा जिसका कुछ ठिकाना नहीं हो सकता है। और जब वह अपने सब बाल-बच्चों और स्त्रीके साथ बैठकर बड़े प्रेमके साथ खाना खायगा और अनेक प्रकारकी गपसप सुनेगा और सुनायेगा, तब तो उसको चारों तरफ आनन्द ही आनन्द दिखाई देने लगेगा और वह अपने सब ही प्रकारके रोग, शोक और चिन्ताएं भूल जायगा।

लेकिन जब वह स्त्री कुछ दिनके वास्ते अपने बापके यहाँ चली जाती है और उसके सब बाल-बच्चे अर्थात् घरकी सारी बाग़-बाड़ी भी उसहीके साथ जाती है तब पुरुषको अपने घरमें स्वर्गका समाँ नहीं दिखाई देता है जो उस स्त्रीके होते हुए बन रहा था। हाँ, जब वह स्त्री अपने बापके यहाँसे वापस आजाती है और सारे रोने-भोने (बाल-बच्चे) साथ लाती है, तब वह फिर आनन्दसे भर जाता है और हर तरफ खुशी ही खुशी दिखाई देने लगती है। इस वास्ते घर असलमें स्त्री

ही से है और वह ही सच्ची घरवाली है और सिर्फ घरवाली ही नहीं है, बल्कि घरकी असली शोभा और घरकी साक्षात् देवी ही है। घरका सारा आनन्द और सारी खुशी स्त्रीके साथ है। स्त्री है तो जंगलमें भी मंगल है, फूँसकी झोंपड़ीमें भी स्वर्गका वास है। स्त्री नहीं है तो शीश महलोंका रहना भी फीका है। किसीने सच कहा है कि "बिन घरनी घर भूत का डेरा।"

परन्तु ये सब बातें तब ही हैं जबकि स्त्री तमीजदार हो, बुद्धिमान् हो, पवित्र आत्मा और शान्त स्वभाववाली हो, और सुखी रहने और दूसरोंको सुखी रखनेका विचार रखती हो, मान माया लोभ क्रोध आदि कषाय जिसके काबूमें और अपनी पाँचों इन्द्रियाँ जिसके वशमें हों, हृदय जिसका सब जीवोंकी दयासे भरा हुआ हो, जो सदा सबका भला चाहती हो, ऊंच-नीचका जिसको विचार हो, बुरे-भलेको अच्छी तरह समझती हो, जरूरत और बे-जरूरत और वक्त-बेवक्तकी जिसको पहिचान हो, जो सहनशील, सन्तोषी, हर हालत में खुश रहने-वाली, अपने कर्तव्यको अच्छी तरह जाननेवाली, अपनी हैसियतके अनुसार घरका काम चलानेवाली, थोड़ेमें भी आनन्दके साथ गुजारा करनेवाली, आगेके नफे नुकसानको विचारनेवाली और घरका ऐसा इन्तजाम करनेवाली हो, जिससे सारी उम्र आनन्दमें ही व्यतीत हो जावे।

लेकिन अगर स्त्री बदतमीज हो, नासमझ हो, बेवकूफ

हो, फूहड़ हो, लड़ाका हो, कलिहारी हो, हानि-लाभका कुछ ज्ञान न रखती हो, नफे-नुकसानको बिल्कुल न समझती हो, आगेका कुछ भी विचार न रखने वाली हो, अपने भलेकी बात न सुनना चाहती हो, जिद्दी और हठीली हो, मान, माया, लोभ, क्रोधके वशमें होकर अपने आपको और दूसरोंको दुखी करनेवाली हो, तो फिर वह घर सुखका स्थान और आनन्दका धाम बननेकी जगह महा विपत्तिका स्थान और संकटोंका धाम बन जायेगा, और उस घरमें सदा रोग, शोक और तरह-तरहके क्लेशोंका ही डेरा रहने लगेगा।

ऐसी स्त्री पतिके घर आनेपर उसको प्रसन्न करनेकी जगह उसके चित्तको और भी ज्यादा दुखी करती हैं, हंसी-खुशीकी बातें सुनाकर और उसकी चिन्ताओंको भुलाकर हृदयको प्रफुल्लित करनेकी जगह सोच-फिक्रका ऐसा भारी पाट उसकी छातीपर रख देती हैं कि उसका दिल टूट जाता है और वह अपनी जिन्दगीसे भी बेजार हो जाता है। पतिने अभी घरमें अच्छी तरह कदम भी नहीं रक्खा कि वह स्त्री चिल्लाना शुरू कर देती है और ताने मार-मारकर कहने लगती है कि किसी दूसरेके भी जान है कि नहीं, जो कि दो घण्टेसे रसोई तैयार करके भी बैठी-बैठी सूख रही हूँ, क्या घर काट खावेगा जो यहाँ आते हुए भी डर लगता है, और ख़ैर, अगर किसी दूसरेकी फिक्र नहीं है तो क्या अपने पेटकी भी फिक्र नहीं है जो रोटी

खाना भी नहीं सूझता है। इस प्रकारके ताने सुनता-सुनता जब वह दो कदम आगे बढ़ता है तो क्या देखता है कि सात वर्षका छोटा बेटा जमीनपर पड़ा रो रहा है। यह क्यों रोया, बार-बार पूछने पर भी इसका कुछ जवाब नहीं मिलता। आखिर बहलाने फुसलाने पर बेटी इतना बताती है कि माँने मारा। क्यों मारा, इसका जवाब देनेका साहस बेटीको किसी तरह भी नहीं होता। लाचार पतिने डरते-डरते अपनी स्त्रीसे पूछा। फिर क्या था! मानो शेरनीको छेड़ दिया। इतनी बात सुनते ही वह एकदम अपनी बेटीपर बरस पड़ी, और खूब दिल खोलकर गालियोंकी बौछार करनी शुरू कर दी और कहने लगी कि अंधी, दीदों फूटी, रांड, कोढ़न मैंने कब मारा है मैंने तो इसको उंगली भी नहीं लगाई। इस तरह जो मुंहमें आया बक बकाकर फिर अपने पतिकी तरफ मुंह करके कहने लगी कि नाश गयेसे ही क्यों नहीं पूछते जो पड़ा रो रहा है। इतना लाड़ लड़ाते और करते कराते भी जिसका मन नहीं भरता है और बिगाने द्वार माँगता फिरता है। भला इस गढ़ेमें दधनेको क्या यहाँ कोई खिलौना नहीं जुड़ता जो औरोंसे मांग मांगकर लाता है। मैंने तो इस जल मरनेको कुछ कहा भी नहीं, दूसरेको चीज वापस दे आनेको समझाया था, पर यह आग लगा क्या किसीकी कुछ कही माने है। बस इतनीसी बात पर क्या रोहाराट मचा रक्खा

है । इस प्रकारकी अनेक बातें होकर बहुत कुछ मगजपच्ची करनेके पीछे बहुत देरमें बड़ी मुश्किलसे पति को यह मालूम हुआ कि आज दोपहरको बहूजीका अपनी जिठानीसे खूब जंग बजा है। बच्चेको इस लड़ाईका कुछ हाल मालूम नहीं था। पाठशालासे आकर रोजकी तरह अपनी ताईकी लड़कीके पास खेलनेको चला गया और वहाँसे एक खिलौना ले आया, जिसको देखकर बहूजी आग-बबूला हो गईं। पहिले तो बच्चेको मारा कि तू अपनी ताईके यहाँ क्यों गया था और खूब डराया धमकाया कि खबरदार, अगर फिर उसके घर गया तो टांग तोड़ दूंगी और जीतेको गड्ढेमें गाड़ दूंगी। फिर उससे खिलौना छीनकर अपनी जिठानीके घर फेंक आई। तबसे वह बेचारा कमबख्तीका मारा पड़ा रो रहा है। यह हाल मालूम करके पति बेचारा अपनी भाभीके पाससे वह खिलौना फिर ले आया और बच्चेको खिलौना देकर मनाने लगा। यह देखकर बहूरानी ऐसी तड़की और भड़की मानों रेलका इञ्जन ही फट गया हो और अपने पतिको एक-से-एक बढ़िया ऐसी गालियाँ सुनाई कि पास-पड़ौसवालों का भी कलेजा दहलने लगा। फिर जब बकती-बकती थक गई तो दोनों हाथोंसे अपने आपको पीटना शुरू कर दिया और ऐसा पीटा कि सारा बदन नीला हो गया। पति बेचारा खड़ा-खड़ा कांप रहा है और बाहर भाग जाना चाहता है, लेकिन डरता है कि वह बच्चोंपर ही अपना गुस्सा

उतारने लगे जिससे इन बेचारोंका कचूमर निकल जाय। इस वास्ते उसको न वहाँसे जाते बनता है और न ठहरते। पर यहाँ तो आज ही यह नई बात नहीं हुई है। यहाँ तो सदा ऐसी ही बातोंकी सोहबतसी पड़ गई है। इस वास्ते उसने ज्यों-ज्यों करके मामला निपटा ही लिया और सबने खाना खा लिया।

प्यारी बेटियो! तुम ही विचारो कि जिस घरमें ऐसी स्त्री हो वह घर स्वर्गपुरी है या नर्ककुण्ड? और वह स्त्री आनन्दकी देवी है या डायन चुड़ेल? खैर, हम ऐसी स्त्रियोंके विषयमें ज्यादा लिखकर तुम्हारा दिल दुखाना नहीं चाहते, बल्कि सिर्फ इतना ही कहते हैं कि यह बात स्त्री के अपने अख्तियारमें है कि चाहे वह स्वर्गकी देवी बन जावे और चाहे डायन, और यह भी उसके ही वशमें है कि वह अपने घरको आनन्दका स्थान बना दे या दुख भोगनेका कैदखाना। इतना ही नहीं, बल्कि सच पूछो तो दुनियाभरका सारा बिगाड़ सुधार स्त्रीके ही आधीन है।

मनचाही योग्य सन्तान उत्पन्न करनेका उपाय

मेरी बहिनो! तुम यह बात भली-भांति जानती हो कि सब ही लोग यह बात चाहते हैं कि हमारी सन्तान सबसे ज्यादा बुद्धिमान्, बलवान और रूपवान पैदा हो। मगर यह बात तुममें से शायद किसीको मालूम हो कि ताकतवर या कमजोर, अक्लमन्द या बेवकूफ, खूबसूरत या बदसूरत,

नेकचलन या बदचलन, गरज हर किस्म की बुरी-भली औलाद पैदा करना स्त्रीके हाथोंमें है, क्योंकि गर्भके दिनोंमें ९ महीने तक जैसे भाव, जैसे विचार और जैसे आचरण गर्भवती स्त्रीके रहते हैं, वैसा ही स्वभाव बालकका गर्भसे बनता रहता है और पैदा होनेपर वैसे ही स्वभावका वह होता है। यह बात कोई झूठ बहकाने या उल्टी-सुल्टी गप्प मारनेकी नहीं है, बल्कि शास्त्रोंमें लिखी है और बड़े-बड़े विद्वानों और डाक्टरोंने इसको भली-भाँति आजमाकर देख लिया है और अच्छी तरहसे सिद्ध कर दिया है। सतयुगके ज़मानेमें बड़े-बड़े साहसी, पराक्रमी और धर्मात्मा, जिनका यश आज तक दुनियाँमें गाया जा रहा है अपनी माताओंके अच्छे विचारोंके ही कारण ऐसे पैदा हुए थे, और आजकल जो कमज़ोर, आलसी, कम हिम्मत, बेहौसला, कर्महीन, कुकर्मी और दुराचारी मनुष्य दिखाई दे रहे हैं वे सब उनकी मूर्ख माताओंके बुरे विचारोंका फल है। आजकल जापान, अमरीका और इंग्लिस्तानकी स्त्रियाँ जो बुद्धिमान् और उत्तम स्वभाववाली हैं, ऐसी बलवान, बुद्धिमान् साहसी और पुरुषार्थी सन्तान पैदा करती हैं कि जो दुनियाँभरमें नाम पैदा करती हैं। इनके बड़े-बड़े कामोंको देखकर सब लोग अचम्भेमें आकर यह कहने लगते हैं कि धन्य है उस कोखको जिसमें यह रत्न निकला है और धन्य है उस माताको जिसने यह लाल पैदा किया।

मेरी बहिनो! गर्भके दिनोंमें माताके जैसे विचार रहते हैं उससे बालकका सिर्फ अच्छा बुरा स्वभाव ही नहीं बनता, बल्कि बालकके रंग-रूपका बनाना भी माताके अख्तियारमें है। आजकल विलायतकी अनेक स्त्रियोंने दावेके साथ सन्तान पैदा की है, और जैसी औलाद पैदा करनेका दावा बांधा है, गर्भके दिनोंमें वैसा ही विचार रखकर वैसी ही औलाद पैदा करके दिखा दी है। इस वास्ते इस बातमें रत्तीभर भी सन्देह नहीं है कि दुनियाँभरको बुरा या भला बना देना स्त्रियोंके हाथमें है। इस छोटी-सी किताबमें वह सारी बातें तो नहीं लिखी जा सकती हैं जिनके करनेसे जैसी चाहें सन्तान पैदा हो सके। यहाँ तो मोटे रूपमें इतना ही लिख देना काफी है कि जो स्त्री गर्भके दिनोंमें हर वक्त आनन्दमें मग्न रहेगी, हंसी-खुशीमें ही दिन बितावेगी, किसी बातपर भी क्रोध न लावेगी, किसी हालतमें भी क्लेश न मानेगी, चाहे कुछ भी हो जाय पर वह अपने मनमें शोक न आने देगी, सोच-फिकरको टालेगी प्रेम और प्रीतिसे सबको अपना बनावेगी सब हीका भला चाहेगी, अपने दुश्मन तकका भी बुरा न मनावेगी, डाहको बिल्कुल भी अपने मनमें न आने देगी, बल्कि दूसरोंकी बढ़ती देखकर, दूसरोंको आनन्दमें मग्न पाकर अंगमें फूली न समावेगी, हर वक्त ऊंचे भाव, ऊंचे विचार, अपरिचित और खुला दिल रक्खेगी, सबका आदर सत्कार करेगी, मनमें हौसला रक्खेगी, हर वक्त काममें

लगी रहेगी, हरवक्त उजली और साफ़-सुथरी बनी रहेगी और हृदयको शुद्ध और पवित्र रक्खेगी, उसकी औलाद जरूर ही खूबसूरत, सुडौल, मजबूत, गठीली, ताकतवर, बहादुर, हंसमुख सबको प्यारी लगनेवाली, बड़े हौसले रखनेवाली, बाप-दादा का नाम रोशन करनेवाली, कुछ करके दिखानेवाली नेक और धर्मात्मा पैदा होगी।

परन्तु जो स्त्री गर्भके दिन लड़ने-भिड़ने, रोने-धोने, सोच-फिकर, सुस्ती और काहिलीमें बितायेगी, मैली-कुचैली रहेगी, मनमें खोटे भाव रक्खेगी और दूसरोंका बुरा मनावेगी, उसकी औलाद भौंडी, बेढंगी, बदसूरत, लचर-पचर, रोगी, कम हिम्मत, कम हौसला, चिड़चिड़े मिजाजवाली, बदचलन, बदनियत, पापी और दुराचारी पैदा होगी, और मां बाप को सदा दुख ही देती रहेगी और उनका नाम भी डुबायेगी।

इसमें सन्देह नहीं है कि अच्छी सन्तान पैदा करनेकी यह आसान तरकीब मालूम करके सब ही स्त्रियोंके मनमें यह चाव पैदा होगा कि हम भी गर्भके दिनोंमें अपने उत्तम-उत्तम भाव बनाकर और हंसी-खुशीमें समय बिताकर अच्छी सन्तान पैदा करनेकी कोशिश करें। लेकिन मेरी बहिनो, यह बात याद रक्खो कि जो स्त्री पहलेसे ही अपने भाव उत्तम रखनेकी आदत डालेगी और सदा आनन्दमें ही आयु बितानेका अभ्यास रक्खेगी वही गर्भके दिनोंमें भी अपने भाव अच्छे रख सकेगी

और नौ महीने सुख-चैनसे विता सकेगी। परन्तु जो स्त्री सदा तो रखती है कलह और क्लेश, हमेशा तो विचारती रहेगी सबकी खोटी, और सदा अपने भाव रक्खेगी घटिया, और गर्भके दिनोंमें चाहेगी अपने भाव ऊंचे रखना और नौ महीने तक प्रसन्न चित्त रहना जिससे उसके भी उत्तम सन्तान पैदा हो, तो वह हर्गिज भी ऐसा न कर सकेगी। इस कारण उत्तम सन्तान पैदा करनेकी इच्छा रखनेवाली स्त्रियोंको चाहिये कि वे सदा ही ऊंचे विचार रखने और हंसी-खुशीमें आयु बितानेका अभ्यास रक्खें, और सबसे ही प्यार मुहब्बतका बर्ताव करने और सच्चा प्रेम रखनेका अभ्यास डालें, जिससे हर वक्त ही उनका चेहरा गुलाबके फूलकी तरह खिला रहे और जो कोई एक पल भरको भी उनके पास बैठे, वह उनके उत्तम स्वभाव से ऐसा प्रसन्न हो जावे जैसा गुलाबके फूलकी सुगंधिसे, और उनकी बातें भी सदा हर एकके साथ ऐसी मीठी-मीठी और सुहावनी हों मानों मुखसे फूल ही झड़ रहे हों।

प्यारी बहनो! ये बातें भी तुम अच्छी तरह जानती हो कि बच्चा जो कुछ देखता और सुनता है वही सीखता है और वैसा ही बन जाता है। अंग्रेजोंके बच्चे अपने मां-बापको अंग्रेजी बोलता हुआ सुनकर बिना सिखाये ही अंग्रेजी बोलना सीख जाते हैं और हमारे बच्चे हमको हिन्दी बोलता देखकर ही हिन्दी बोलने लगते हैं। यही कारण है

कि गंवारोंके लड़के गंवारू बोली बोलते हैं और शहरोंके लड़के शहरी । इसी प्रकार जो बच्चे ऐसे घरोंमें पलते हैं जहाँ हर वक्त दंगा, फिसाद और कलह रहता है, वे बच्चे भी सदा कलह कर वाले ही होते हैं । नित्यकी कलह और क्लेशोंके देखनेसे उन बच्चोंका कोमल हृदय भी सुकड़ जाता है और हृदयके सुकड़नेसे उनकी तन्दुरुस्ती भी खराब हो जाती है । वे सदा रोगी ही रहते हैं और कभी उभरने नहीं पाते । उनका हृदय भी ऐसा कमज़ोर हो जाता है कि सारी उम्र उनसे कोई हौसलेका काम भी नहीं हो सकता । बल्कि जरा-जरा-सी बातमें उनको घबराहट पैदा हो जाती है और दिल धड़कने लगता है । लेकिन जो बच्चे ऐसे घरोंमें पलते हैं जहाँ हर वक्त प्रेम और प्रीतिकी ही बातें होती रहती हैं और चारों तरफ आनन्द ही आनन्द दिखाई देता है हृष्ट-पुष्ट, ताकतवर, हौसलेवाले और हंसमुख होते हैं । उनका चेहरा अनारके दानेकी तरह सदा चमकता ही रहता है । और वे हर हालतमें खुश ही रहते हैं । इस वास्ते बच्चा पैदा होनेके बाद भी बच्चेका उठान होने और तन्दुरुस्त रहनेके वास्ते माताको आनन्दमें रहना और घरके सब ही लोगोंको प्रसन्न रखना बहुत ही जरूरी और लाज़मी है ।

मेरी बहिनो ! ऊपरकी बातोंसे तुमने अच्छी तरह जान लिया है कि दुनियाँ भरको बुरा-भला बनाना, संसार भर-

में सुख शांति या दंगा-फिसाद फैलाना, लोगोंको नेक या बद बनाना, धर्म या पाप फैलाना, यह सब स्त्रियोंके ही अख्तियारमें है। क्योंकि नौ महीने तक बच्चेको गर्भमें रहते समय और पैदा होनेपर भी चार-पाँच वर्ष तक माता का ही प्रभाव बच्चोंपर पड़ता है और उनका अच्छा या बुरा उठान माताके ही हाथमें होता है। फिर वे ही बच्चे बड़े होकर संसारको चलाते हैं। इस वास्ते स्त्रियोंकी जिम्मेदारी बड़ी भारी है और उनका कर्त्तव्य बहुत ही महान् है, जिसको पूरा करनेके लिए उनको बहुत होशियार, समझदार, सहनशील और बड़े ऊंचे भाववाली होना और सदा प्रसन्नचित्त रहना बहुत ही जरूरी है। मर्द अगर मूर्ख है, बदतमीज है, नासमझ और दंगई है तो वह अपनी इन बुराइयोंके कारण खुद ही धक्के खायगा और तकलीफ उठायेगा। वह तो दिन भर घरसे बाहर ही रहता है। इस वास्ते उसकी बुराइयोंका असर बच्चों पर नहीं पड़ सकेगा। लेकिन अगर स्त्री मूर्ख और नासमझ है तो उससे सिर्फ स्त्रीका ही नुकसान नहीं होगा, बल्कि उससे आगेकी सन्तानका सत्यानाश हो जायगा और सब ही स्त्रियोंके मूर्ख होनेसे देशका नाश हो जायगा। देखो अगर मर्द कोई कच्ची-पक्की चीज खाले तो उससे सिर्फ उसके ही शरीरमें रोग होगा, सिर्फ उसके ही बदनमें दर्द उठेगा। लेकिन अगर स्त्री कोई कच्ची-पक्की चीज खाले तो

उससे स्त्रीके रोगी होनेके सिवाय उस बच्चेको भी नुकसान पहुँचेगा जो उसके गर्भमें हो या उसका दूध पीता हो। इसी प्रकार अगर मर्द किसीसे लड़ताहै वा दिनभर कलह करता है तो वह खुद ही क्लेश उठावेगा। लेकिन अगर स्त्री क्रोध करती है या लड़ती है और क्लेश मानती है तो उससे उसके बच्चे को भी बड़ा भारी नुकसान होता है जो गर्भमें हो या दूध पीता हो। जिस रोज माताको क्रोध आया हो, किसीसे लड़ी हो, या उसने किसी प्रकारकी चिन्ता या क्लेश माना हो, उस दिन तो बच्चेको दूध पिलाना बिल्कुल ही मना लिखा है। उस दिन का उसका दूध जहर के समान हो जाता है, जो बच्चोंको अनेक प्रकारके रोग पैदा करता है। परन्तु जिस दिन माताका हृदय कमल के फूलकी तरह खिल रहा हो चित्त प्रसन्न हो, उस दिनका दूध बच्चेके वास्ते अमृतके समान है, जो पुराने रोगों को दूर करके बच्चे को हृष्ट-पुष्ट बनाने वाला है।

इन सब बातोंसे यह साफ सिद्ध होता है कि स्त्रीको सदा प्रसन्न रहना बहुत ही जरूरी है, जिसका अभ्यास उसको बचपनसे ही करना चाहिए। अर्थात् प्रसन्न मन, शांत चित्त, और प्रफुल्ल वदन रहने और उदार हृदय तथा ऊंचे विचार रखनेकी शिक्षा कन्याओंको खास तौर पर देनी चाहिए। उनको सदा मीठी बोली बोलने और ऐसी बातें करनेकी आदत डालनी चाहिए जिससे अपना मन भी प्रसन्न हो दूसरोंका भी,

जिससे अपनी भी भलाई हो, दूसरोंकी भी। जिन स्त्रियोंको पहलेसे ऐसा अभ्यास नहीं कराया गया है उनको सोचना चाहिए कि अब तक जो हुआ सो हुआ! पर अब तो अपनी आदत संभाल लेनी चाहिए। ऐसा विचार करके उनको अपने स्वभावको ठीक कर लेनेका पक्का इरादा कर लेना चाहिए और कुछ दिनों तक अपने मनको जाँचते रहना चाहिए कि कोई खोटा विचार तो उसमें नहीं आता है, चित्तकी सुख-शांतिमें कभी कोई गड़बड़ तो नहीं पड़ती है, हृदयके आनन्दमें कभी कोई फर्क तो नहीं आता है। जिस वक्त भी वह अपने दिलमें जरा सा भी कोई बिगाड़ आता देखे तब ही उसको संभल जाना चाहिए? अपने मनसे उन बुरी बातोंको हटाते रहना चाहिए, और अपने साथके स्त्री-पुरुषोंसे भी कह देना चाहिए कि जब कभी तुम मुझमें जरा भी क्रोध आता देखो, या मुझको किसी प्रकार का क्लेश करती पाओ तो उस ही दम मुझको चेता दिया करो जिससे सावधान होकर मैं अपने मनसे उन बुरे भावोंको निकाल दिया करूं और अच्छे-अच्छे भाव मनमें भर कर और खुशीकी बातें याद करके अपने चित्तको शांत प्रफुल्लित बना लिया करूं। इस प्रकार कुछ दिनोंके अभ्याससे क्रोध करने और अपने-आपको दुखी रहने की आदत छूट जावेगी और तुम हर वक्त खुश रहने लगोगी और दूसरोंको भी खुश रख सकोगी। अपने घरको स्वर्गपुरी बना दोगी, और घर की सच्ची देवी बन जाओगी।

दाम्पत्य-प्रेम और स्वास्थ्य

गृहस्थ सुख भोगने और घरका पूरा आनन्द उठाने के लिये स्त्री और पुरुषको चाहिए कि वे दोनों अपना हृदय एक बना लें और आपसमें अपने मनको ऐसा साफ रक्खें कि स्त्रीके दिलकी सब बातें पुरुषको और पुरुषकी सब स्त्रीको इस प्रकार दिखाई देती रहें जिस प्रकार शीशेमें अपना मुंह दिखाई देता है। जब हम शीशेमें अपना मुंह देखते हैं तो हमारे मुखकी सुन्दरताके साथ-साथ हमारे मुखका दाग धब्बा या टेढ़ापन, तिर्छापन दिखाई दिये बिना नहीं रह सकता। इसी प्रकार अगर स्त्री और पुरुषका हृदय आपसमें साफ होगा तो स्त्रीको पुरुषके और पुरुषको स्त्रीके सब गुण-दोष साफ-साफ मालूम होते रहेंगे। लेकिन अगर उनके मनमें फरक है और दोनोंका हृदय एक नहीं है तो वे अपने दोषोंको छिपाने और मायाचार करनेकी कोशिश करेंगे, जिससे उनमें आपसमें वह प्रसन्नता नहीं रहेगी, जो दोनोंका हृदय एक होनेकी अवस्थामें रहती। ऐसी हालतमें विवाहकी असली गरज नष्ट होकर अनेक प्रकारकी खराबियां पैदा हो जावेंगी। इस वास्ते स्त्री और पुरुषको उचित है कि वे अपनी बुरी-भली कोई भी बात आपसमें न छिपावें और दोनों अपना हृदय एक ही बनाये रखनेकी कोशिश रक्खें। मेरी बहिनो! तुमको सोचना चाहिए कि जिस प्रकार तुम्हारी बुराइयां तुमसे छिपी नहीं रहती हैं और अपनी बुराई मालूम

होजाने पर तुम अपने आपको मार नहीं डालती हो, बल्कि उन बुराइयोंको दूर करनेकी कोशिश ही करती हो। इसी प्रकार अगर तुम्हारी बुराइयां तुम्हारे पतिको मालूम हो जायेंगी तो वह भी तुमको मार नहीं डालेगा बल्कि तुममेंसे बुराइयां दूर करनेकी कोशिश ही करेगा और जिस प्रकार तुमको अपनी ही बुराई न मालूम होनेसे वह बुराई तुममें बढ़ती ही रहेगी। इस प्रकार तुम्हारी बुराई तुम्हारे पतिको न मालूम होनेसे बढ़ेगी ही। स्त्री पुरुषको एक दूसरेकी बुराई-भलाई मालूम हो जानेसे दोनोंका हृदय एक हो जाता है और इससे अनेक प्रकारकी भलाइयां पैदा होती हैं और दोनोंकी बुराइयां दूर होने लगती हैं। परन्तु आज हिन्दुस्तानमें यह एक उल्टी कहावत प्रसिद्ध हो रही है कि पुरुष अपना भेद स्त्रीको न दे। इस कहावतकी बदौलत ही हिन्दुस्तानके घर नर्क-स्थान हो रहे हैं। और गृहस्थका सुख नष्ट-भ्रष्ट होकर हमारा जीवन पशुओंके समान हो गया है। ऐसी दशा में स्त्रियोंको उचित है कि वे अपना हृदय अपने पतियोंके सामने खोलकर रख दें और उनसे कोई भी बात न छिपावें जिससे पुरुषोंमें भी सच्चा प्रेम जाग उठे, और वे भी अपनी कोई बात स्त्रियोंसे न छिपाया करें जिससे फिर हमारे घर स्वर्ग के आनन्द-धाम हो जावें और स्त्री पुरुषोंकी सब ही बुराइयां दूर हो जावें।

मेरी बहिनो! तुमको जानना चाहिए कि मनुष्यों और

पशुओंमें इतना ही फर्क है कि पशुओंमें विवाह नहीं होता। इस वास्ते उनकी विषय वासनाओंकी कोई सीमा नहीं होती और वह दुनियां भरके सब ही पशुओंके पीछे अपने मनको भटकाते फिरते हैं। लेकिन मनुष्योंमें स्त्री-पुरुषोंका आपसमें विवाह करके उनको खूंटेसे बाँध दिया जाता है, जिससे पुरुषके साथ सब प्रकारके भोग-भोगकर अपनी विषय-वासनाओंको पूरा कर लें और दुनियाँ भरके स्त्री-पुरुषोंपर अपने मनको भटकानेसे रुके रहें। मेरी बेटियो और बहिनो! यह कथन जो मैंने इस समय छेड़ा है, बेशर्मीका कथन नहीं है, बल्कि परम धर्मका कथन है, क्योंकि अगर यह कथन बेशर्मीका होता तो कन्याका पिता क्यों पंचायत इकट्ठी करके अपनी बेटीका हाथ एक परदेशी आदमीको पकड़ाकर उनको आपसमें सब प्रकारके भोग भोगनेकी परवानगी दिया करता, और ऐसा करनेमें क्यों बड़ी भारी खुशी मनाया करता है? मेरी प्यारी बेटियो, यह किसी प्रकार भी शरमकी बात नहीं, बल्कि धर्मकी बात है। विवाहके वक्त इस ही वजहसे तो श्रीभगवानका पूजन और हवन किया जाता है और दोनों तरफ की पंचायत बुलाई जाती है कि उस वक्त पुरुषको एक स्त्री और स्त्रीको एक पुरुष देकर उनको शीलव्रत धारण करा दिया जाता है और इस बातकी दृढ़ प्रतिज्ञा करा दी जाती है कि वे दोनों अपनी सब प्रकारकी विषय-वासना आपस में ही पूरी करते रहें और दुनियाँ भरके

अन्य सब ही स्त्री-पुरुषोंको बहिन-भाईके समान समझें, जिससे वे अनेक पापोंसे बचकर पुण्यके भागी बनें। लेकिन अत्यन्त शोककी बात है कि हिन्दुस्तानके पुरुष शीलका पालन करना अपने वास्ते जरूरी नहीं समझते, बल्कि सिर्फ स्त्रियोंके वास्ते ही व्रतको जरूरी समझते हैं। कोई-कोई तो स्त्रियोंमें भी सिर्फ अपने घरकी स्त्रियोंके ही वास्ते इस व्रतको जरूरी मानते हैं। यही कारण है कि बहुत से लोग निर्लज्ज होकर खुल्लम-खुल्ला रण्डियोंका नाच कराते हैं और बाप, बेटा, बाबा, पोता और बिरादरीके बड़े बड़े पंच, सरदार और बड़े-बड़े धर्मात्मा और पण्डित इकट्ठे होकर उसका नाच देखते, खोटे-खोटे गीत सुनते और बेधड़क हंसी-मजाक करते हैं और जराभी नहीं शर्माते हैं। इसके सिवाय कोई-कोई पुरुष तो ऐसे-ऐसे कुकर्म करते हैं और गिद्ध की तरह दुनियाँ भरकी स्त्रियों पर ऐसा चील-झपट्टा मारना चाहते हैं मानो वे मनुष्य ही नहीं बल्कि राक्षस या गली में फिरते हुए कुत्ते हैं, लेकिन ऐसा करनेसे उनकी जात-पांत में कोई फर्क नहीं आया और बिरादरीमें वह ऐसे ही ऊंचे बने रहते हैं जैसे कि और लोग। इससे साफ सिद्ध है कि मर्दोंके कुशील होनेसे लोगों को उतनी ग्लानि नहीं है जितनी कि होनी चाहिए थी। यही कारण है कि हिन्दुस्तानमें आज कल घोर अन्धकार फैला हुआ है और लोगोंका चाल-चलन खराब होकर सब धर्म-कर्म नष्ट-

भ्रष्ट हो गया है और बहुत नीच अवस्था हो गई है। हिन्दुस्तानकी इस नीच अवस्थाका साक्षात् सबूत यह है कि छोटे-छोटे बालक भी गलियोंमें खेलते हुए आपसमें गन्दी गालियाँ देते रहते हैं और बहुत बेशर्मीकी बातें बकते रहते हैं। इससे ज्यादा नीच अवस्था की बात यह है कि वे उन बच्चोंके मां-बाप और भाई-बहिन बराबर यह बात देखते और सुनते रहते हैं कि हमारे बच्चे आपसमें खेलते हुए दिनभर सड़ी-सड़ी गालियाँ बकते हैं। परन्तु वे लोग इस बातकी कुछ भी परवाह नहीं करते। बल्कि कोई-कोई बच्चे तो अपने घरमें भी बेहूदा गालियाँ बकते रहते हैं और उनके घरकी स्त्री-पुरुष कुछ भी ख्याल नहीं करते, यहाँ तक कि कोई-कोई लाड़ला बच्चा तो अपनी मां बहिन तकको बेशर्मी की गालियाँ दे बैठता है और वे हंसकर टाल देती हैं बल्कि अगर कोई उस बालकको झिड़के तो बुरा मानती हैं।

प्यारी बहिनो! हिन्दुस्तानके मर्दोंके दिलमें यह बात बिठा देना कि शीलवान होना उनके वास्ते भी उतना ही जरूरी और लाजमी है जितना स्त्रियोंके वास्ते। आज कल ऐसा कठिन हो रहा है कि निरे उपदेशसे वे हरगिज भी मानने वाले नहीं हैं, क्योंकि सब ही धर्म-ग्रन्थोंमें शीलका उपदेश मर्दोंके वास्ते भी उस ही प्रकार दिया गया जैसा कि स्त्रियोंके वास्ते। लेकिन मर्दोंपर शास्त्रके इस कथनका कुछ भी

असर नहीं होता । इस कारण मेरी धर्मात्मा बहिनो और प्यारी बेटियो ! अब यह सिर्फ तुम्हारे ही अख्तियारमें रह गया है कि तुम अपने पुरुषोंको परम शीलवान और सच्चा धर्मात्मा बनाकर अपने-अपने घरको पुण्यधाम बना लो, और इस तरह सब ही घर सुधरकर यह हिन्दुस्तान सचमुच ही पवित्र भूमि और धर्म-स्थान बन जावे । तुम घरकी देवी हो और शीलवती हो इस वास्ते अगर तुम कोशिश करो तो कुछ मुश्किल नहीं है कि तुम्हारे पुण्य-प्रतापसे तुम्हारे पति भी शीलवान हो जावें, और यदि पहलेसे शीलवान हों तो आगामीको बिगड़ने से बचे रहें और इस भारतकी पवित्र भूमिके पुरुषोंके माथेसे कुशीलका कलंक दूर हो जावे । इसके सिवाय तुम्हारे वास्ते भी तो बहुत ही लज्जा और बेइज्जतीकी बात है कि तुम्हारी जैसी शीलवती स्त्रीका पति शीलसे ऐसा गिरा हो कि जिन बेशरम, बदमाश और हरामजादी स्त्रियोंकी शकल भी नहीं देखनी चाहिए उन ही स्त्रियोंका नाच देखने, गाना सुनने और रुपये देनेमें उसको घृणा न आती हो और पराई स्त्रियोंका ख्याल मनमें लाने और चार दोस्तोंमें बैठकर बेहूदा बातें करनेको बुरा न समझता हो । इस वास्ते मेरी बेटियो ! मैं धर्मकी दुहाई देकर तुमसे पुकार-पुकारकर कहता हूँ कि तुम अपने अपने पतिको परम शीलवान और पाक-साफ बनानेको अपना सबसे बड़ा जरूरी और सबसे बड़ा काम समझो । अपनी

चतुराईसे अपने पतिको अपने ऊपर ऐसा रिझाओ और अपने प्रेमसे उसका हृदय ऐसा भरपूर करदो कि फिर उसके मनमें किसी दूसरेके प्रेमका ख्याल आनेकी जगह ही न रहे। अगर तुमको देखकर उसका चित्त ऐसा प्रसन्न हो जाया करे कि उसको किसी प्रकार की अभिलाषा ही न रहे और तुमसे हंस बोलकर उसका मन ऐसा भर जाया करे कि फिर दुनियांकी सब ही शोभा उसको फीकी लगने लगे, तो उसके परम शील-वान होने और उसका शुद्ध रहनेमें कोई भी सन्देह नहीं हो सकता है। यही निवाहकी असली गरज है। इस ही एक गरजके वास्ते तुम अपने मां बाप और भाई बहिनोंको छोड़ कर पराये लोगोंमें लाकर रक्खी गई हो। यही तुम्हारा धर्म और वही तुम्हारा परम कर्तव्य है। अगर तुम अपने पतिको पूरी तरह नहीं रिझा सकी हो उसके मनको अच्छी तरह नहीं बहला सकी हो, तो निश्चय मानो कि तुम्हारा विवाह होना, अपने बापका घर छोड़ना और माँ बहिनोंसे जुदा होना बिल-कुल ही फिजूल हुआ।

मेरी बहिनो! सबसे खराबीकी बात इस मामलेमें यह हो रही है कि तुम्हारी मां तुम्हारे विवाहसे पहिले तुमको रोटी बनाना और घरके कामकाज करना तो जरूर सिखा देती है। यह सब काम सिखाना वह अपना परम कर्तव्य समझती है लेकिन अपने पतिका दिल बहलाना जो तुम्हारा खास जरूरी

काम है वह तुमको कोई नहीं सिखाता। माताएं अपनी बेटियों को ऐसी बात सिखाना शर्मकी बात समझती हैं। लेकिन यह बड़ी भारी भूल है, क्योंकि अगर यह शरम होती तो माताएं अपनी बेटियोंको शरमका कोथला बनाकर अपने घर ही रक्खा करतीं।

मेरी बहिनो! पतिके दिल बहलानेकी सारी तरकीबें तो इस छोटीसी पुस्तक में नहीं लिखी जा सकतीं इस कारण कुछ मोटी-मोटी बातें यहां लिखे देते हैं जिनको पढ़कर तुम अपनी बुद्धिसे और भी सैकड़ों तरकीबें निकाल सकोगी।

सबसे पहिले तो तुमको यह चाहिये कि तुम अपने घर को सदा साफ-सुथरा और लिपा-पुता रक्खो जिसमें घुसते ही आदमी का चित्त प्रसन्न हो जावे और वहांसे जानेको जी न चाहे। इससे मेरा यह मतलब नहीं है कि तुम शीशमहल बनवाओ वा कली चूनेके मकान चिनवाकर उसमें बेलबूटे खिंचवाओ। नहीं, बल्कि मेरा मतलब यह है कि मिट्टीके कच्चे मकानों और फूंसकी झोंपड़ियोंको ही ऐसी सुथरी बनाकर दिखाओ कि जिसमें बैठनेको सबका जी चाहे और किसी तरह भी जी न उकतावे। इसके लिये बड़ी-बड़ी तस्वीरें टांगने और जरीके परदे लटकाने या कीमती असबाब मंगानेकी जरूरत नहीं है। बल्कि जरूरत है घरकी पूरी-पूरी सफाईकी और घर के सारे असबाबको तरतीबके साथ लगानेकी। अगर किसी

फूहड़ स्त्रीको किसी शीशमहलमें भी रख दिया जावे तो वहाँ भी वह अपने तमाम असबाबको इधर-उधर बखेर कर उस शीशमहलकी सारी शोभा को बिगाड़ देगी। परन्तु सुघड़ स्त्री अपने असबाबको तरतीबके साथ रखकर फूंसकी झोंपड़ीको भी शोभायमान बना देगी। स्त्रीको चाहिए कि वह हरएक चीजके रखनेके वास्ते अलग-अलग स्थान कायम करले और हमेशा उस चीजको वहीं रख दिया करे, मैले-कुचैले कपड़ोंको कभी इधर-उधर न पड़ा रहने दे बल्कि उनको लपेट और बांध कर अलग रख दिया करे, मैले या झूठे बर्तन हर्गिज बिखरे न पड़े रहने दे, बल्कि तुरन्त ही उनको उठा-उठाकर उनके अलग-अलग स्थानपर रख दिया करे, साग-सब्जी या मेवाके छिलके या इस ही किस्मका कोई और कूड़ा जमीनपर न पड़ने दे बल्कि एक टोकरीमें डालती रहे और अगर कुछ जमीनपर पड़ भी जावे तो उसी वक्त कूंचीसे साफ करदे, इसमें कभी जरा-सा भी विलम्ब न करे। घरकी सब चारपाइयां बहुत हल्की और बहुत थोड़ी कीमतकी, लेकिन हमेशा खूब कसी हुई रहनी चाहिए। कोई भी चारपाई कभी ढीली न पड़ी रहनी चाहिये। न उनमें कभी कोई खटमल होने देना चाहिये। जब कभी खटमलका जरा भी सन्देह हो तब ही उनको झाड़ देना चाहिये। वैसे भी कभी-कभी उनको झाड़ते रहना चाहिये। सुबह ही सब चारपाइयां अलहदा

खड़ी कर देनी चाहिये और जो बिछी रहें वह बैठनेके लिये खाली रहनी चाहिये। उनपर अटकलपच्चे कपड़े नहीं लादते रहना चाहिये। कपड़ोंके वास्ते खूंटियां, अलगनियां और बिलंग होनी चाहिये जिनपर सबके कपड़े अलग-अलग टंगे हुए खूबसूरत मालूम हों। कपड़े कभी मैले-कुचैले नहीं पहिनने चाहिये और न बच्चोंको पहिनाने चाहिये। और कभी भी बारीक, कीमती एवं ऐसे कपड़े नहीं बनाने चाहिये जिनके धुलवानेमें दिक्कत हो। कपड़े हमेशा मोटे, मजबूत और बहुत सस्ते होने चाहिए और जल्दी-जल्दी धुलवाते रहना चाहिये।

दूध पीते बच्चे माताके बिछौनेपर मलमूत्र कर देते हैं इस वास्ते माताके बिछौने में हमेशा बदबू हो जाया करती है ऐसी स्त्रीको चाहिये कि वह अपने बिछौने—बेनागा—रोज़-मर्रा—साबुनसे धोती रहे और सस्ते-सस्ते कपड़ोंके कई बिछौने बनाले, उनको रोजमर्रा बदलती और जल्दी-जल्दी धोबीसे धुलवाती रहे। बच्चेवाली स्त्रीको चाहिए कि वह और सौ चीजोंमें कमी करदे, लेकिन अपने बिछौनोंके ज्यादा बनवाने और जल्दी-जल्दी धुलवानेमें हर्गिज कमी न करे। वह चाहे सौ कामोंमें गफलत करदे, लेकिन अपना बिछौना और बच्चोंके कपड़ोंको धोने-सुखाने, बदलने और उन्हें पूरा-पूरा साफ रखनेमें कभी गफलत न करे—गरज चाहे जो इन्त-

जाम करना पड़े पर बच्चेवाली स्त्रीके बिछौने और बच्चेके पोतड़े और अन्य कपड़ोंमें कभी एक रत्तीभर भी बु नहीं आनी चाहिये। आजकलकी वहुतसी स्त्रियां रेशमके चमकदार कपड़े बनानेमें और उनपर जरी गोटा लगानेमें वहुत कुछ रुपया खर्च कर देती हैं लेकिन सफाई रखने और बदबूके दूर करनेका ख्याल नहीं करतीं। जितना रुपया वे आजकल कपड़ोंमें लगाती हैं उनको चाहिए कि उससे आधा रुपया लगाया करें, लेकिन रेशम जरीकी जगह मोटे और सस्ते कई-कई कपड़े बनाया करें, जिससे वे जल्दी-जल्दी धुलकर साफ़-सुथरे रहें और वदबू भी दूर होती रहे। ऐसा करनेसे सिर्फ घरकी शोभा ही नहीं बढ़ेगी वल्कि घरके सब ही छोटे-बड़े तन्दुरुत रहेंगे और कोई किसी भी किस्मकी बीमारी घरमें न फटकने पावेगी।

प्यारी बहिनो! तुम समझ सकती हो कि घरकी इस तरह सफाई रखनेसे घर कैसा सुहावना और मनभावना हो जावेगा और उसमें बैठकर तुम्हारे पतिको कैसा आनन्द आवेगा और अगर उसको आध घण्टा बैठना हो तो घण्टा भर बैठकर जावेगा, वल्कि वहाँसे उठनेको भी जी न चाहेगा। परन्तु यदि घर मैला-कुचैला होगा, उसमें सब असबाब बेतरतीब पड़ा होगा तो एक पल भी वहां बैठनेको जी न चाहेगा और आते ही चटपट रोटी खाकर बाहर भागना ही सूझेगा। इस वास्ते घरकी सफाई, खूबसूरती और असबाबकी तरतीबपर तुमको

बहुत ध्यान देना चाहिए। मकानकी सब ही नालियां, खस्सी और बदरौ हररोज पानी डालकर खूब साफ होनी चाहिए जिससे उनमें जरा भी मैला या बदबू न रहे। टट्टीको भी हर रोज धुलवाना चाहिए और टट्टीका फर्श और पानी निकलनेका रास्ता सब कली चूनेसे बहुत पक्का बनवाये रखना चाहिए और किसी कारण फर्शके जरा भी उखड़ जाने पर तुरन्त ही उसकी मरम्मत हो जानी चाहिए। टट्टीकी सफाईकी तरफ हिन्दुस्तानियोंका बहुत ही कम ध्यान है इस वास्ते उनके मकानमें सदा बदबू रहती है जो बीमारी पैदा करनेका कारण होती है। बच्चोंके टट्टी जानेके वास्ते भी अलग कोई जगह कायम कर देनी चाहिए। दलहीज (दोबासीमें),आगनमें, या छज्जेपर बच्चोंको टट्टी करनेके लिए नहीं बिठाना चाहिए। परन्तु यदि किसी लाचारीसे ऐसी ही जगह बिठाना पड़े तो तुरन्त उनकी टट्टी उठाकर पाखानेमें फेंक आनी चाहिए अगर किसी दिन यह न हो सके तो तुरन्त उसपर इतनी राख मिट्टी डाल देनी चाहिये जिससे यह न मालूम हो कि यहां टट्टी पड़ी हुई है। गरज दहलीज, आंगन और छज्जा भी ऐसा ही साफ रहना चाहिये, जिससे किसीको भी घृणा न आवे और सारा ही मकान सुन्दर और सुहावना मालूम हो।

रसोई के मकानको भी बहुत साफ रखनेकी ज्यादा जरूरत है। रसोईकी दीवारें धुएंके कारण बहुत जल्द काली हो-

जाती हैं, इस वास्ते उनको दूसरे-तीसरे दिन लीपते रहना चाहिये और रसोईका फर्श पक्का चूनेका होना चाहिये। खाना जहांतक हो सके रसोईसे अलग किसी दूसरे ही मकानमें खाना चाहिये, क्योंकि कितनी भी सफाई रक्खी जाय, तो भी धुएंके भरे रहने और पानीकी किचपिच होनेसे रसोईमें बैठकर इत्मीनानसे नहीं खाया जाता है, बल्कि जल्दी मुंहमें टुकड़े ठूंस-ठूंस कर ही पेट भरना होता है। विचारनेकी बात है कि जब आदमीको इत्मीनानके साथ खानाभी नसीब न हुआ, तो घरमें और क्या ही सुख मिलेगा। इस वास्ते मुनासिब यही है कि रसोईसे अलग किसी साफ-सुथरे मकानमें ही खाना खाया जावे और सब बाल-बच्चोंके साथ मिलकर खूब हंसी-खुशीके साथ बड़े इत्मीनानसे खाया जावे। स्त्री भी अपने पुरुषके साथ खाने में जरूर शरीकहो और दोनों मिल-जुलकर बहुत प्यार मुहब्बत के साथ बहुत धीरे-धीरे खाना खावें, जिससे अच्छी तरह हजम होकर वह भी अंगको लगे और स्त्री-पुरुषोंको गृहस्थका परमानन्द प्राप्त होकर दिनभर उनका मन भी प्रसन्न रहे। यद्यपि आजकलकी स्त्रियोंको हमारी यह बात अनोखी मालूम होगी लेकिन हम यह निश्चय रूपसे कहते हैं कि बिना ऐसा किये पुरुषको परम शीलवान बनाना और उनका मन इधर-उधर भटकनेसे बचाना बहुत मुश्किल है, क्योंकि रातको आकर सो रहनेके सिवाय दिनमें तो पुरुषका घरपर आना बहुत

करके खाना खानेके वास्ते ही होता है। इस कारण उस समय ही अगर उसको घरमें पूरा आनन्द न मिले, तो फिर यही मानना पड़ेगा कि घर आनन्दका स्थान ही नहीं है। घरमें खाने का पूरा आनन्द न मिलनेके कारण ही अक्सर लोग शामका पक्का खाना खाने घर नहीं आते हैं, बल्कि बाहर अपनी दुकान या बैठक पर ही मंगा लेते हैं और दोपहरको रोटी खानेके वास्ते भी बहुत लाचारीसे आते हैं और वे खाकर तुरन्त ही बाहर भाग जाते हैं, एक पलभर भी घर ठहरना नहीं चाहते। अगर घर खाना खानेमें पुरुषोंको भी पूरा आनन्द मिलने लगे तो फिर वह हर्गिज भी अपना खाना बाहर न मंगाया करें और खाना खानेके बहानेसे आकर घर पर बहुत देर तक ठहरा करें और घरको पवित्र बनाया करें।

स्त्रीको उचित है कि जब तक पुरुष घरमें रहे, तब तक वह घर का कोई भी कामधन्धा न करे, बल्कि हर तरहसे अपने पुरुषके चित्तको प्रसन्न करनेमें ही लगी रहे। पुरुषके घरपर आनेके कुछ समय पहलेसे घरका सब कामधन्धा छोड़कर और घरको बिल्कुल साफ-सुथरा बनाकर खुद भी साफ-सुथरे कपड़े पहिनकर बैठ जावे और बच्चोंका भी हाथ-मुंह धोकर उनको साफ-सुथरे कपड़े पहिनादे, जिससे पुरुषको सारे घरमें बागबाड़ी ही खिली हुई दिखाई दे और वह अपने घरमें आना ऐसा समझे, मानो किसी सुगन्धित फूलोंके हरे-भरे बगीचेमें ही

पहुँच गया हो। स्त्रीको यह भी उचित है जितनी देर तक पुरुष घरमें रहे उतनी देरतक जहांतक उससे होसके किसी प्रकार के रञ्ज, क्लेश, या सोच फिक्रकी बात न करे और न किसी दूसरेको करने दे, बल्कि वह सारा समय खूब हंसी-खुशी में ही बितावे। लेकिन अगर कोई बहुत चिन्ताकी बात हो जिसको पुरुषसे कहे बिना या पुरुषसे उसमें सलाह लिए बिना किसी तरह भी न सरता हो तो उसको किसी बहुत ही फुर्सत और इत्मीनानके समयमें कहे, और इस तरह थामकर कहे, जिससे पुरुषपर उस चिन्ताका बोझ न पड़ने पावे और वह उसको बहुत ही मामूली बात समझे।

स्त्रियोंको उचित है कि पराया पुरुष चाहे अपना नजदीकी रिश्तेदार ही क्यों न हो तो भी उसके सामने आने और उससे बातचीत करनेसे जहाँतक हो सके बचती ही रहे और कभी भी कोई अश्लील बात मुंहसे न निकले। लेकिन आजकल कुछ ऐसा उल्टा मामला हो रहा है कि स्त्रियां अपनी सास ननद या अन्य स्त्री-पुरुषोंके सामनें अपने पतिके सामने तो नहीं आती हैं और अगर सामने आती भी हैं तो घूंघट निकालकर ऐसी सकुचीं सकुचाई सी आता हैं मानो उसको किसी बिल-कुल अनजान पुरुषके सामने आना पड़ गया है। लेकिन वे ही स्त्रियाँ बेधड़क अपने बराबरके देवर-ननदोई और बहनोईके सामने आकर उनसे बेधड़क-बिल्कुल खुल्लमखुल्ला-हंसी ठट्ठा

करती हैं और जरा भी नहीं लजातीं। विवाह शादियोंमें तो बहू बेटियाँ सब इकट्ठी होकर बाजारोंमें गन्दे-गन्दे सीठने देती फिरती हैं और जरा भी नहीं शरमातीं, जिससे साफ सिद्ध होता है कि स्त्रियाँ भी शीलके असली स्वरूपको नहीं जानतीं और कुशीलसे इतनी घृणा नहीं करतीं जितनी कि होनी चाहिए। स्त्रियोंका यह व्यवहार बहुत ही धिक्कार देनेके लायक है और ऐसी हालतमें यह किसी तरह भी अपने पुरुषोंको शीलवान बनानेके योग्य नहीं हो सकती हैं। अपने पतिसे पर्दा करने और पराये पुरुषोंसे पर्दा न करनेका स्त्रियोंका यह अनोखा स्वाँग बहुत ही आश्चर्यजनक और हंसीके योग्य हो रहा है। मर्दों में इस बातकी चर्चा उठाकर स्त्रियोंकी खूब हंसी उड़ाई जाती है। तमाशा यह है कि बड़े घरकी स्त्रियाँ अपना यह स्वांग और भी अच्छी तरह बनाती हैं, क्योंकि वह अपने पति के सामने आती हुई तो बहुत ही शरमाती है और उसके लिये बहुत बड़ा घूंघट निकालती हैं, लेकिन नौकर-चाकर, ब्राह्मण, धीवर, रसोइया और कहार हर वक्त उनके घरोंमें घुसे रहते हैं जिनसे न उनको किसी प्रकारका पर्दा होता है और न लज्जा। बड़े घरोंकी स्त्रियाँ अपने अनोखे तरीकेको ही अपने घरकी बड़ाई और हया शरमका पूरा-पूरा पालन समझती हैं, और इसके खिलाफ चलाव को वह अपने बड़प्पनको बट्टा लग जाना मानती हैं। लेकिन मेरी शीलवती बहिनो! किसी नौकर

या रसोइया और ब्राह्मणको अपने घरके अन्दर न घुसने दो, जनानेमें पराये मर्दका आना बड़े शर्म और लज्जाकी बात है। इसके सिवाय घरके सब काम स्त्रयोंको अपने हाथसे करना जरूरी भी तो है। सारे काम अपने हाथसे न करें तो कमजोर और बीमार हो जावें और उनकी सन्तान भी कमजोर ही पैदा होगी। मर्द तो दिन भर घरसे बाहर रहते हैं, इस वास्ते इधर-उधर चलने-फिरने ही से उनका खाना हज़म हो जाता है और शरीर बलवान रहता है। लेकिन स्त्रियाँ घरके ही अन्दर रहती हैं, इस वास्ते अगर वह घरका कामकाज नहीं करेंगी तो अपना खाना किसी तरह भी हजम न कर सकेंगी। आजकल अमीर घरकी स्त्रियोंको चक्कर आना, शरीरमें वायु आजाना, बदन गिरा रहना और अनेक तरहके रोग लगे रहना इस कारणसे होता है कि वह अपने शरीरसे मेहनत नहीं करती हैं। हमारी समझसे तो जब तक हिन्दुस्तानकी स्त्रियाँ चक्की पीसना, धान कूटना और गाय-भैंस आदिकी टहल करना, रोटी बनाना, बर्तन साफ करना, लीपना-पोतना और घरके छोटे बड़े सब ही काम-काज अपने हाथसे न करने लगेंगी, तबतक हिन्दुस्तानके लोग रोज-रोज ज्यादा कमजोर, सुस्त और कम हिम्मतवाले ही होते रहेंगे और नई-नई किस्मके रोगोंमें ही फँसे रहेंगे।

खैर—अगर किसी अमीर घरकी स्त्रियां बिना नौकरके

रहना बिल्कुल ही अपनी शानके खिलाफ समझती हों तो उनको चाहिए कि वह जितनी चाहें स्त्रियां-नौकर रखलें, लेकिन गैर मर्दोंको किसी भी तरह घरके अन्दर न फटकने दें। वे अपने देवर, ननदोई और बहनोईके सामने इस प्रकार ही घूंघट निकालकर आवें जिस प्रकार कि वह आजकल अपने पतिके सामने घूंघट निकालकर आती हैं और उनसे इस ही प्रकार बहुत सकुचाकर बातें करें जिस प्रकार वे आजकल अपने पति से करती हैं। लेकिन सब ही स्त्रियोंको चाहिए कि वह अपने माँ-बाप और सास-ससुरके सामने भी अपने पतिसे घूंघट न निकालें और उसी प्रकार खुले मुंह उसके सामने आवें जिस प्रकार पतिकी माँ-बहिन आती हैं। बेशक सबके सामने स्त्रीको अपने पतिके साथ बहुत शोखी व हँसी मज़ाककी बात नहीं करनी चाहिए। लेकिन जिस प्रकार पतिकी माँ-बहिन खुले मुँह उसके सामने आकर उससे हँसी-खुशीकी बातें करती हैं, उस स्त्रीका भी अपने पतिके सामने न आना और हँसी-खुशी की बात न करना बेहूदा स्वाँग और बहुत खराबी पैदा करनेवाला है।

जरा विचार करो कि मर्दोंको दिन भर बाहर ही रहना पड़ता है और खाना खाने या और किसी जरूरी कामके लिये घड़ी दो घड़ीको जब वह घरमें आते हैं उसमें उनको यह आशा रहती है कि कमलकी तरह खिले हुए अपनी स्त्रीके

मुखको देखकर और उसकी प्रेम-भरी निगाहको परखकर अपने मनको ठण्डा करेंगे और उसकी चाव भरी बातोंको सुनकर चित्तको शान्त करेंगे । लेकिन घर आनेपर मामला बिल्कुल ही उल्टा नज़र आता है । यहां तो बहूजी अपने पतिसे पर्दा करती हैं और अगर सामने भी आती हैं तो बहुत लम्बा घूंघट निकालकर ऐसी दबी-मिची और डरी-सहमी हुई आती हैं कि मानो उनको किसी ऐसे बिल्कुल गैर और अनजान पुरुषके सामने आना पड़ गया है जिसके सामने आना वे किसी तरह भी पसन्द नहीं करती हैं । फल इस बेहूदा स्वाँगका यह हो रहा है कि मर्द बहुत कम घर आते हैं और आते भी हैं तो बहुत कम ठहरते हैं । मर्दोंमें ही बेहूदा गपशप उड़ाकर और अपने मनको इधर-उधर भटकाकर एवं बहुत कुछ अनहोन काम करके ही अपनी दिल्लगी पूरी कर लेते हैं । वे घरकी फ़िक्र भूल जाते हैं जिससे बड़े नुकसान पैदा हो जाते हैं और घरका ठीक रीतिपर चलना मुश्किल हो जाता है । अगर स्त्रियाँ पतिके घर आनेपर यह स्वाँग न किया करें और पतिके दिलको बहलानेकी पूरी पूरी कोशिश किया करें, तो जरूर उनके पति अपने घरपर ज्यादा देर तक ठहरा करें, घरकी खबर लिया करें, सब प्रकारसे घरका इन्तजाम किया करें और खोटे आदमियोंमें बैठना छोड़कर बुरी-बुरी विषय-वासनाओं से बचे रहा करें, और सच्चे गृहस्थी बनकर अपनी गृहस्थी

को चलाया करें ।

प्यारी बहिनो ! तुमने बच्चोंको देखा होगा कि वे खेलते समय आपसमें तरह-तरहकी छेड़-छाड़ करते हैं, एक दूसरेको चिढ़ाते हैं झपट्टा मारकर हाथसे चीज छीन लेते हैं, अनेक झूठी-सच्ची बातें बनाकर मजाक उड़ाते हैं, एक दूसरेको धक्का देकर गिराते हैं और खूब हँसते और प्रसन्न होते रहते हैं उनके इस खेलके कारण ही उनका वदन प्रफुल्लित रहता है, ताकत आती है और मन बढ़ता है। तुम यह भी अच्छी तरह जानती हो कि जिस प्रकार बच्चे आपसमें छेड़-छाड़, हँसी-दिल्लगी और दंगा-मुश्ती करके अपना चित्त प्रसन्न करते हैं, उस ही प्रकार बड़े भी अपना चित्त प्रसन्न करना चाहते हैं। इसही कारण जब बराबर की चार स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं तो वह भी आपसमें खूब हँसी-मजाक करती हैं, फबतियां सुनाती हैं, तरह-तरहकी बातें बनाती हैं, हँस-हँसकर झूठे इलज़ाम लगाती हैं और झूठमूठ चिढ़ाने की कोशिश करती हैं। यही नहीं, बल्कि चुटकियां लेकर, सुई चुभोकर, एक-दूसरेका पल्ला सींकर, गांठ बाँधकर, एकको एकपर धक्का देकर, छीना-झपटी और दंगा-मुश्ती करके आपसमें बहुत खुश होती हैं और बहुत खिलखिलाकर हँसती हैं। स्त्रियोंको अपनी इन तमाम शोखियों और दंगोंका यहां तक चाव होता है कि वह अपने ननदोई या बहनोईको भी यह सब दंगे दिखाती हैं और उन

को भी इन दंगोंमें शामिल करना चाहती हैं। लेकिन वह बेचारा शरमाकर चुपचाप ही अपनी ससुरालकी स्त्रियोंकी यह सब शोखियां देखता रहता है और सिवाय हँस देनेके और कुछ जवाब नहीं देता, जिससे उन निर्लज्ज स्त्रियोंको फ़ीका मन करके जल्दी ही वहाँसे हट जाना होता है। हां, अगर कोई उनका ननदोई या नहनोई बेहया होता है और उनके मज़ाक का पूरा जवाब देता है तो फिर वह स्त्रियां टाले नहीं टलतीं और जबतक उनकी कोई बड़ी-बूढ़ी आकर उनको न हटावे तब तक वह वहां से नहीं हटतीं।

मर्द भी जब दो चार बराबरके इकट्ठे होते हैं तो वह भी आपसमें इसी तरहकी छेड़-छाड़ और दंगा-मुश्ती करके अपना दिल बहलाते हैं लेकिन असलमें पुरुष इस तरह की छेड़-छाड़ अपनी स्त्री ही से करना चाहता है और उस ही से छेड़-छाड़ करके उसका मन भर सकता है और उसही से दिल्लगी करने का उसका हक है। लेकिन हिन्दुस्तानकी स्त्रियां बिल्कुल एकान्तमें जब अपने पतिके सामने आती हैं तो वह बिल्कुल ही भोली सूरत बनाकर इस तरह उनके सामने आकर खड़ी हो जाती हैं मानो नौकरानी या बाँदी हों। इस ही कारण वह अपने पतिकी छेड़-छाड़ और हँसीका कुछ भी जवाब नहीं देतीं और चुप-चाप ही सुनती रहती हैं, बहुत किया तो मुस्करा देती हैं या चिढ़कर रूठ जाती हैं और कहने लगती हैं कि

हमें यह मजाक अच्छा नहीं लगता। इसका फल यह होता है कि मर्दकी दिल्लगी कुछ भी नहीं होती और उसको अपनी दिल्लगी पूरी करनेके लिये चार दोस्तोंमें बैठना पड़ता है और उन्हींमें अट्ट-सट्ट बककर या इधर-उधर घूम फिरकर ही वह अपनी दिल्लगी पूरी करता है। इस दिल्लगीकी भटकमें मर्द बिगड़ते हैं और तरह-तरहके ऐबों में फँस जाते हैं।

मेरी बहिनो! यह बात तुम अच्छी तरह जानती हो कि घरमें किसी ऐसी स्त्रीके आनेपर जिससे बच्चे अनजान हों कोई बच्चा तो उस स्त्रीके सामने शरमा जाता है और गोदमें उठा लेनेपर ऐसा चुप-चाप और सोढला-सा बन जाता है मानो बोलना भी नहीं जानता और उस स्त्रीके बराबर पूछने टोकनेपर भी कुछ जबाव नहीं देता, बल्कि ज्यादा छेड़नेपर रोनी सूरत बना लेता है। फल इसका यह होता है कि उस स्त्रीका मन उस बालकसे खुश नहीं होता और वह उसको गोदसे उतारकर छोड़ देती है। परन्तु कोई बच्चा ऐसा होता है जो बिल्कुल नहीं शरमाता और बात करनेपर पटा-पट जबाव देता है और जो कोई उसके साथ दंगा करता है वह भी उसके साथ बेधड़क दंगा करता है जब वह औरोंके साथ बेधड़क दंगा-मुश्ती करने लगता है तो ऐसेबालकसे सबहीका मन प्रसन्न होता है, सबही उसको प्यार करते हैं और बहुत देर तक उससे खेलते और दंगा करते हैं। इसही प्रकार तुमने यह

देखा होगा कि जब बच्चे खेलनेके वास्ते इकट्ठे होते हैं तो वह ऐसे बालकको अपने खेलमें शामिल करना नहीं चाहते जो उसके साथ वैसा ही दंगा न करना चाहता हो जैसा वे उसके साथ करते हैं। क्योंकि एक-तर्फा दंगेसे कभी मन बहलाव नहीं हुआ करता है। इस प्रकार तुम इस बातको भी निश्चय जानो कि उस स्त्रीका पति भी अपनी स्त्रीसे हँसी-मजाक करके कभी खुश नहीं हो सकता है जो बदलेमें बराबरका हँसी-मजाक नहीं करती।

मेरी प्यारी बहिनो और बेटियो! मैं ये बातें बहुत ही ज्यादा जरूरी समझकर इस पुस्तकमें लिख रहा हूँ और बुड्ढा होकर वह काम कर रहा हूँ जो तुम्हारी माँको करना चाहिये था। घरकी स्त्रियोंका अपने पतिके साथ यह अनोखा व्यवहार होने और बिल्लीकी तरह भोली नादान बन जानेके कारण ही हिन्दुस्तानके पुरुषोंमें अनेक ऐब आ गये हैं और घरके घर बर्बाद हो गए हैं। इस वास्ते अगर तुम यह चाहती हो कि तुम्हारा घर चले, तुम्हारे पति में कोई ऐब न लगे और वह परम शीलवान बना रहे, तो तुम ध्य न देकर मेरी बात सुनो और अपने पतिके मनको हर तरहसे खुश करने और उसके दिलको बहलानेकी तरकीब सीखो और वह एक यही तरकीब है कि अपने बहनोई या ननदोई या किसी गैर मर्दसे किसी तरहका हँसी-मजाक मत करो, न उनको किसी

तरहकी शोखी दिखाओ, न उनके सामने किसी तरहका दंगा, करो, बल्कि उसको बड़ा भारी पाप और बड़ी बेशर्मीकी बात समझो और अपने पतिके सामने खूब दिल खोलकर दंगा-मुश्ती करो और उसकी हँसी-मजाक छेड़ा-छेड़ीका पूरा-पूरा जवाब दो और जरा भी मत दबो। तुम अपने पतिकी दासी या मोल ली हुई बाँदी नहीं हो, जो उससे भिंचो, बल्कि उसकी अर्धांगिनी अर्थात् उसका आधा अंग और बराबरकी दावेदार हो इस वास्ते उसके सामने शरमाने या झेंपनेकी तुमको जरूरत नहीं है, बल्कि जरूरत इस बातकी है कि जिस तरह दिल खोलकर तुम अपनी सहेलियोंसे छेड़-छाड़ हँसी-मजाक और दंगा-मुश्ती करती हो या करना चाहती हो, उस ही तरह बल्कि उससे भी ज्यादा दिल खोलकर तुम ये सब बातें अपने पतिके साथ करके उसके मनको ऐसा करो कि फिर उसके मनमें किसीके साथ हँसी-मजाक करनेकी जगह ही बाकी न रहे। ऐसा करनेसे तुम बहुत ही धर्म कमाओगी और अपनी गृहस्थीको भी अच्छी तरह चलाओगी।

मेरी बहिनो! इस विषयमें अब मैं सिर्फ एक और बात कहकर इस अध्यायको समाप्त करता हूँ। वह यह कि विवाह शादी और तीज-त्यौहारमें तुम खूब शृंगार करती हो और स्त्रियोंको इकट्ठा करके दिल खोलकर ऐसी गाती-बजाती हो कि दूर-दूर तक मुहल्लेवाले भी तुम्हारा गाना सुनते हैं।

लेकिन अपने पतिके सामने गाने और बजानेमें सिर्फ शरमाती ही नहीं हो बल्कि बुरा भी मानती हो। इस बातकी ज्यादा बहस न उठाकर मैं केवल इतना ही कहना ठीक समझता हूँ कि पतिके सामने जो बात शर्म और लज्जाकी है वह दुनिया-भरके सामने जरूर शर्म और लज्जाकी बात है। पतिका और स्त्री का ऐसा खुला हुआ नाता है कि न तो स्त्रीकी कोई बात उसके पतिसे छिपी हुई है और न पतिकी कोई बात अपनी स्त्रीसे छिपी हुई है। इस वास्ते कोई बात हो ही नहीं सकती है जो पतिके सामने तो लज्जा और शर्मकी हो और दूसरोंके सामने न हो। इस वास्ते अगर भले घरोंकी गृहस्थिन स्त्रियोंके वास्ते गाना-बजाना और नाचना ऐबकी बात है तो उनको यह काम छोड़ देना चाहिए और अगर यह ऐबकी बात नहीं है तो पतिके सामने भी गाने और बजानेमें नहीं शरमाना चाहिए। अगर पति चाहे और ऐसी जरूरत पड़े तो उसको इन बातोंसे प्रसन्न करनेकी कोशिश करनी चाहिए। गरज स्त्रियोंको यह बात निश्चय रखनी चाहिए कि उनका सारा शृङ्गार, सारी दिल्लगी और सब तरहका हाव-भाव सिर्फ अपने-अपने पतिको खुश करनेके वास्ते है, न कि अकेली आपही खुश होने या दूसरी स्त्रियोंको खुश करनेके वास्ते। अपने पति को प्रसन्न करनेके वास्ते ही स्त्रियोंके माता-पिता ब्याह करके उनको पराये घर सौंपते हैं, और यह ही स्त्रियोंका धर्म और

असली कर्त्तव्य है। इस ही बातसे वे सच्ची घर-गृहस्थिन हैं, और-अगर यह बात नहीं है तो स्त्रीके सबही गुण निरर्थक हैं और वह निन्दाके योग्य हैं।

सास-बहू का नैतिक-कर्तव्य

मेरी बहिनो! जिस घरमें तुम पैदा हुई, जिस माँ की गोदमें तुम पाली पोसी गईं, जिन बाप-दादा और चाचा-ताऊ ने तुमको लाड़ लड़ाया, जिन भाई-बहिनोंके साथ तुम खेली खालीं, उन सबको छोड़कर और सारी उमरके लिये उनसे नाता तोड़कर अब तुमने पतिके साथ गाढ़े प्रेमका एक बहुत अनोखा नाता जोड़ा है जिससे तुम्हारा और तुम्हारे पतिका हृदय दूध-मलाईकी तरह आपसमें घुल-मिलकर एक होगया है। अब यद्यपि देखनेमें तुम और तुम्हारे पति दो अलग-अलग नजर आते हैं, लेकिन असलमें तुम दोनों एक हो। अब तुम्हारे पतिका घर ही तुम्हारा घर, पतिका धन तुम्हारा धन, पतिकी कमाई तुम्हारी कमाई, पतिका हानि-लाभ तुम्हारा हानि-लाभ, पतिकी इज्जत आबरू तुम्हारी इज्जत आबरू और पतिकी बदनामी ही तुम्हारी बदनामी है। इस ही कारण पतिके माँ-बाप और भाई-बहिन अब तुम्हारे मां-बाप और भाई-बहिन हैं। इन्हींमें अब सारी उम्र तुमको रहना है और सदा दुख-सुखमें इन ही से काम लेना है और इनहीके काम

आना है। इस वास्ते अब तुमको उचित है कि तुम अपने पतिके माँ-बाप, भाई-बहिनं, कुटुम्बी, पड़ौसी और गली-मुहल्ले के लोगोंको ही अपना समझो, सदा सच्चे हृदयसे उनकी भलाई और बढ़वारीकी कोशिश रक्खो, जिससे वे भी तुम्हारी भलाईकी कोशिश करते रहें।

आदमीका काम आदमीसे ही चलता है। बिना आपसके मेल-जोल और एक दूसरेकी मददके मनुष्यका निर्वाह किसी तरह नहीं हो सकता है इस वास्ते जिन लोगोंमें मनुष्यको रहना पड़े उनको अपनाये रखना बहुत ही जरूरी है और यह तब ही हो सकता है, जब हम उनके काम आवें और सच्चे दिलसे उनकी भलाई चाहें। लेकिन इस अभागे हिन्दुस्तानमें आजकलकी स्त्रियाँ अपने कुटुम्ब वालोंके तो क्या काम आवेंगी और उनसे तो क्या सच्चा मेल-मिलाप रक्खेंगी; बल्कि आजकल तो पति और पत्नीमें भी सच्ची मुहब्बत और हृदयका सच्चा मिलाप बहुत कम देखनेमें आता है और कोई दूरका हो या नजदीकका, अपना हो या बेगाना हरएकके साथ मायाचारीका ही व्यवहार और दिखावेकी ही मुहब्बत नजर आती है। इसही कारण सब कोई जरूरतकी फीकी बातें बनाती हैं और बात-बात में अपने आपको बारबार फेंककर दिखाती हैं लेकिन समयपर कोई भी काम नहीं आती हैं, जिसके कारण सब ही को हरएक काममें दिक्कत उठानी पड़ रही

है और सब ही की जिन्दगी जानवरोंके समान महा संकटमें बीत रही है। अब हम इन ही बातोंको ज़रा खोलकर लिखते हैं, हमारी बहिनोंको चाहिए कि इनको बहुत ध्यान देकर पढ़ें और अपने नफ़ा-नुकसानपर विचार करके उनही तरीकोंपर चलें जिनसे सुख-शांतिकी प्राप्ति हो और सब प्रकारकी उन्नति और बढ़वारी हो।

प्यारी बहिनो! इस कथनमें मुझको हिन्दुस्तानकी स्त्रियों की महामूर्खता और नीचताको खुले शब्दोंमें दिखलानेकी ज़रूरत पड़ गई है। आशा है कि इस कथनसे तुम मुझपर नाराज न होगी, क्योंकि जो कुछ लिख रहा हूं वह सब अपनी सारी उमरकी जांच-पड़तालके बाद अब अपने बुढ़ापेमें तुम्हारे ही भलेके वास्ते लिख रहा हूं। लेकिन ऐसा भी न करना कि मेरे इस कथनको बुड्ढेकी बड़बड़ समझकर इसपर कुछ भी ध्यान न दो, बल्कि तुमको चाहिए कि मेरे इस लेखको बड़े बूढ़ोंकी नसीहत समझकर पल्ले बाँधो और इसके मुताबिक चलकर इससे नफ़ा उठाओ।

हिन्दुस्तान में एक कहावत मशहूर है कि 'धी जमाई लेगये और बहुवें लेगईं पूत, कहै मनोहर भड्डली रहे ऊतके ऊत।' अर्थ इसका यह है कि बेटियोंको तो जमाई ले गये और बेटोंको बहुओंने वश में कर लिया, इस तरह औलाद होते हुए भी बिना औलादके बन गए। इस कहावतकी ही बदौलत

हिन्दुस्तानमें बड़े-बड़े अनर्थ हो रहे हैं और हमारे पवित्र घर पूरे-पूरे नर्क-स्थान बन गये हैं। देखो, क्या यह गज़बकी बात नहीं है कि जिस सासने अपने बेटेके विवाहमें अपना बहुतसा जेवर उतारकर बहूको चढ़ा दिया है, और सारी उमर घर भरके खाने-पीने और पहिनने-ओढ़ने में तंगी-तुशी करके और कौड़ी-कौड़ी जोड़कर जो रुपया जमा किया था वह सब निकालकर खर्च कर डाला है। वही सास-बहूके घर आनेपर यह चाहती रहती है कि मेरा बेटा अपनी बहूको रोज झिड़कता रहे और लात घूंसों और जूतोंसे पीटता रहे। वह सास गली मुहल्ले और बिरादरीकी औरतोंके सामने तो ऐसी बातें बनाती है मानो बहूके ऊपर वारबार कर पानी पीती है। अगर बहूका कान भी तत्ता हो जावे तो सारे घरको सिरपर उठा लेती है, तड़पती हुई फिरने लगती है, अपना कलेजा निकाल निकालकर दिखाने लगती है, और बहूको किसी भी काममें हाथ नहीं लगाने देती। लेकिन मनमें यही बात रखती है कि यह गैर घरकी औरत हमारे यहाँ आगई। इस वास्ते इसको जितना भी जूतीके नीचे रक्खा जाय उतना ही अच्छा है। इस वास्ते अपने बेटेको अपनी बहूसे मुहब्बत करते देखकर उसको आग लग जाती है और वह डरने लगती है कि कहीं ऐसा न हो कि बहू मेरे बेटेको मोहकर अपने वशमें करले और मुझसे जुदा कर दे। इस वास्ते वह जाहिरमें तो अपने

बेटेसे बहूकी तारीफ ही करती रहती है और बहुत मुहब्बत दिखाती है लेकिन असलमें अपने बेटेका मन उससे फाड़ती रहती है और खूब मायाचार बनाती है। बेटा बेचारा कुछ दिनों तक तो माँकी बातोंको सच मानता है और अपनी बहू की एक भी बातपर एतवार नहीं करता; लेकिन जब माँकी बहुतसी बातें झूठी निकलती हैं तो वह उनकी बातोंमें दखल देना छोड़ देता है और मनमें विचार लेता है कि इन कम-बख्तोंको आपस ही में कटने-मरने दो। ऐसा विचारकर वह घर में आना और घरके कामोंमें ध्यान देना बहुत कम कर देता है।

बहूरानी भी इस मौक़ेपर कुछ कम मायाचारी नहीं खेलती है शुरूमें तो वह अपनी सासकी सब सख्तियाँ झेलती है और फिर कुछ दिनों पीछे धीरे-धीरे अपनी तकलीफें अपने पतिके सामने खोलना शुरू कर देती है। वह जाहिरमें तो यह दिखाती है कि वह अपनी तकलीफें बयान ही नहीं करना चाहती बल्कि चुपचाप ही उन तकलीफोंको झेलना चाहती है। लेकिन असलमें वह राईका पर्वत बनाकर दिखाती है और खूब ही मकर-फरेब का जाल फैलाती है। लेकिन उसके इन मकर-फरेबों के कारण ही पतिपर उसकी बातोंका कुछ असर नहीं होता और वह इस झगड़ेसे अलग ही रहना पसन्द करता है। जब बहूजीका इस तरह काम नहीं चलता तब वह

अपनी ही तरकीब जो बचपनमें अपने बापके यहाँ काममें लाती थी, शुरू कर देती है—कई-कई दिन अलग पड़ी रोती रहती है और खाना तक नहीं खाती। अब सास भी घबराती हैं कि कहीं गली मुहल्ले और बिरादरीकी औरतोंको यह बात मालूम न हो जावे और यह न समझ लें कि सास अपनी बहूपर इतनी सख्ती करती है। इस वास्ते अब वह ऊपरी मनसे बहूको मनानेकी कोशिश करती है और उसकी सब तरह खुशामद करने लगती है और प्रेम सिद्ध करनेके लिए अपने बेटेपर भी बार बार दबाव डालती है कि भाई तू ही किसी तरह बहूको समझा, कलसे उसने तो खाना तक नहीं खाया है। बेटा खीझकर कहता है—मरने दो, अगर नहीं खाती है, मैं क्या उसके मुंहमें टुकड़े देकर खिलाऊँ? इस पर माँजी सौ सौ बातें बनाती है और बहूसे खूब मुहब्बत जताकर यह भी डराती है कि भाई घर इन बातों में बदनाम हो जावेगा, घरकी हवा उखड़ जावेगी और सब बातें बिगड़ जावेंगी। लाचार बेटा ही अपनी बहूको मनानेके लिए मजबूर होता है और जिस तरह बन पड़ता है उसे मनाता है। लेकिन बहूके मनजानेपर माँको बेटेका यह तरीका बहुतही नापसन्द होता है और वह अलहदगीमें अपनी पड़ोसिनोंसे कानाफूँसी करके अपने बेटे और बहूकी बुराई करने लगती है। पड़ोसिनें तो सदा इस बातकी तलाशमें ही रहती हैं

कि कब किसीके यहाँ झगड़ा हो और हमको तमाशा देखने का मौका मिले। इस वास्ते इस अवसरको ठीक जानकर सास को खूब फड़काती हैं और उसको अनेक घरोंकी कहानियाँ सुनाकर यह बात उसके दिलमें जमाती हैं कि दुनिया भरमें सब हीके बेटे और बहुएँ लायक हैं सिर्फ तेरा ही बेटा और बहू नालायक हैं। वे पड़ौसिनें उसकी बहुत-बहुत तारीफ करती हैं कि तू तो इनके वास्ते इस तरह मरती फिरती है और इनके वास्ते ऐसा-ऐसा काम किया है परन्तु ये नालायक तेरे साथ ऐसा बर्ताव करते हैं। वे ही पड़ौसिनें फिर बहू के पास जाती हैं और उसकी अनेक प्रकारकी तारीफ करके और अनेक घरोंकी कहानियां सुनाकर उसके दिलमें यह बात जमाती हैं कि तेरी सास तेरे साथ बहुत सख्ती करती है और तुझे बहुत कष्ट देती है। फिर उसे भड़काती है कि तू ही है जो अपनी सासकी यह सब सख्तियाँ सह रही है, पर तू भी कबतक झेलती रहेगी। फलानी स्त्रीकी सास भी अपनी बहूको बहुत दिक किया करती थी फिर आखिरको जब बहू ने भी सामना पकड़ा, हूबहू जवाब दिया, तब ही उसकी सास ढीली हुई और वह बहू अब अपना घर अलग करके चैनसे रहती है। इस तरह वह पड़ौसिनें सास और बहू दोनोंसे भली रहकर उनमें खूब लड़ाई कराती रहती हैं। अब बहूजी सासका मुकाबला भी करने लगती हैं और अपने पतिके कान

भी तरह-तरह की शिकायतों से भरने लगती हैं। पति अव्वल तो उसकी बात सुनता नहीं, और यही कहता रहता है कि तुम जानो और माँ जाने। ऐसी ही तुम हो और ऐसी ही माँ। इस वास्ते हमें तुम्हारे झगड़ोंसे कुछ मतलब नहीं। लेकिन जब हर वक्तके रोने और झींकनेसे उसकी जान आफतमें आ जाती है। और वह तंग आ जाता है, तब वह रातको सोनेके लिए भी देरसे घर आने लगता है और इस तरह भी छुटकारा न पाकर रातको आना और घरमें सोना ही छोड़ देता है और दिनमें भी सिर्फ खाना खानेको ही आने लगता है और वह भी दौड़ते-भागते ही।

पतिके इस तरह लापरवाह हो जानेसे बहूजी और भी ज्यादा ढीठ हो जाती है और घरमें और भी ज्यादा दङ्गा-फिसाद रहने लगता है, यहाँ तक कि पुरुषको दोपहरकी रोटी खानेके लिए आध घड़ीके वास्ते भी घरमें ठहरना मुश्किल हो जाता है और उसकी जानपर बन आती है। तब उसकी माता भी उसको यह ही कहने लगती है कि बहू तो अलग ही रहना चाहती है, अलग हुए बिना न तो यह हर वक्तका क्लेश ही मिटेगा और न तुझे ही अच्छी तरह टुकड़ा खानेको मिलेगा, मुझे तो भाई तेरी फिक्र है जो सोच ही सोचमें कांटा हुआ जाता है। ग़रज बहूसे हार मानकर अब मां अपने बेटेको समझा बुझाकर अलग कर देती है और सबके सामने अपना दुखड़ा

रोती फिरने लगती है और खूब जी खोलकर बहूकी बुराई करती फिरती है। इस तरह एक घरके दो टुकड़े हो जाते हैं, घरकी बँधीमुट्ठी खुल जाती है। हवा बिखर जाती है, दोहरा खर्च होने लगता है और सिवाय बर्बाद होने, मुसीबत उठाने एवं बदनाम होने के और कुछ हाथ नहीं आता है।

प्यारी बहिनो! इस प्रकारके तमाशे कोई अनोखे तमाशे नहीं हैं जो किसी एक-आध घरमें हों, बल्कि घर-घरमें सदा यही फ़िसाद, यही लड़ाई-दंगे रोना-झींकना रहता है जिससे हमारे घर पूरे-पूरे नर्क-पुरी बन रहे हैं। कारण, इन सब झगड़ों का स्त्रियोंकी मायाचारी, झूँठा लोक दिखावा और क्लेश सहन करनेके अभ्यासके सिवाय और कुछ भी नहीं है। देखो इस ऊपरके ही कथनमें अगर माँजीको झूठे लोक-दिखावेका शौक न होता और उसको इस बातका डर न रहता कि ऐसा न हो कि दुनिया यह समझने लगे कि यह अपनी बहूको अच्छी तरहसे नहीं रखती है तो वह सिर्फ दिखावेकी झूठी मुहब्बत करके अपनी बहूको न बिगाड़ती, बल्कि असली और सच्ची मुहब्बत करके बहूके दिलमें अपना सच्चा प्रेम भी डालती और उसपर अपना रौब भी जमाये रखती, और अपने बेटेसे भी कभी बहूकी झूँठी बड़ाई और कभी बुराई करके अपने बेटेका विश्वास अपने ऊपरसे न हटाती, बल्कि

बिल्कुल साफ़ हृदयसे साफ़-साफ़ बात कहती रह कर मां बेटेके सच्चे प्रेमको कायम रखती, जिससे उसका बेटा भी अपनी बहूके हृदयमें माँजीकी भक्ति और मुहब्बत जमानेकी कोशिश करता रहता और माँकी ही ताबेदारीमें रहनेका सबक पढ़ाता रहता। इस ही तरह अगर बहूजी भी मायाचारीकी बातें बना-बनाकर अपने पतिको अपनेसे नाराज न कर लेती, बल्कि सदा सही और सच्चा ही हाल बताकर पतिके हृदयमें अपनी दुगुनी मुहब्बत और पूरा एतबार कायम कर लेती तो उसका पति अव्वल तो घरमें झगड़े ही न पड़ने देता और अगर कभी कोई झगड़ा हो भी जाता तो उसको दूर करनेकी पूरी-पूरी कोशिश किया करता। इसी तरह अगर स्त्रियाँ पराये घर जाकर मायाचारीकी बातें न किया करें और माससे कुछ और बहूसे कुछ बातें न बनाया करें, तो उनके यहाँ भी पड़ौसकी स्त्रियाँ आकर मायाचारी न खेला करें और किसीसे कुछ कह कर भुसमें आग न लगाया करें। गरज औरतोंको यह बात निश्चयरूपसे जान लेना चाहिये कि स्त्रियोंको मायाचारी और दिखावाने ही उनके घरका सत्यानाश और पूरी तरहसे मटियामेट कर रक्खा है, और कलह और क्लेशका ऐसा बीज बो रक्खा है कि उसकी जड़ कभी जाननेमें नहीं आती। इस वास्ते उनको चाहिए कि वह मायाचारी और लोक दिखावाको एकदम छोड़ दें और अपने घरको स्वर्ग-धाम बना लें।

देवरानी-जिठानी की प्रवृत्ति और कर्तव्य

ये तो रहीं सास-बहूके बर्ताव की बातें। इससे भी बढ़िया जब हम देवरानी जिठानीकी वर्तावकी तरफ निगाह दौड़ाते हैं, तो उनमें बिल्कुल ही कुत्ते बिल्लियों जैसी लड़ाई देखनेमें आती है। किसी-किसी घरमें तो यहाँ तक तमाशा होता है कि एक ही घरमें इकट्ठी रहनेवाली तथा एक ही चूल्हेपर रोटी खानेवाली देवरानी-जिठानीमें ऐसा द्वेष होता है कि जब देवरानी रोटी बनाती है तो जिठानी नहीं खाती, और जब जिठानी बनाती है तो देवरानी नहीं खाती। यह तो अक्सर ही घरोंमें देखनेमें आता है कि जिठानीके बीमार हो जानेपर देवरानी उसके पास नहीं फटकती और देवरानीके बीमार पड़ जानेपर जिठानी उसके पास नहीं जाती और जब पड़ौसकी औरतें इसका सबब पूछती हैं तो बेधड़क यह जवाब दे देती हैं कि जिठानी या देवरानीको मेरा एतवार नहीं है, मैं उसको दवा-दारू या खाने-पीनेमें जहर दे दूँगी। इस वास्ते वह मेरे हाथसे कोई चीज नहीं लेना चाहती और न मुझसे कोई काम कराना चाहती है। लाचार होकर मैं उससे अलग रहती हूँ और डरती हूं, कहीं ऐसा न हो कि बीमारी बढ़ जाय और मेरा नाम हो जाय। लेकिन असलमें यह बात नहीं होती बल्कि असलमें बात यह है कि हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंका हृदय पत्थरसे भी ज्यादा ऐसा कठोर हो गया है कि दूसरोंको तक-

लीफमें देखकर ही उनको आनन्द आता है। इस वास्ते तक-लीफमें किसीके काम आना उनको किसी भी तरह भी पसन्द नहीं है। स्त्रियोंकी यह आदत बिल्कुल ऐसी है जैसी कि शिकारियोंकी होती है जो बन्दूक हाथमें लेकर दिनभर जंगल में फिरते रहते हैं और जानवरोंको गोली मारनेपर जब वह जानवर फड़फड़ाता हुआ नीचे गिरता है, तड़पता है और लोटपोट होता है, तब उनको बड़ा आनन्द आता है और ऐसा ज्यादा आनन्द आता है कि वे इसके वास्ते जंगलमें घूमनेकी सैकड़ों मुसीबतें झेलना खुशीसे पसन्द करते हैं।

स्त्रियोंको भी अपनी देवरानी जिठानीके साथ इस दुष्ट व्यवहारके कारण अपनी वारी आनेपर अपनेको भी बहुत कुछ संकट झेलना पड़ता है। लेकिन उनका दुष्ट हृदय उनको सब तरहके कष्ट झेलनेके लिए तो तैयार कर देता है पर दूसरोंके कार्य आनेसे रोकता ही रहता है। रही वह औरत जो बीमार पड़ी है, वह भी मुसीबतें उठाना तो पसन्द करती है, लेकिन अपनी देवरानी जिठानीसे किसी किस्मकी सहायता या टहल-सेवा लेना पसन्द नहीं करती, क्योंकि वह जानती है कि मुसीबतके ये दस-पाँच दिन तो ज्यों-त्यों बीत ही जावेंगे, लेकिन अगर मैं अपनी देवरानी जिठानीसे कुछ काम लेना चाहूंगी तो अव्वल तो वह मेरा कुछ काम करेगी ही नहीं, कुछ-न-कुछ बहाना करके साफ जवाब दे देगी और अगर कुछ काम करेगी भी तो

कोई असली काम नहीं करके देगी, बल्कि ऐसा ही काम करेगी जिसमें चाहे आराम होवे या तकलीफ़, लेकिन उसका लोक दिखावा पूरा हो जावे और ऐसा करनेपर भी फिर सारी उम्र इस बातके ताने मारती रहेगी कि मैं इसकी बीमारीमें इस तरह मरी और इस तरह काम आई। ऐसा विचार करके वह सैकड़ों मुसीबतें उठाती हुई भी इस ही बातकी फिक्रमें रहती है कि मेरी देवरानी जिठानी मेरी तकलीफमें मेरे किसी भी कामको हाथ न लगावे जिससे मैं आगेको सारी उम्र उसके तानोंसे बची रहूँ और उसका यह भय असलमें होता भी ठीक ही है, क्योंकि हिन्दुस्तानकी बहुत-सी स्त्रियां कुछ ऐसी ओछी बन गई हैं कि उनको अपना जरासा भी अहसान जतानेमें शरम नहीं आती। अगर वे उतना ही अहसान जताया करें जितना कि वे किसीपर करती हैं तब तो गनीमत रहे; लेकिन स्त्रियोंका तो यह हाल ही रहा है कि अगर किसी बीमारीमें उन्होंने कभी एक कटोरी पानी भी उठाकर दे दिया तो वे इतनी ही बातपर दुनियाँ भरको सिर उठाये फिरने लगती हैं और ऐसे बुरे शब्दोंमें उसका गीत गाती रहती हैं कि सुननेवालोंको भी बुरा मालूम होता है। कभी-कभी तो वे इतनी जरा-सी ही बातका यहां तक तूम्बार बाँधती हैं कि हमने तो घर-कुनबेकी टहल-सेवामें ही उमर बिताई, सदा उन्हींका पेट पाला, हमेशा उन्हींके दुःख-दर्दमें लगे रहे और रोग-शोक

में काम आये। इस घरमें आकर तो हमें एक दिन भी ठण्डा पानी तक नसीब न हुआ, यहाँ तो सदा यह ही झींकना रहा, आज किसीको बुखार आ रहा है, कल किसीको दस्त लग रहे हैं, परसों किसीका जी अच्छा नहीं है। पर हमें तो ऐसे फरेब करने आते नहीं कि अच्छे-अच्छे होकर भी बीमार-बीमारसे पड़े रहें और दूसरोंसे टहल करावें। हमने तो सदा अपनी ही हड्डियाँ छेदीं और रात-दिन खड़ी नलियों नाँचकर सबकी ही टहल-सेवा की और सारे ही परिवारके काम आये, पर हमारे कोई काम आया हो तो हमें कसम दिला लो। जो हम कभी बीमार पड़ी होगीं तो किसीसे इतना भी नहीं होगा कि कोई हमारे घड़ेसे पानी भी ओंभकर पिलादे। गरज वे औरतें इस किस्म की सैकड़ों और हजारों बेतुकी बातें बकती रहती हैं जिसकी वजहसे उनकी देवरानी और जिठानी अपनी तकलीफमें उनसे कोई भी काम नहीं लेतीं और साफ इन्कार कर देती हैं।

इसी प्रकार सैकड़ों बातें रात-दिन छोटे-बड़े सभी घरोंमें होती रहती हैं। जिससे वह घर जो परम आनन्दका स्थान, सुख शान्तिका अड्डा होना चाहिये था सचमुच ही दंगे-फ़िसाद और लड़ाई-झगड़ोंका अखाड़ा और अनेक प्रकारकी आफतों और क्लेशोंका घर बना रहता है। इस कारण घरके मर्द अपने घरमें भी कदम रखते हुए डरते हैं और लाचारीसे ही घर आते हैं और घरकी तरफसे बिल्कुल बेपरवाह होकर घरको

भी बर्बाद करते हैं और तरह-तरहके अवगुणोंमें फँसकर अपना भी सत्यानाश कर डालते हैं।

देवरानी-जिठानीमें तो आजकल यहाँ तक अविश्वास रहता है कि अगर एक दूसरेके बच्चेको खेल खिलानेके लिये भी ले जाय तो बच्चेकी माँको यह डर हो जाता है कि मेरे बच्चेको कोई बुरी-भली चीज न खिला दे, या उसपर कोई जादू-टोना न करा दे। इस वास्ते या तो उसकी गोदमें से बच्चे को छीन लेती है या खुद भी उसके साथ-साथ जाती है या अपनी किसी लड़कीको साथ भेजती है। इस प्रकार जब किसी स्त्रीके कोई बच्चा पैदा होनेको होता है तो सगी देव-रानी-जिठानियोंके होते हुए भी वह अपनी ननदको ही उसके ससुरालसे बुलाती है और उससे ही सूतके दिनोंमें सब काम काम कराती है, लेकिन तमाशा यह है कि न तो ननदको भावजकी असली मुहब्बत होती है और न भावजको ननद की। इस वास्ते ननद सारे काम इस ही तरह करती रहती है जिसमें उसकी भावज खुश रहे, ऐसा करनेसे जच्चाखानेमें पड़ी हुई भावजको आराम मिले या तकलीफ़, वह बीमार हो जाय या तन्दुरुस्त, इसकी ननदको कुछ भी परवाह नहीं होती। इस तरहकी भावजको भी ननदसे आराम-तकलीफकी जरा चिन्ता नहीं होती, उसकी बलायसे चाहे उसकी ननद मरे या जीवे, सर्दीमें रहे या गर्मीमें, बीमार हो या तन्दुरुस्त, हां

इतनी बातका उसको अवश्य ध्यान रहता है कि चलते समय ननदको दो जोड़े कपड़े और कुछ और सामान जरूर दे दिया जावे, जिससे यहाँकी और वहाँकी औरतोंको यह मालूम हो जावे कि भावजने ननदको इतना-इतना दिया। गरज कहाँ तक गीत गावें हमारी स्त्रियोंने तो मायाचार और लोक दिखावे में फँसकर आप ही अपने आराममें कांटे बो लिये हैं। जिससे उनको स्वयं भी रात-दिन क्लेश उठाना पड़ रहा है और उनकी बदौलत उनके पुरुषोंको भी क्लेशमें ही रहना पड़ता है।

सेवा-धर्म और सदाचार

मेरी बहिनो! अपने विवाहसे पहले जब तुम अपने बाप के यहाँ थीं तब तुमको याद है कि तुम अपने भाई-भतीजों और बहिन-भानजोंकी कितनी टहल करती थीं, यहाँ तक कि उनके मल-मूत्रसे भी घृणा नहीं आती थी। अब भी जब तुमको अपने बापके यहाँ जाना पड़ता है तब भी उनकी और उनके बच्चोंकी कितनी टहल करती हो। लेकिन ऐसा करने से क्या तुम कभी यह समझती हो कि हम उनपर अहसान करती हैं और क्या तुम अपने भाई भतीजोंकी इस टहल-सेवा को कभी किसीके सामने गाती हो? नहीं, तुमको तो स्वप्न में कभी यह ख्याल नहीं आता कि हमने कोई अहसान किया। इस ही वास्ते तुम्हारी यह टहल-सेवा कभी तुम्हारे मुँहपर भी

नहीं आती है; क्योंकि जो कुछ तुम करती हो वह सब प्रेमके कारण अपना कर्तव्य समझकर करती हो। इस ही वास्ते यह टहल-सेवा तुमको किसी तरह भी दूभर मालूम नहीं होती। बल्कि इसमें तुमको आनन्द ही आता है और तुम इससे भी ज्यादा उनकी टहल-सेवा करनेकी ख्वाहिशमन्द रहती हो। इस ही वास्ते तुम्हारे भाई-भतीजे भी खुशी-खुशी तुमसे अपनी टहल-सेवा लेते हैं और तुम्हारा कुछ भी अहसान नहीं मानते। इस ही तरह अगर तुम अपनी देवरानी-जिठानियोंको अपनी सगी बहिन और देवर-जेठोंको अपने सगे भाई समझ लो और उनके काम आना और उनकी टहल-सेवा करना अपना परम कर्तव्य समझकर सच्चे दिलसे उनकी टहल-सेवामें लगी रहा करो, और न तो तुम ही अपने मनमें यह समझो कि उनके काम आकर हमने उनपर कोई अहसान किया और न वे यह समझें कि हमपर कोई अहसान किया, तो तुम्हारा भी और तुम्हारी देवरानी-जिठानीका भी जीवन बहुत ही आनन्दसे व्यतीत होने लगे और तुम्हारे संकट और क्लेश दूर भाग जावें और घरके मर्द भी अपने घरसे पूरा-पूरा आनन्द पाने लगें और घरकी पूरी खबरगीरी लेने लगें, जिससे सब ही तरह की बढ़वारी हो जाय और घरकी आबरू भी बँध जाय।

मेरी बहिनो! तुम इस बातका यकीन मानो और निश्चय जानो कि जितना ही तुम लोक दिखावा करके बड़ी बनना

चाहती हो उतना ही उतना तुम दुनियाकी निगाहमें नीचे गिरती जाती हो और तरह-तरहके संकटोंमें फँसकर अपनी जिन्दगी बर्बाद करती हो। दुनियाकी स्त्रियाँ अपनी मायाचारी के कारण तुम्हारे सामने तो तुम्हारी बडाई करती हैं और तुम्हें खूब उभारती हैं, लेकिन पीठ पीछे वे तुम्हारी खूब बुराई करती हैं और तुम्हारी एक-एक बातको विचार-विचार कर तुम्हारा खूब ही मज़ाक़ उड़ाती हैं। इस वास्ते इस लोक-दिखावेके तरीक़ेको एकदम छोड़ दो और करो वह असली काम, जिसमें तुम भी सुखी रहो और तुम्हारी देवरानी जिठानी भी। तुम्हारी तो असली तारीफ़ इस ही बातमें है कि तुम और तुम्हारी देवरानी-जिठानी ऐसी एक हो जावें कि किसीको कानों कान भी खबर न होने पावे कि इनके घरके अन्दर क्या हो रहा है। और अगर तुम्हारी देवरानी-जिठानियां इस रास्ते चलना नहीं चाहतीं—वह तुमसे अच्छा व्यवहार करना नहीं चाहतीं—तो तुम अकेले ही उनसे सच्ची मुहब्बत करती रहो और उनकी कोई भी शिकायत किसीसे न करो। आखिर को शर्मिन्दा होकर वे भी आपसे आप ही सीधी हो जावेंगी और तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करने लगेंगी, और अगर वे सारी-सारी उमर भी सीधी न बनें, तब भी तुम उन जैसी मत बनो बल्कि अपनी नेकीपर ही कायम रहो, जिससे आखिर को दुनियामें तुम्हारा ही यश हो। इसके सिवाय तुम यह भी

समझो कि अगर तुम्हारे भाई-बहिन या भावज तुमसे बेराही करते हैं और तुम्हारे कुछ काम नहीं आते, तब भी तुम उनका प्रेम नहीं छोड़ती हो। अपने बापके घर जानेपर सौ दिक्कतें उठाती हुई भी बड़ी खुशीसे उनकी टहल-सेवा करती रहती हो, क्योंकि तुम उनकी टहल-सेवा किसी बदलेके वास्ते नहीं करते हो बल्कि अपने हृदयकी सच्ची मुहब्बतसे करती हो। इस वास्ते चाहे तुम्हारे भाई-भावज तुमको दुख भी दें, तब भी तुम उनकी टहल-सेवामें कमी नहीं करती हो और न उनके दुख देनेको किसीसे जाहिर करती हो और न इस अपनी टहल-सेवाको किसीके सामने गाती हो। इस ही तरह अब अपनी सुसरालमें आकर तुम अपने पतिका आधा अंग बन-कर बिल्कुल उसीकी ही हो गई हो। इस वास्ते तुमको चाहिए कि अपने पतिके रिश्तेदारोंको ही अपने रिश्तेदार समझो और वे चाहे तुमसे कैसा ही बर्ताव करें, पर तुम सच्चे दिलसे उनसे प्रेम ही करती रहो, उनकी सेवा-टहलमें ही लगी रहो और इस प्रकार अपना कर्तव्य पालन करके अपना भी यश बढ़ाओ और अपने पतिका भी।

मेरी प्यारी बहिनो! इस प्रकार अपना कर्तव्य पालन न करनेसे और अपने पतिके रिश्तेदारोंको अपने सच्चे रिश्तेदार न समझनेसे हमारे घरोंमें जो नित्य नये तमाशे होते रहते हैं और जिन महा संकटों और क्लेशोंमें स्त्रियोंको फँसा रहना

पड़ता है उन सबका वर्णन इस छोटीसी किताबमें किसी तरह भी नहीं हो सकता। सच तो यह है कि आजकल स्त्रियाँ तो साक्षात् क्लेशोंकी मूर्ति बन रही हैं और उनकी सारी उम्र रोने-झींकने और लड़ने-भिड़नेमें ही जाती है। इस ही कारण बिरादरीके किसी काम-काजमें, रास्ता चलते गली-मुहल्लेमें या किसी धर्म-स्थानमें जब कभी चार औरतें इकट्ठी हो जाती हैं या कभी घड़ी दो घड़ीके वास्ते कोई किसीके घर चली जाती हैं तो वे अपना-अपना झींकना झींकती हैं। सुननेवालीं भी ऐसी ही बातें बनाती हैं मानो उनको उनकी तकलीफ सुनकर बहुत ही दुख हुआ है और वे उनको तसल्ली देने और शान्त करनेके बदले उनकी तकलीफको सौ-सौगुना करके दिखाती हैं और उनके हृदयको अच्छी तरह मसोसकर उनको खूब ही दुखी बनाती हैं और आठ-आठ आँसू झलाती हैं और अगर उन औरतोंको किसीके दुखका हाल पहलेसे ही मालूम होता है तब तो उसके दुःखकी बात छेड़कर और उसको कई गुना बनाकर उसके दुःखके कारण अपने हृदयका बहुत-बहुत दर्द दिखाकर उसके हृदयको बहुत ही ज्यादा दुखाती हैं, उसके दुखिया चित्तपर खूब ही भारी चोट लगाती हैं और उसको रुलाकर ही उठती हैं। इस प्रकार आजकलकी स्त्रियाँ नर्कके असुरोंका काम करती हैं और स्त्रियोंके क्लेशित-मनको एक पलभर भी चैन नहीं लेने देतीं। बल्कि जहाँ तक बन

पड़ता है उनके हृदयकी आगको खूब फूँक मार-मारकर सुलगाती रहती हैं और इस ही सुघड़ भलाईको अपनी बुद्धि-मानी और प्यार मुहब्बत समझती हैं।

प्यारी बहिनो! दुखियाको उसका दुख याद दिलाना महा कठोरताका काम है और उसके साथ भारी ज़ुल्म करना है। यह काम उन्हींका होता है जो दूसरोंको दुखी देखकर ही खुश होते हैं। मेरी बहिनो! तुम इस उल्टी चालको एक दम छोड़ दो और कभी किसीको उसका दुख याद मत दिलाओ। बल्कि अगर कोई अपने दुखका जिक्र उठाये भी तो उससे भी ज्यादा दुखियाओंका वर्णन करके उसके दुखको हल्का करके दिखाओ और जहाँ तक हो सके चित्तको दूसरी तरफ़ बटाओ और उसको हँसी-खुशी में लगाओ।

बड़ी भारी मुश्किल तो यह है कि करीब-करीब सब ही स्त्रियोंका हृदय हर समय क्लेशित रहनेके कारण उनको सदा दुख-दर्द और क्लेशकी ही बातें अच्छी लगने लगती हैं और ऐसी ही बातोंमें उनका जी लगता है और हर समयके क्लेशके कारण वे कुछ ऐसी खिझी हुई और झुँझलाई हुई रहती हैं कि बात-बातमें उनके मुँहसे अङ्गार ही बरसते रहते हैं इस ही कारण वे अपने बच्चोंको भी सदा भयानक और हृदय-विदा-रक गालियाँ देती रहती हैं। वे प्यार करती हुई भी अपने बच्चोंको 'नाश-जाना, जल-मरना गढ़ेमें दबना, खोजड़े' आदि

ऐसे ही अनेक बचनोंका प्रयोग करती रहती हैं और बात-बातमें 'तेरा नाश जावे, जा मरजा, परे जाकरे गढ़जा, मरता भी तो नहीं, मेरे क्यों प्राण पी रखे हैं, मेरी क्यों खाल खाई है, मेरा क्यों खून पी रक्खा है, इस औलादसे तो मैं मर जाती तो अच्छा था, खाले मुझे, रखले मुझे पेटमें' इस ही प्रकारकी बातें कहती रहती हैं और जब अपनी प्यारी औलादके ही साथ उनका यह हाल है तब औरोंके साथ तो उनका कुछ और ही बर्ताव होगा।

इससे भी अधिक कुछ औरतें तो यहाँ तक खिझी रहती हैं कि वे घरकी चीजोंकी चर्चा भी सदा गालीके साथ ही करती रहती हैं—'जल गई सुई ही खो गई, नाशपीटी कैंची ही नहीं मिलती, निपूती आग ही नहीं सुलगती, नाश गई रोटी ही नहीं फूलती, ऊती कंघी ही टूट गई, खोजड़े-पीटी दाल ही नहीं गलती'—गरज वे किसी भी चीजका नाम बिना गालीके नहीं लेतीं और घरके काम-काजमें भी हर समय ऐसे ही बोलती हैं कि मानो बहुत ही खिझी हुई हैं। जैसे अगर उनको किसी चीजके लेनेसे इन्कार करना होता है तो इस तरह कहती हैं कि 'फेंक परे मरीको, मैं क्या इसे फूँकूँगी, मुझे क्या इसमें आग देनी है।' अगर कोई किसी चीजको जरा भी बिगाड़ दे या हाथ लगादे तो अपनी जरा-सी भी नाराजगी दिखानेके वास्ते शोर मचाने लगेंगी कि 'फूँक दी, जलादी, नाश करदी,

आग लगादी।'

अगर कोई काम कराना होता है जैसा कि यह कहना हो कि 'इस चीजको उठाकर रखदो, तो ऐसा कहेंगी कि 'इसको उठाकर सन्दूकमें फूँक दी होती,' या कहेंगी कि 'इसे यहाँ क्यों फूँक रक्खी है, गरज हर समय फूँका-जलाई ही मुँहपर रहती है,' जिससे साफ साबित है कि उनका हृदय हर समय ही जलता रहता है और उनका मन हर समय खिझा हुआ और हदसे ज्यादा क्लेशित रहता है। तब ही तो उनके मुँह से फूल झड़नेकी जगह हर समय अंगारे ही बरसते रहते हैं।

प्यारी बहिनो! यह तो तुम स्वयं ही समझ सकती हो कि इस तरह बुरे-बुरे बोल बोलनेसे स्त्रियोंका कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता, परन्तु उनका नुकसान बड़ा भारी होता रहता है। ऐसे व्यवहारसे कमसे कम उनका जी तो जरूर ही जलता रहता है और उनकी जबान भी अवश्य गन्दी होती रहती है। ऐसे बोल सुननेवालोंका भी हृदय जलता रहता है और ऐसी स्त्रियाँ डरावनी ही मालूम होने लगती हैं, जिनसे दूर ही रहना सबको अच्छा मालूम होता है। इस कारण स्त्रियोंको ऐसे जले-कटे बोल बोलने एकदम बन्द कर देने चाहिए और उनके स्थानपर ऐसे मुलायम, नर्म, मीठे और सुहावने बोल बोलने शुरू कर देने चाहिए जो सबको ही प्यारे लगें।

अब रहा स्त्रियों का मायाचार—इसका सबूत तो इतनी जरा-सी ही बातसे होता है कि जरा-सी बात में तो वह हर किसीको यह कहने लगती है कि मैं तेरे ऊपर बारी जाऊँ, तू जीती रह, तेरी बड़ी उमर हो, सुहागिन हो, बेटी जीती रहो, तेरे भाई-भतीजे बने रहें। फिर वे ही औरतें जरा-सी बातपर उसहीको कोसने लग जाती हैं और यह कहने लगती हैं कि 'तेरा खसम मर जाय, धी रांड हो जाय, रामजी करे कीड़े पड़ जायँ इसकी देहमें, यह सड़-सड़ कर मरे, इसके घरका सत्यानाश हो जाय, घरके सब मर जायँ और कोई पानी देवा और नाम लेवा भी न रहे।' इस ही प्रकार प्रायः सब ही स्त्रियाँ बात-बातमें अपने भगवानकी, बापकी, भाईकी, पूतोंकी और अपनी जवानीकी सैकड़ों कसम चट-चट खाती रहती हैं और फिर भी कोई उनकी बातका विश्वास नहीं करता। इस प्रकार के मायाचारसे स्त्रियोंने अपनी पद्धति बिल्कुल ही खोदी है। उनकी बात कहनी न कहनी बराबर ही रहती है। कोई भी उनकी बातपर ध्यान नहीं देता।

प्यारी बहिनो! तुम अपनी दुर्दशाको सुधारो और आदमी बननेकी कोशिश करो। आदमी और पशुमें यह ही एक अंतर है कि आदमी तो अपनी बात दूसरेको कहकर अपने बहुत-से काम निकाल लेता है और पशु कोई भी बात नहीं कह सकता। इस वास्ते अगर किसी आदमीकी बातपर विश्वास न रहे, तो

उसका बोलना और न बोलना बराबर ही हो जाता है और वह पशुओंमें ही गिने जानेके लायक है। इस कारण तुमको वाजिब है कि तुम कसम खाना बिल्कुल छोड़ दो, क्योंकि जिसको तुम्हारी बातका विश्वास होगा तो वह बिना कसम खाये भी तुम्हारी बात मान लेगा और जिसको विश्वास नहीं होगा तो वह सौ कसम खानेपर भी तुम्हारी बात नहीं मानेगा। इसके सिवाय तुम सदा सच बोलनेकी भी कोशिश करो और मुँह देखी बात कभी मत कहो। अगर तुमको यह ख्याल हो कि साफ और सच्ची बात कहनेसे दूसरा नाराज हो जावेगा तो चुप रहो और कुछ मत कहो। लेकिन उसके खुश करने के वास्ते झूठी बात हर्गिज मत कहो। इसके सिवाय जितनी जिसकी मुहब्बत तुमको हो उतनी ही जाहिर करो। फिजूल हरएकके ऊपर मरना और बार-बार जाना छोड़ो और किसीसे नाराज हो जानेपर आपेसे बाहर न हो जाओ और न एकदम सारे ही सम्बन्ध तोड़कर और राक्षसीका रूप धारण करके एक तरफसे ही उसका सत्यानाश करना और उसको हड़पकर जाना शुरू कर दो। बल्कि आदमी ही बनी रहो और अपने होश-हवास कायम रखकर बहुत ही गम्भीर शब्दोंमें अपनी नाराजी उसपर जाहिर करदो। ऐसा करनेसे तुम्हारे घरकी सुख-शांति भी रहेगी और तुम भी घरकी देवी बनी रहोगी।

अनेक पत्नियोंसे हानि:-

मेरी बहिनो! आखिरमें मैं तुमको यह भी बता देना जरूरी समझता हूँ कि हिन्दुस्तानकी स्त्रियोंकी यह दुर्दशा क्यों हुई और क्यों वह कलह-क्लेश और मायाचारको ही पसन्द करती हैं और हर वक्त खिझी और झुँझलाई हुई रहती हैं और सदा खोटे ही बोल बोलती हैं। प्यारी बहिनो! तुम्हारे शहरमें अगर किसी पुरुषके दो स्त्रियां होंगी, तो तुमने उन सौतोंकी आपसकी लड़ाईके तमाशे जरूर देखे होंगे और यह नह तो ऐसे फकीर तो जरूर ही देखे होंगे जो दो सौतोंका हाल गा-गाकर सुनाते फिरा करते हैं और उनकी कठपुतली हाथमें लेकर उनकी लड़ाईका खूब तमाशा दिखाया करते हैं, इसके सिवाय दो सौतोंकी लड़ाईके तमाशोंकी अनेक किताबें भी बन गई हैं और तुम खुद भी अपने दिलमें ख्याल कर सकती हो कि उनकी कैसी दुर्दशा रहती होगी। एक पुरुष को दो स्त्रियोंसे विवाह करना, उन स्त्रियोंपर बड़ा ही जुल्म करना है। जिससे उन दोनों स्त्रियोंमें हर वक्त आपसका द्वेष और हद दर्जेकी ईर्षा और डाह पैदा हो जाती है, वे आपसमें एक दूसरेकी आँखोंमें कांटे-सी खटकती रहती हैं और उनमेंसे हरएक दूसरीको देख-देखकर जलती-भुनती-रहती हैं, उनके हृदयमें हरवक्त एक प्रकारकी आग-सी धधकती रहती है जो किसी वक्त भी शांत नहीं होती। वे बात-बातपर लड़कर हृदय

का उबाल निकालती रहती हैं और अपने पतिको अपनी सौत से नाराज करा देने और उससे पतिका मन फाड़ देनेके वास्ते एक दूसरीकी खूब बुराई करती हैं और झूठे-सच्चे हर किस्म के आरोप लगाती रहती हैं और सिवाय इस गीतके और कुछ बात करना ही नहीं जानती, ऐसी स्त्रियोंका स्वभाव हदसे ज्यादा नीच बन जाता है। हरवक्त जलना और जली-कटी बातें करना, दूसरों को दुख पहुँचानेमें ही आनन्द मानना, रोना झींकना, कलह करना, झूँठी बात बनाना, अपनी सौत की बुराई गाना और अपनी बुराई छिपाना, मायाचारी करना, कोसना, पीटना और मुँहसे हरवक्त अंगारे ही बरसाते रहने की आदत हो जाती है, उनको अपनी झूँठी बातोंकी प्रतीत दिलानेके वास्ते बात-बातमें कसमें खानी पड़ती हैं और सब प्रकारकी मायाचारी और मक्कारी बनानी पड़ती है और फिर भी सारी उम्र महा-क्लेशमें ही वितानी होती है।

बड़े भाग्यकी बात है कि आजकल हिन्दुस्तानमें दो स्त्रियाँ रखनेका रिवाज बहुत कुछ उठ गया है और आजकल दो स्त्रियाँ रखना बहुत ही बुरा समझा जाता है। आजकल तो जो पिता अपनी कन्या ऐसे पुरुषके साथ विवाहता है जिसको पहिली भी स्त्री मौजूद हो तो वह बहुत ही नीच समझा जाता है और अक्सर वह ही पिता अपनी कन्याको ऐसी जगह विवाहता है जो अपनी बेटीके बदलेमें रुपयोंकी

थैलियाँ गिनवाता है और रुपयेके लालचमें अन्धा होकर अपनी बेटीको आगमें झोंकना चाहता है।

प्यारी बहिनो! तुम स्वयं विचार कर सकती हो कि जब दो ही सौतोंकी ऐसी दुर्दशा बन जाती है, जैसी ऊपर वर्णन की गई है, तब एक साथ एक ही पुरुषके दस-दस बीस-बीस और सैकड़ों हजारों स्त्रियोंके हो जानेसे उन सौतोंका तो क्या ही बुरा हाल होता होगा। ओह! उनकी हालतका तो मनमें चिन्तवन करके भी शरीरके रोंगटे खड़े हो जाते हैं और बदन थर-थर काँपने लगता है। बेशक उनका त्रास तो नारकियोंके त्राससे भी अधिक बढ़ गया होगा और उनकी पूरी-पूरी व्यथा सुनकर तो पत्थरका हृदय भी टुकड़े-टुकड़े हो जाता होगा, बेशक उनको तो आठ पहरकी जलन और हरवक्तकी कलह के कारण मछलीकी तरह तड़फना पड़ता होगा और चिन्ता-रूपी अंगारोंपर ही लोटते हुए अपने दिन बिताने पड़ते होंगे। कहावत मशहूर है कि आदमीके बराबर कोई नर्म नहीं और आदमीके ही बराबर कोई सख्त नहीं। इसलिए आदमी सब कुछ झेल सकता है और मुसीबतका पहाड़ भी अपने ऊपर उठानेकी शक्ति रखता है। इसी ही कहावतके अनुसार उस जमानेकी स्त्रियाँ भी सब कुछ झेलती थीं और ज्यों-त्यों अपने दिन काटती थीं और रो-झींककर अपनी आयु पूरी करती थीं। कैसे दुःखकी बात है कि सैकड़ों और हजारों वर्षों तक हिन्दु-

स्तानकी स्त्रियोंको वह मुसीबतकी जिन्दगी बितानी पड़ी है जिसकी वजहसे उन्होंने भी अपने आपको नीच ही मान लिया और कई पीढ़ियोंके अभ्याससे उनका स्वभाव भी असलमें नीच ही बन गया और हरवक्त कलह करने, क्लेशमें ही दिन बिताने और झूँठ-फरेब और मायाचारी करनेकी ही हरवक्त जरूरत पड़नेसे उनको इन बातोंके करनेकी ऐसी पक्की आदत पड़ गई कि सन्तान-दर-सन्तान अब तक यह आदत चली आती है।

प्यारी बहिनो! पुरुषोंने तुम्हारे साथ यह महा अन्याय और जुल्म करके इसका फल भी पूरा-पूरा पा लिया है, क्योंकि तुम जानती हो कि गर्भ के दिनोंमें माताके अच्छे-बुरे जैसे भी भाव रहते हैं वैसी ही अच्छी-बुरी सन्तान पैदा होती है। इस कारण उस समयकी स्त्रियाँ जिस नीच अवस्थामें रक्खी गईं थीं और जैसे नीच भाव उनके रहते थे वैसी ही उनकी सन्तान पैदा हुई अर्थात् स्त्रियोंको ऐसी नीच-अवस्था में रखने के कारण पुरुष भी नीच ही प्रकृतिके पैदा होने लगे और होते-होते यह नतीजा हुआ कि हिन्दुस्तानके लोग किसी भी लायक न रहे। दूसरे देशके लोगोंने आकर उनका राज-पाट उनसे छीन लिया और हिन्दुस्तानके लोग बन्दी गुलामकी तरह रहने लगे—उनकी करनी उनके आगे आगई।

प्यारी बहिनो! स्त्रियोंकी नीच अवस्था होने, रात-दिन

कलह और क्लेशमें ही रहने एवं बात-बातमें मायाचार करने और झूँठ-फरेब मिलानेका कारण तुमने भली भाँति समझ लिया, लेकिन अब तुमको खुश होना चाहिए, क्योंकि अब कुछ दिनोंसे हिन्दुस्तानके लोगोंकी आँखें खुल गई हैं और उन्होंने कई स्त्रियाँ रखकर अपने घरको नर्क-स्थान बनाना छोड़ दिया है, अब तो सब लोग एकही स्त्री रखने लगे हैं और उसको अपनी बांदी गुलाम न मानकर अपनी अर्द्धाङ्गिनी--अपने अङ्गका आधा हिस्सा-मानने लगे हैं और अपने ही बराबर समझने लगे हैं। इसवास्ते अब तुम होशमें आजाओ और पशु-तुल्य न रहकर आदमी बन जाओ और आदमियों जैसे ही काम करने लगा। अब तुमको मायाचार करने, हर वक्त कलह करने और क्लेशमें दिन बितानेकी जरूरत नहीं है, बल्कि अबतो तुमको जरूरत है भारी सभ्य बनानेकी, सीधी सच्ची रहनेकी और हरएकसे प्यार-मुहब्बत करने और आनन्द में दिन बितानेकी, जिससे तुम भी अपने गृहस्थीके प्रबन्धमें अच्छी तरह ध्यान दे सको और तुम्हारा पति भी; जिससे तुम भी सुखसे रह सको और तुम्हारा पति भी; जिस कारणसे तुम्हारी सन्तान भी सुन्दर, बलवान, बुद्धिमान, साहसी और पराक्रमी पैदा हो और जगतमें अपना पुरुषार्थ दिखाकर तुम्हारा नाम रोशन करे।

प्यारी बहिनो! तुम्हारे घरमें हर वक्त आनन्द-मङ्गल

रहने और तुम्हारी सन्तानकी बढ़वारी होने, तुम्हारे पुरुषोंके परम शीलवान बनने और उनके हृदयमें सच्ची मुहब्बतके बढ़ने, तुम्हारी पूरी कदर होने, तुम्हारे पुरुषोंका ध्यान घरके कामोंकी तरफ लगने और सब प्रकारकी सुख सम्पत्ति बढ़नेके वास्ते ही हमने यह छोटी किताब लिखी है। हम तुमको विश्वास दिलाते हैं कि तुम हमारे लिखेपर चलोगी और घर को आनन्द-धाम और स्वर्ग-स्थान बनाओगी तो तुम भी गृह-देवी मानी जाओगी और सबसे पूजी जाओगी।

महिला-कर्त्तव्य

दोषरहित गुणगण सहित, चौबीसों जिनराज।
मन-वच-तन कर नमत हौं, सिद्ध होनके काज॥
प्रणमूं श्रीगुरुके चरण, जे निर्ग्रन्थ सज्ञान।
पुनि बन्दौं जिन धर्मको, मिथ्या-तम हर-भान॥

इस संसारके सारे जीव सुखका लाभ और दुःखका नाश चाहते हैं, ऐसा कोई भी जीव नहीं जो दुःखसे डरकर सुखकी इच्छा न करता हो; परन्तु प्रायः सारे ही जीव सुख प्राप्त करने और दुःख दूर करनेका ठीक कारण न जानने तथा विरुद्धाचरणसे नाना भांतिके शारीरिक और मानसिक दुःखोंसे दुःखी हो रहे हैं। फिर शास्त्रोंमें कहे हुए नरक आदिके घोर घोर दुःखोंको तो याद करनेसे ही कलेजा काँप उठता है।

सचमुच यदि विचार करके देखा जाय तो धर्म-धर्म चिल्लानेवाले सब जीव धर्मके स्वरूपको ही नहीं जानते, जिससे अन्धोंकी नाँई भटकते और अनेकों दुःखोंसे टकराते हैं, इसी कारण श्रीगुरुने अपनी बुद्धिसे धर्मका उपदेश देकर सच्चे सुखकी प्राप्तिका उपाय बताया है, उसीके अनुसार यहाँपर कुछ लिखा जाता है, आशा है हमारे भाई और बहिनें इसपर ध्यान देंगे।

आत्माके स्वभावको धर्म कहते हैं। इस धर्मको जानकर इसमें आचरण करनेसे ही दुःखका नाश होकर सच्चा स्वाधीन सुख मिलता है, इसे बुद्धिमान निर्विवाद स्वीकार करते हैं। सारांश यह कि बिना धर्मके सुखकी प्राप्ति होना असम्भव है।

आत्माका स्वभाव—धर्म (राग-द्वेष रहित देखना, जानना)—अनादि कालसे, हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और तृष्णा आदि पाप-कर्म प्रवृत्तिके कारण मलिन, आत्मा राग-द्वेष-युक्त हो रहा है, इसलिये उसे शुद्ध करनेका—पाप छोड़, अहिंसा, सत्य, अचौर्य्य, ब्रह्मचर्य और सन्तोषरूप प्रवर्तनेका—उपदेश हमारे आचार्योंने जहाँ-तहाँ दिया है तथाउस के गुणोंको घातनेवाले पांच पापोंके त्यागको धर्म कहा गया है क्योंकि अहिंसादि धर्मोंके धारण करनेसे ही हम संसारके दुःखोंसे छूट निजानन्द और परमात्मा-दशाको प्राप्त हो, सच्चे सुखी हो सकते हैं। रत्न-करण्ड-श्रावकाचारमें कहा है कि धर्म वही है

जो नर्क एवं पशु आदि कुगतियोंके असह्य और निकृष्ट दुःखों से निकाल, स्वर्ग-मोक्षके उत्कृष्ट सुखोंको प्राप्त करावे। इसके सिवा आत्माके स्वभावको छोड़ वास्तविक एवं सच्चा धर्म और कुछ है ही नहीं। इसी आत्माके स्वभावकी प्राप्ति कर लेना यथार्थ धर्म पालन है। जिन उपायोंके करनेसे यह जीवात्मा अनादिके कर्मरोगसे निवृत्त होकर रागद्वेष-रूप अशुचिताको छोड़ शुद्ध परमात्मा हो, उन्हीं उपायों—कारणों—का नाम व्यवहार धर्म है। इसीके अनुसार आचरण करना ही हमारा पुरुषार्थ है। इसीलिए यहांपर व्यवहार धर्मका वर्णन किया जाता है, क्योंकि यही व्यवहार धर्म निश्चय धर्मकी उत्पत्तिका कारण है।

इन्द्रियोंकी लम्पटताद्वारा उत्पन्न हुए पंच पापोंकी प्रवृत्ति तथा क्रोधादि चारों कषायोंकी उत्पत्तिको रोकनेवाला यह व्यवहार धर्म ही है जो मुनिव्रत तथा श्रावक व्रतके भेदसे पालन किया जाता है। मुनिधर्म चारित्र रूपमें १३ प्रकारका है। पंच महाव्रत, पंच समिति और तीन गुप्ति। पुनः श्रावक व्रत द्वादश भेदरूप है। पंच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। ग्यारह प्रतिमारूप भी श्रावकधर्म है। इस स्थानपर श्रावक तथा मुनिव्रतका व्याख्यान करनेसे लेख बहुत बढ़नेके सिवाय इष्ट प्रयोजनकी हानि होना संभव है, इसलिए इस विषयको यहीं समाप्त कर आगे चलते हैं। जिनको इसका

पूरा स्वरूप आदि मालूम करना हो वे मूलाचार आदि-आचार शास्त्रोंसे ज्ञात करें।

निश्चय रहे कि जो पुरुष श्रावक-व्रतकी ११ प्रतिमाओं का भलीभाँति पालन नहीं कर सकता वह मुनिव्रत धारण करने योग्य कदापि नहीं है। इसी प्रकार व्रत पालनेकी योग्यता तभी हो सकती है जब पहिले मिथ्यात्व[1], अन्याय[2] और अभक्ष्यों[3] का त्याग किया जाय। जो स्त्री व पुरुष इन महान पापोंका सेवन करता हुआ भी अपनेको व्रती श्रावक कहता है, वह मानो अक्षर-शून्य पुरुषोंको पंडित बताता है, अतएव जो स्त्री व पुरुष सच्चे सुखको चाहते हैं, उनको ये तीनों दोष सर्वथा त्यागने योग्य हैं।

वर्तमान कालमें गृहस्थाश्रमकी अवस्थाको देख खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि इस विकराल पंचम कालके पापमय समय में, यह तीनों दोष जैन जातिमें दिन-पर-दिन बढ़ते ही चले जा रहे है और गृहस्थोंका क्रियाकाण्ड इतना बिगड़ता चला जा रहा है कि जिसका वर्णन करते 'अपनी जांघ उघारिये, आप हिं मरिये लाज' की कहावत चरितार्थ होती है। यही कारण है कि आजकल मुनियोंका सद्भाव तो दूर रहा, प्रतिमा धारी त्यागी और संयमी पुरुषोंका मिलना भी दुस्तर प्रतीत

---

१. कुदेवादिका पूजना २. सप्तव्यसन सेवन करना। ३. मद्यादिका भक्षण करना।

होता है। शास्त्रोंके पढ़नेसे ज्ञात होता है कि प्राचीन समयमें मुनिगण स्थान-स्थानपर घूमकर उपदेश देते थे जिससे धर्मकी प्रभावना और उन्नति होती थी। उस समयके क्रियाकाण्ड-ज्ञाता गृहस्थोंके यहां उन्हें शुद्ध आहार मिलता था। गृहस्थ लोग जानते थे कि साधु-संयमियोंको आहार कराये बिना स्वतः आहार करना ग्रहस्थधर्मके विरुद्ध है। इसीलिये वे भोजन करने के पहिले द्वाराप्रेक्षण (प्रासुकजलसे भरा हुआ पात्र हाथमें ले द्वारपर खड़े हो अतिथि की राह देखना) करते और जब किसी सुपात्र सज्जन या साधुको आहार दान दे लेते तो अपना अहोभाग्य समझते थे। यदि किसी सुयोग्य श्रावक या साधु-को भोजन देनेका सुयोग न आता तो अपने भाग्यको बहुत ही कोसते और साधुओंके भोजनका समय निकल जानेपर आप भोजन करते थे। उन्हें यह भले प्रकार विदित था कि गृहस्थ का घर षट्कर्मोंकी आरम्भी हिंसाके कारण स्मशानतुल्य है और बिना अतिथि-संविभागके कदापि सफल और शुद्ध नहीं हो सकता।

वर्तमानमें जैनियोंकी खान-पानकी क्रिया इतनी बिगड़ गई है, यदि कर्मयोगसे थोड़ा भी संयमधारी क्रिया-कांडी भोजन करने-वाला किसीके घर आजावे तो उसके भोजन-योग्य सामग्रीका मिलना कठिन हो जाता है। यदि सामग्री भी मिल जाय तो क्रियापूर्वक बनानेवालोंकी न्यूनता कैसे पूरी हो? इस अवस्था

में यदि दो-चार कर्म-कांडी साधर्मी सज्जन किसी स्थानपर पहुँच जायँ तो उन्हें शुद्ध भोजन कैसे मिले ? यही बड़ी कठिनाई है। ऐसे ही अनेक दोषोंसे इस निकृष्ट कालमें साधु-व्रत धारण करना कठिन हो गया है, कोई क्षुल्लक-ऐलकके व्रत धारण करनेका साहस नहीं करता। (खेद)

त्यागी महान पुरुषोंके अभाव होनेसे जैन जातिसे उपदेश उठ गया, जिससे मिथ्यात्व, अन्याय और अभक्ष्य-भक्षणका जोर बढ़ गया। जो पुरुष संसार और शरीरके भोगोंसे ममत्व घटाना चाहते हैं वे शुद्ध खान-पानकी योजना न देख घरहीमें रहकर श्रावक व्रत पालकर सन्तोष करते हैं; क्योंकि धर्मात्माओंको राग-द्वेषको मेटनेवाली, सुबुद्धिको उत्पन्न करनेवाली शुद्ध क्रिया और आहार विधिकी भी आवश्यकता है। मलिन बुद्धि होने और धर्ममें अरुचि होनेका एक कारण शुद्धाचरणकी हीनता है। निर्धनता व मूर्खता होनेका एक कारण विकृत भोजन है। दुःख रोग आदिकी बृद्धि भी खान-पानकी भ्रष्टतासे होती है, ऐसा जान जैनी मात्रको क्रिया-कांड और खान-पानपर लक्ष्य देना चाहिए तथा अपनी हीनताएँ दूर करनी चाहिये, परन्तु समयका प्रवाह और उसकी आवश्यकता भी हमें न भूलनी चाहिये।

रसोई आदिकी क्रिया स्त्रियोंके अधीन है, यदि स्त्रियाँ शिक्षित हों तो रसोई अवश्य ही शुद्ध तैयार हो, तब उन्हें कोई अशुद्धाचरणका उलाहना कैसे दे ? अशिक्षिता स्त्रियाँ

अकेला खान-पान ही क्या, गृहस्थीका प्रत्येक कार्य अविचार पूर्वक करती हैं। एक तो वे मूर्ख और उतावलीं हुआ ही करती हैं, फिर यदि अशिक्षिता भी हों तो कहना ही क्या? वे गृहस्थीका प्रत्येक कार्य-चक्की, चूल्हा, झाड़ना, बुहारना, पानी छानना और ओखलीआदि-को ठीक-ठीक विधिपूर्वक नहीं करतीं, शुद्धता और दयाका भी विशेष विचार नहीं रखतीं।

इसमें उन अकेलीका दोष नहीं है, पुरुषोंकी मूर्खता तो उनसे भी बढ़कर है। पुरुषोंने स्त्रियोंको सन्तानोत्पत्ति करने वाली मशीन समझ रक्खा है, उन्हें सोचना चाहिए कि स्त्रियाँ उनके गृह-संसार रचनेमें विश्वकर्मा हैं और वे तो केवल बाहर-से द्रव्य कमाकर लानेवाले हैं। स्त्रियाँ जैसा शुद्ध-अशुद्ध भोजन पका देती हैं पुरुष उसे ही बड़ी मौजसे खा-पीकर सन्तुष्ट होते हैं फिर स्त्रियोंको क्या पड़ी है, जो नाना प्रकारसे शोध बीन कर धीरता और सावधानीसे रसोई बनावें तथा और-और कार्य भी सावधानी और शुद्धतापूर्वक करें? कभी-कभी तो ऐसा देखा जाता है कि स्त्रियाँ तो शुद्ध-अचारयुक्त होती हैं और अपने रसोई आदि कार्योंको इस प्रकार करती हैं जिसमें हिंसादिक दोष टलें और संयम सधे, क्योंकि या तो वे इसे शास्त्रोंमें पढ़कर जान लेती हैं या विद्वानोंके उपदेशोंमें सुन लेती हैं और विचारती हैं कि यदि हम प्रमाद और अज्ञानतासे हिंसादिक पंच पाप उपार्जन करेंगी तो इसका कड़वा फल हमें ही

भोगना पडेगा। पति तो घरके काम देखने नहीं आते, जो कुछ पाप होगा हमारे सिरपर होगा। इसलिये, वे कर्म-कांड की बड़ी ही अनुकूलता रखती हैं—चूल्हे-चौकेकी शुद्धता, शरीर-वस्त्रादिककी पवित्रता, रसोईकी सामग्रीकी मर्यादा तथा बर्तनादिकी स्वच्छताका ध्यान रख भोजन तैयार करती हैं, परन्तु पुरुषोंका आचार ऐसा भ्रष्ट हो रहा है कि जूता पहिने, बाजारके कपड़ोंसे, दूकानदार या चौकेके बाहिर ही अथवा हलवाईकी दूकानपर ही शुद्ध-अशुद्ध मिठाई या दूसरी सामग्री बड़े प्रेमसे उदर-देवकी भेंट करते हैं। फिर भी ऐसी स्त्रियाँ समाजमें हजार पीछे दो-चार ही होंगी जो शास्त्रानुकूल भोजन बना खिला सकती हों। इसीलिये बहिनोंसे प्रार्थना है कि वे अपनी जिम्मेदारीके कामोंको भले प्रकारसे करें और अपने पतियोंको भी उनसे प्रेम करावें, क्योंकि चूल्हा, चक्की और ओखली आदिके कार्यों में प्रमाद या असावधानी करनेका पाप स्त्रियोंके सिर होता है।

यह तो सभी जानते हैं कि पुण्यका फल सुख और पाप का फल दुःख है। पापोंसे इस जीवनमें ही नाना कष्ट भोगने पड़ते हैं। फिर भविष्यमें नारकी या तिर्यंच होना पड़ता है, जिनमें नाना प्रकारके असह्य कष्ट भोगने होते हैं।

शास्त्रोंका कथन है कि प्रथम तो स्त्रीकी पर्याय ही निन्द्य है जो कुत्सित कर्मों के उदयसे प्राप्त होती है। जिसने पूर्व जन्म

में मिथ्यात्व-सेवन (कुगुरु, कुदेव और कुधर्मका आराधन) किया हो, अभक्ष्य-भक्षण या रात्रि-भोजन किया हो, अनछना पानी पिया हो, या तीव्र मायाचार किया हो, अथवा इन्हीं जैसे खोटे-खोटे कर्म-समूह उपार्जन किये हों उन्हें स्त्री-पर्याय प्राप्त होती हैं।

हरिवंश पुराण जान पड़ता है कि जब नेमिनाथ भगवान अपने विवाहकालमें बरातसहित ससुराल जा रहे थे, तब एक बाड़ेमें बहुतसे पशुओंको घिरे हुये देखकर सारथीसे उनके घेरे जानेका कारण पूछा। सारथीने बताया कि बरातमें आये हुए अनेक माँसाहारी राजाओंके भोजनार्थ ही रोके गये हैं। सारथीः का उत्तर और पशुओंका क्रन्दन सुन भगवानने अवधिज्ञानके द्वारा कृष्णका प्रपंच जाना और तब सोचने लगे—धिक्कार है इस वेश्या जैसी चचल राजलक्ष्मीको और इन रोगसे भोगों को, जिनके कारण महान् पुरुष भी निर्भय हो पापकार्यों में दत्तचित्त हो जाते हैं।

पुनः विवाह कृत्योंको जैसेके तैसे छोड़ कंकड़ आदिको तोड़-मरोड़ गिरनार पर्वतपर जाकर द्वादशानुप्रेक्षाओंका चिन्तवन करने लगे। जब राजुल—राजा उग्रसेनकी पुत्री और श्रीनेमिकी अर्द्ध-परिणीता पत्नीको यह खबर मिली, जो कि अबतक नेमि-जैसे सुयोग्य पतिकी प्राप्तिपर हर्षके मारे विह्वल हो रही थीं—बड़ी ही खेद-खिन्न हुईं और कहने लगीं—हाय! क्षणभरमें

यह क्याका क्या हो गया भगवान ! हायरे ! कर्मोंके विचित्र चरित्र, बलिहारी तेरी ! एक तो स्त्री पर्याय पाई, फिर यह ठीक विवाह ही के समय पति-वियोग और सो भी थोड़े समय को नहीं, जीवन पर्यन्तको । अब क्यों न ऐसा उपाय करूँ जिससे इस संसारके इन्द्रजालसे—इन मीठे-मीठे विषभरे प्रलोभनों से—छूट जाऊँ, एवं संसारके जन्म-मरणसे छुटकारा पाऊँ। यह विचारते ही उन्होंने आर्यिकाके व्रत धारण किये और कालावधि-अन्तमें समाधिमरण कर सोलहवें स्वर्गमें अच्युतेन्द्र हुई ।

जो स्त्रियाँ श्रावककुल, जैन-धर्म और सब प्रकारकी सामग्री पाकरके भी अपना कल्याण नहीं करतीं, किन्तु नित्य सांसारिक रगड़ों-झगड़ोंमें आनन्द मनाया करती हैं, वे मानों अमृत छोड़ विष पीती हैं, उनके लिये 'खांड भरे भुस खात हैं' की कहावत चरितार्थ होती है । जिस प्रकार मूर्ख मनुष्य काग उड़ानेके लिये चिंतामणि रत्नको पत्थर समझ फेंक देता है और फिर दुःखी होता है, ऐसे ही जो स्त्रियाँ कुल और धर्म आदि सारी सामग्री पाकर भी अपना हित नहीं करतीं उसका दुरुपयोग करती हैं वे उस मूर्ख मनुष्य जैसी दुःखी होती हैं, क्योंकि उस सामग्रीका दुरुपयोग दुर्गतिमें ले जाने वाला है, जहां छेदन-भेदन, मारन-ताड़न आदि नाना कष्ट सहने होते हैं, जिनका केवल स्मरण करनेसे ही रोंगटे खड़े हो

जाते हैं और छाती धड़कने लगती है।

हमारी बहिनोंको उचित है कि वे शास्त्रोंका पठन-मनन करें। सुगुरु, सुदेव और सुधर्मसे अटूट प्रीति जोड़ें जिससे उनका कल्याण हो। कुगुरु, कुदेव और कुधर्मका संसर्ग तजें, क्योंकि एक तो पूर्वसंस्कारोंके कारण संसारी जीव यों ही मदोन्मत्त हो रहे हैं फिर कुगुरु आदिका संसर्ग तो उनकी और भी दुर्दशा कर देने वाला है। उनके संसर्गसे तो हमें अपने कल्याण की सुधि रखना भी कठिन है।

अभक्ष्य-भक्षण और अन्यायको छोड़ना भी उचित है। जो स्त्रियाँ मिथ्यात्वको त्याग देती हैं, रसोईकी सामग्री अपने हाथ से शोध, पानी अपने आप छानकर यत्नपूर्वक रसोई करती हैं वे ही गृहस्थारम्भके पापोंसे बचती हैं।

जिस घरमें स्त्री-पुरुष दोनों विवेकी हों वह घर मानों सुखागार—स्वर्ग—है। पति देव और पत्नी देवी हैं, गृह देव-मन्दिर और देश स्वर्ग-लोक है। किन्तु जहाँ इसके विपरीत दोनों अथवा दोनोंमेंसे कोई एक अविवेकी है, वहीं नर्ककी वेदनाएँ हैं, कलह और अप्रेमके कारण वही नर्कस्थान है, उस में रहनेवाले नारकी हैं और यदि नारकी नहीं तो श्वान या बिल्ली जैसे तो जरूर हैं। यदि दम्पतिमेंसे कोई एक मूर्ख है तो दूसरेका आवश्यक कर्तव्य है कि उसे योग्य बनावें, मार्ग पर लावे, उसे शिक्षा देकर या दिलाकर अपना सहयोगी या

सहयोगिनी बनावे।

गृहस्थीरूप गाड़ीके स्त्री-पुरुष दोनों पहियोंका एकसा सुदृढ़, सुन्दर और पूर्णाङ्ग होना आवश्यक है। उनमें समानता होनेपर ही गाड़ी इच्छित स्थानपर पहुँच सकती है। यदि उनमेंसे एक भी कमजोर या अयोग्य हुआ, तो गाड़ीका निश्चित स्थानपर पहुँचना तो दूर रहा, उसका स्थायी रहना भी कठिन है। जो स्त्री-पुरुष पारस्परिक प्रेमसे नहीं रहते वे नर्कसे भी कठिन कष्ट उठाते हैं। वे मनुष्य कभी जीवनका आनन्द नहीं उठा सकते फिर भला परमार्थ तो कर ही कैसे सकते हैं।

इस कारण हमें यही कहना है कि बहिनो! तुम्हारे ही कारण जैन जाति बहुत ही नीची अवस्थामें जा पहुँची है, तुम्हीं उसे ऊपर उठा सकती हो। सीता, द्रौपदी, अञ्जना, मंदोदरी, सत्यभामा, रुक्मणी, ब्राह्मी और सुन्दरी आदि कितनी ही स्त्रियोंके आदर्श तुम्हारे सामने हैं। स्वतः पवित्र बनो, दूसरोंको पवित्र बनाओ, अपने खानपानका विचार रक्खो, दूसरोंसे खानपानका विचार करवाओ, अभक्ष्य-भक्षण, अन्याय, मिथ्यात्व आदिका त्याग करो क्योंकि इनसे लौकिक और पारलौकिक बिगाड़ हो रहा है। किन्तु खेदकी बात है कि जिन बातोंसे तुम्हारा बिगाड़ होता है उन्हींको तुम आनन्दपूर्वक किये जा रही हो, यदि तुम पढ़ी-लिखी होतीं, शास्त्रोंका पठन-

मनन करती होतीं, तो जान लेतीं कि वे स्त्रियाँ जिनकी म सन्तान हो, कैसी गुणवती होती थीं। एक केकईको ही लो और देखो कि जिसने अनेक सुन्दर और श्रीमान् राजाओंके स्वयंवरमें उपस्थित रहनेपर भी दरिद्रके वेष में बैठे हुए महाराज दशरथके कण्ठमेंही वरमाला पहनाई थी, यह उसकी पुरुष-परीक्षा और प्रवीणता नहीं थी तो और क्या थी? फिर अनेक राजाओंसे युद्ध होते हुए, अपनी रथ हाँकनेकी चतुराई से महाराज दशरथको बचा लेना उसकी युद्ध-विद्याकी विशारदता का परिचायक नहीं था तो क्या था? यदि रानी मंदोदरी धर्मात्मा और विवेकिनी न होतीं तो रावणको अन्याय कार्यसे बचनेकी शिक्षा कैसे देती? यदि सती अंजना, ज्ञानवती और धर्मात्मा न होती तो ठीक विवाह के समयमें ही २२ वर्ष तक अपने पतिद्वारा तिरस्कार पानेपर भी उसीमें अनुरक्त कैसे रह सकती थी।

साढ़े चौबीस सौ वर्ष बीते हैं जब कि राजा श्रेणिककी रानी चेलना अपने बौद्ध पति राजा श्रेणिकको जैनी बनाकर उन्हें सुमार्गपर लाई थी। यदि चेलना धर्मज्ञ और विद्यावती न होती तो कैसे इस कठिन कार्यको कर सकती थी?

स्त्रियोंको शास्त्रमें कहे तथा किंचित् ऊपर कहे सद्गुणों को धारणकर विद्यावती बनकर आर्याओंके मार्गपर चलकर इस लोकमें सुयश और परलोकमें शुभ-गति प्राप्त करनी चाहिए।

स्त्री-शिक्षा

जब लड़के औ' लड़कियाँ, हो शिक्षित भरपूर।
देश जाति औ' धर्मकी, रहें न उन्नति दूर॥

प्रकट रहे कि बालकोंके समान कन्याओंको भी बाल्यावस्थासे ही शिक्षा देना (पढ़ाना और गृहकार्योंका अभ्यास कराना) माता-पिताका परम कर्तव्य है। मातृभाषाकी शिक्षा तो देनी ही चाहिए इसके सिवाय राष्ट्रभाषा हिन्दी व अन्तर्राष्ट्रीयभाषा अंग्रेजी आदिकी शिक्षा देना भी आवश्यक है। राष्ट्रभाषा हिन्दी कितनी सरल है इसे बतानेकी आवश्यकता नहीं। पर अधिकांश जैनग्रन्थोंका अनुवाद हिन्दीमें है इसलिए ही हमारी जैन बहिनोंको इतनी हिन्दी सीखनेकी आवश्यकता है, जितनीसे शास्त्रोंका पूरा-पूरा अर्थ समझमें आजाए, कोई भाव छूटने न पाए। हिन्दीका साधारण अच्छा अभ्यास गुजराती और मराठी बहिनोंको ६ महीनेमें हो सकता है।

जो स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी होती हैं वे अपना जीवन आनन्द से बिता सकती हैं, सन्तान को उत्तम और गुणवान बनाकर देश, जाति और धर्मको उन्नति कर सकती हैं। उसी प्रकार बालकोंके कोमल हृदय बाल्यकालमें मनमाने साँचेमें ढल सकते हैं और उनके स्वभावका ढालना माताकी बुद्धिमत्ता व शिक्षा पर अवलम्बित है। बच्चोंका अधिक समय माताके पासही बीतता है। माताके स्वभाव, धर्म, कर्म, बातचीत और इच्छाएं

आदि बच्चेपर वह प्रभाव डालती हैं जो हजार गुरुओंकी शिक्षा भी नहीं डाल सकती। पिताकी शिक्षा भी काम करती है पर बहुत थोड़ा। गुरु बेचारेको बच्चा उस समय मिलता है जब उसमें उसके भावी जीवनकी भलाइयाँ और बुराइयाँ जड़ पकड़ लेती हैं। माताकी शिक्षाएँ बच्चेपरसे उसके जीवनभर अपना प्रभाव नहीं हटातीं। नैपोलियनकी माताने उसे अपनी इच्छासे ऐसा अदम्य वीर बनाया था। शिवाजीकी माताने अपनी ही शिक्षासे शिवाजीको इस योग्य बनाया था कि वे एक साधारण जागीरदारसे महाराजा कहलाए। अकेले शिवाजी या नैपोलियन ही की बात नहीं है, सैकड़ों और हजारों उदाहरण ऐसे हैं कि जिनमें माताने अपनी इच्छानुसार ही अपनी सन्तति को बना दिया है। सारांश यह कि शूर, क्रूर, विद्वान् और मूर्ख जैसा भी चाहे माता अपनी सन्ततिको गढ़ सकती है।

विद्याके सिवाय लड़कियोंको गृहस्थीके काम-धन्धोंकी शिक्षा बड़ी ही जरूरी है और यह शिक्षा माता बड़ी ही सरलता पूर्वक दे सकती है। ऐसा न समझना चाहिए कि गृहस्थीके काम-धन्धोंकी शिक्षाकी क्या आवश्यकता है? वे तो अपने आप आते रहते हैं, यह बात नहीं है। स्वयं आनेपर भी यदि किसी सुव्यवस्थित पद्धतिसे सिखलाया जाता रहे तो बड़ा ही अच्छा हो, क्योंकि अशिक्षित किसी भी कार्यको शीघ्र ही बिगाड़ देते हैं। व्यवहारिक कार्योंको सावधानी-पूर्वक पापोंसे

बचाते हुए करते जाना भी एक कठिन कार्य है और इसलिए उसकी शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। जो लड़कियाँ छुटपनमें रसोई आदि गृहकार्य नहीं सीखतीं हैं वे ससुरालमें जाकर तिरस्कृत होती हैं, कारण यह कि एक तो काम करनेका अभ्यास न होनेसे वह बोझसा प्रतीत होता है और आलस्य आता है। दूसरे—काम सीखा हुआ न होनेसे बिगड़ जाता है, तब तिरस्कार आदि सहना पड़ता है।

कई धनिकोंकी बहू-बेटियाँ सोचती होंगी और सोच सकती हैं कि जब हमें ये काम करने ही नहीं पड़ते अथवा करने ही नहीं पड़ेंगे तब फिर इनके सीखनेकी क्या आवश्यकता है? पर उन्हें सोचना चाहिए कि लक्ष्मी चंचला है—बादलकी परछाँई है, आज है कल नहीं। दुर्भाग्य न करे उन्हें ऐसा दिन देखना पड़े, पर लोगोंको ऐसे दिन जरूर देखने पड़े हैं। क्या आश्चर्य कि उन्हें भी इस दुःख-पूर्ण भाग्यचक्रमें पड़ना पड़े, फिर उस समय वे क्या करेंगी?

जिसने निठल्ला बैठना सीखा हो उसकी इस संकटमय अवस्था में क्या दशा होगी? या तो भूखों मरना पड़ेगा या भीख माँगनी पड़ेगी। इसलिए हमारा कहना है कि खूब पढ़ो और खूब गृहस्थीके काम-धाम सीखो। हमारे कहनेका कुछ यह आशय नहीं है कि धनिक होनेपर भी तुम्हीं मजदूरके माफिक काम करती फिरो और नौकर चाकर मत रक्खो, परन्तु

जैसी तुम्हारी अवस्था हो वैसा काम करो, पर काम करनेका अभ्यास हमेशा रक्खो। यदि पुण्यकर्मके उदयसे संपत्ति पाई है तो नौकर चाकरोंसे यत्नाचारपूर्वक काम लो, उनपर अच्छी देखरेख रक्खो। अपने अवकाशके समयको स्वाध्याय या लिखने पढ़नेमें लगाओ। जो स्त्री आप कुछ काम नहीं करती और न करनेकी उत्तम रीति जानती है वह नौकर-चाकरोंमेंसे भी भले काम नहीं ले सकती।

नौकर-चाकरोंमेंसे बहुत कम ऐसे होंगे जो अपने मनसे पूरा और अच्छा काम करें। उनपर देखरेख रखनेकी बड़ी आवश्यकता है। जो स्त्रियाँ रसोईकी क्रियामें निपुण हैं वे कुटुम्बियोंकी प्रकृति, देश और कालके अनुसार सदा शुद्ध रसोई करती हैं, जिससे कुटुम्बके लोग सदा निरोगी और सुखी रहते हैं। जो स्त्रियाँ पाक-क्रियामें प्रवीण हैं, और प्रत्येक व्यञ्जन नियमानुसार बनाना जानती हैं, वे मानो भोजन नहीं, एक पुष्टकारी औषधि खिलाकर कुटुम्बका पोषण करती हैं, इसीलिए भोजनके सम्बन्धसे कवियोंने स्त्रियोंको माता तककी उपमा दे डाली है। सच है, गुण ही सर्वत्र पूजा जाता है।

माता-पिताका कर्तव्य पुत्रियोंको लिखना-पढ़ना सिखाकर अथवा खाना बनाना सिखाकर ही पूर्ण नहीं हो जाता, किन्तु इन्हें शिल्प और हस्त-कला आदिके सिखानेकी भी बड़ी आव-

श्यकता है। जिन स्त्रियोंको सीना*-पिरौना तथा कसीदा आदि काढ़ना आता है, वे मनमाना कपड़ा तैयार करके आप पहिनतीं और अपने कुटुम्बियोंको पहिनाती हैं। प्रत्येक स्त्रीको अङ्गरखा, पायजामा, कुरता, कोट, चोगा, घाँघरा एवं चोली आदि कपड़ों की छांट, सीना व कसीदा काढ़ना, बेलबूटे बनाना, इजारबंद गूँथना, गुलूबन्द, मोजा बनाना और गोखरू मोड़ना आदि कार्य अवश्यममेव सीख लेने चाहिये।

बचपनसे इन शिल्पकार्यों ×का अभ्यास हो जानेसे आगे बहुत लाभ और सुखकी प्राप्ति हो सकती है। जो स्त्रियाँ अज्ञानतावश शिल्पकारी नहीं सीखती उन्हें वक्त पड़नेपर पिसाई, पानी-भराई व कताई करके बड़ी कठिनाईसे अपना जीवन-निर्वाह करना पड़ता है। प्रत्येक स्त्री हस्तकलाके काम सीख कर रुपया आठ आनाका रोजका काम कर सकती है और अपनी गृहस्थीका निर्वाह आनन्दपूर्वक कर सकती है। इसलिये द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार सब काम सीख लेना चाहिये ताकि वक्त पड़नेपर कोई काम न रुका रहे और पराधीनता न भोगनी पड़े।

जो सुशीला और भाग्यवती कन्याएँ बाल्यावस्थामें खेल-कूद छोड़ अपने योग्य कामोंका अभ्यास करती हैं, उनके भविष्य-सुखमें कुछ कमी नहीं। अवकाश मिलते ही वे किसी

*सूत में तोत-मूंगा आदि पिरोकर जाली, पंखा आदि बनाना।
× कारीगरी

न किसी काममें लग जाती हैं। काममें लगे रहनेके कारण उनका शरीर फुर्तीला और निरोग बना रहता है।

कन्याओंको लड़कोंकी भाँति ही नहीं, किन्तु उनसे बहुत ज्यादा अपने माता-पितादि गुरुजनोंकी आज्ञा पालनी चाहिये। जो पुरुष लाड़-चावमें पड़कर लड़कियोंको मूर्ख रहने देते हैं-उन्हें पढ़ाते-लिखाते नहीं और केवल खेलने देते हैं, वे तो जो कष्ट उठाते हैं सो उठाते ही हैं, पर उन बाल-बच्चोंके लिये मानो जन्मभर तक दुःखी बना देते हैं—मूर्ख, ढीठ और खिलाड़ी लड़कियाँ जीवनभर कभी सुखी नहीं हो सकतीं।

कन्याओंको उचित है कि वे अपने माता-पिता, सास-ससुर, पति और गुरुजनोंकी आज्ञामें चलें—उनकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम न करें और उन कामोंसे सदा दूर रहें, जिनसे उनकी तथा गुरुजनोंकी निन्दा हो। प्यारी कन्याओ! तुम कभी बुरे आचरणवाली, हठीली, झगड़ालू, आलसी और खराब प्रकृतिकी लड़कियोंके साथ हेल-मेल तथा और भी किसी प्रकारका संसर्ग मत करो; क्योंकि इससे बुद्धि बिगड़ जाती है। नीतिकारोंने भी कहा है कि—

संगत कीजे साधुकी, हरै औरकी व्याधि।
संगति तजिये नीचकी, आठों पहर उपाधि ॥१॥

इसीलिये नीतिशास्त्रमें गुणवानकी संगति करना श्रेष्ठ कहा गया है—

जाड्यं धियो हरति सिंचति वाचि सत्यं ।
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ॥
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं ।
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ॥१॥

अर्थ—जिस सत्संगतिके प्रतापसे बुद्धिकी जड़ता नष्ट हो जाती है, सन्मानकी वृद्धि होती है, पाप दूर होकर चित्त प्रसन्न रहता है और दशों दिशाओंमें कीर्ति फैलती है उस सत्संगकी महिमा कहाँ तक कही जाय अतएव पुत्रियों को चाहिये कि प्रातःकाल उठें, फिर स्नानादि क्रियाओंसे निश्चिन्त हो देवदर्शन और स्वाध्याय आदिमें संलग्न होवें पीछे रसोई आदि करें। अवकाश मिलनेपर सुशील बहू-बेटियों में बैठकर वार्तालापका ढंग और चतुराईके काम सीखनेमें समय वितावें। जो स्त्रियाँ अथवा लड़कियाँ कुसंगतिमें पड़ जाती हैं, उनको पीछे बहुत कड़वे फल भोगने पड़ते हैं। जहाँ-कहीं कुसंगतिका प्रभाव पड़ा और स्त्रियाँ निर्लज्ज हुईं फिर उन्हें क्या कुटुम्बियों और क्या सम्बन्धियों सभीकी दुतकार सहनी पड़ती है—पशुओं जैसा कष्टमय तथा निरादरपूर्ण जीवन बिताना पड़ता है।

प्यारी बहिनो! तुम अपने हानि-लाभका विचार सदैव किया करो। नित्य आगे-पीछेकी बातें सोचा करो। विचार करो कि तुम्हारे जीवनका उद्देश्य क्या है? कभी बुरी संगति

में मत पड़ो, और गृहस्थीके छोटे-बड़े सभी कामोंका अभ्यास करती रहो, जिससे तुम्हें कभी शोक करनेका मौका न आवे।

ऊपर कही हुई बातोंके सिवाय बालिकाओंको बालकों की ही भाँति धार्मिक-शिक्षण देना आवश्यक है। उन्हें बचपनसे ही मातृभाषा समझनेके साथ ही साथ पंच नमस्कारमन्त्र, दर्शन, मंगल, पूजन और पद-विनती आदि अनेक पाठ तथा लोक नीतिकी शिक्षा देनी उचित है, जिसके अनुसार चलकर वे दोनों कुलोंकी कीर्ति फैलावें। किसी प्रकारके कुमार्गोंमें पग न बढ़ावें।

लोकोक्ति है कि 'पुत्री पराये घरका धन है' अर्थात् कन्या का पालन-पोषण तो माता-पिता करते हैं, परन्तु विवाह हो जानेपर उसे कुल-लक्ष्मी बनकर रहना पड़ता है और यह ठीक भी है—सुसरालसे ऐसा बर्ताव करना चाहिए कि जिससे माता-पिता आदि पीहरवालोंकी प्रशंसा हो।

जब तक पुत्रीका विवाह नहीं होता, माता-पिता उसके अधिकारी हैं, किन्तु भांवर पड़ते ही पति और पतिके माता-पिता उस वहू-नाम-धारिणी कन्याके अधिकारी हो जाते हैं। माता-पिता या भाई आदिका कर्त्तव्य है कि वे किसी योग्य सुन्दर, सर्वांवयव, बलवान, विद्वान, कुलीन और समुचित वयवाले वरके ही साथ कन्याका सम्बन्ध करें। मूर्ख, वृद्ध, बाल, रोगी, व्यसनी अथवा नपुंसक आदि वरोंके साथ कन्या

का सम्बन्ध कर देनेवाले व्यक्तियोंके समान अधर्मी नर-पशु दूसरा नहीं है, फिर चाहे यह विरुद्ध सम्बन्ध पैसेकी लालच से किया जाय अथवा किसी दूसरे कारणसे।

जो निर्बोध बच्ची तुम्हे अपना जानती है, तुम्हारी आज्ञाओंका पालन करती है, प्रत्येक कष्टमें तुमसे आश्वासन और सहृदयतापूर्ण सहायता पानेकी आशा रखती है एवं तुम पर अपना सारा विश्वास रखती है, हाय! क्या वह भोली बच्ची तुम्हारे ही द्वारा दुःख-सागरमें ढकेल दी जाएगी? अयोग्य पतिके गलेमें बांध दी जायगी? हाय हाय! यदि ऐसा हुआ तो कहना होगा कि तुममें मनुष्यत्व नहीं, तुम मनुष्य वर्गमें रहने योग्य नहीं। जाओ, जंगलमें जाओ और सिंह, भालुओंके साथ रहो—मनुष्य कहलानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।

थोड़े विचारकी बात है कि ऐसा आत्मा जो तुम्हारे ही जैसा सुखाभिलाषी है, तुम्हारे ही जैसा दुःखोंसे भयभीत होता है, एक ऐसी व्यक्ति जो तुम्हें पिता-माता, भाई आदि स्वर्गीय शब्दोंसे सम्बोधित करती है, जो तुम्हारी ही प्रतिकृति है, जो तुम्हारे ही कलेजेका टुकड़ा है, उसे हे भाइयो और भतीजो! हे नृशंस माता-पिताओ! एक बूढ़ेके गले मढ़ते हो? तुमपर आसमान नहीं फट पड़ता? उसे ही एक रोगी या नपुंसकके हाथ सौंपते समय तुमपर बिजली नहीं गिरती? एक अयोग्य

या मूर्खकी जीवन-संगिनी बनानेमें तुम्हें लज्जा नहीं आती ? धिक्कार है इस लोभको, धिक्कार है इन चंचल चाँदीके टुकड़ोंको और धिक्कार है इस पैसेके सुखको। जातिके नेताओ! अपनी जीभको वशमें करो, लड्डुओंका मोह छोड़ो इस गुड़ियों के खेलको, इस बकरियोंकी बिक्रीको बन्द करो। बहुत हुआ, ज्यादा पाप न कमाओ। कन्याएं तुम्हारे ही जैसी सैनी जीव हैं, उनके हृदय है, उन्हें सुख-दुःखका ज्ञान होता है। उन्हें आह होती है! और आहमें अचूक असर होता है।

तुलसीदासजीने एक स्थानपर कहा है:—

तुलसी हाय गरीबकी, कबहूँ न निष्फल जाय।
मुए चामकी आहतैं, लोह भस्म ह्वै जाय॥

खूब स्मरण रक्खो, कि किसी दूसरेको कष्टमें डालके तुम कभी सुखी नहीं हो सकते। तुम ऊपरसे सुखी चाहे भले ही दिखो, पर तुम्हारा हृदय दुःखाग्निमें निरन्तर जलता रहेगा— कभी शांत न होगा।

योग्य धार्मिक रीतिसे विवाही हुई वधू-संज्ञक,कन्या अपने पतिकी अनुगामिनी होकर रहे। सास-ससुर, जेठ-जेठानी और देवर-देवरानी आदिसे प्रेम और नम्रताका बर्ताव करे। आवश्यक सम्हाल भी करे, सबकी उचित लाज भी रक्खे जो आवश्यक है। कभी कारण होनेपर भी कलह न करे। यदि अनुचित बर्ताव भी होवे तो उसे शांतिसे सहन करे और

अपनी चतुराई, नम्रता या व्यवहार-कुशलतासे उस कलहके कारणको ही मिटादे। यह थोड़ा-सा गृह-कलह क्या-क्या खेल दिखलाता है, सो हमारे शास्त्रोंमें खूब वर्णित है। जिस घरमें लड़ाई-झगड़े हुआ करते हैं, वहाँ से सारी रिद्धि-सिद्धियाँ चल बसती हैं। तुलसीदासजीने एक स्थानमें कहा हैं—'जहाँ सुमति तहँ संपति नाना, जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना।' इसके सैकड़ों दृष्टांत प्रत्यक्ष देखनेमें आते हैं, विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं है।

स्त्रियोंका पातिव्रत्य धर्म पालन करना पहिला और सर्व श्रेष्ठ कर्तव्य है पतिव्रता स्त्रियोंकी कीर्तिसे ही आजतक भारत नैतिक आदर्शोंमें सबसे आगे है। जैसे मोतीका-पानी-आब के कारण—मूल्य है वैसे ही स्त्रीका—पतिव्रत-धर्मरूपी पानीके कारण मूल्य है। यद्यपि सती पतिव्रताओंको अपने इस उज्ज्वल धर्म की, इस अनोखे रत्नकी रक्षाके निमित्त बड़े-बड़े कष्ट सहने पड़े हैं; पर धन्य है उन देवियोंको कि जिनने सब सहा, पर अपने पतिव्रत धर्मको नहीं छोड़ा।

सीताने अपने इसी धर्मकी रक्षाके लिए कठिन वनमें जाना स्वीकार किया, रावणके बन्दी-गृहके कष्टोंको भी न समझा और अन्तमें उसी पतिव्रतधर्मकी परीक्षा-निमित्त अग्निकुण्डमें प्रवेश किया। पर वाहरे शीलधर्म! तू भी क्या वस्तु है कि देवोंने उस अग्निको सरोवर बनाके सीतादेवीका यश चिरकाल

के लिए भ्रुकर दिया। क्या सीता जैसी सतियां संसारमें पुनः पैदा हो सकती है ? क्या वर्तमान कालकी स्त्रियोंमेंसे कोई अपनी छातीपर हाथ रखके यह कह सकती है कि यदि कर्मयोगसे उसपर सीता ही जैसी विपत्ति पड़े तो वह अपने शीलधर्मपर आंच न आने देगी।

मैनासुन्दरी जैसी परम पतिव्रता स्त्री सराहने योग्य है, जिसने अपने कोढ़ी पति श्रीपाल और उनके ७०० अंग-रक्षक योद्धाओंका अपने मनोयोग और अपनी अप्रतिम सेवा-शुश्रूषा से कुष्ट रोग दूर किया था। सती अंजनाने भी २२ वर्ष तक अपने पतिद्वारा घोर तिरस्कार और कष्ट पाया, पर अपना स्नेह और धर्म जहाँका तहाँ अटल रक्खा। अन्तमें अपनी इस कठिन तपस्याका फल पति-प्रेमके रूपमें पाया था।

कुलवती नामक एक सतीने पतिकी आज्ञासे अपना सारा जेवर पिताके यहाँ रख दिया और अनेक कष्टदायक सुदूर विदेशमें अपने पतिके साथ चली गई। आज तो कुछ विचित्र ही अवस्था है। स्त्रियाँ सब कुछ छोड़ सकती हैं पर जेवर नहीं छोड़ सकतीं। अनेक स्त्रियाँ तो अपने पतियोंको गहनोंके हेतु ऐसा तंग करती हैं कि जिसकी सीमा नहीं। फिर यह भी आशा नहीं है कि वे किसी भारी कठिनाई पड़नेपर उस जेवरका सदुपयोग करने देंगी। पति कैसीही आपत्तिमें क्यों न फँसा हो, उसके प्राण ही क्यों न जाते हों, परन्तु श्रीमती

जी अपना गहना न देंगी। उनकी इस मूर्खतापर हम क्या कहें?

जो स्त्रियाँ पतिकी अपेक्षा जेवरसे अधिक प्रेम करती हैं उन्हें हरिश्चन्द्रकी रानी शैव्या-तारा-के इस जीवन-चरित्रसे शिक्षा लेनी चाहिये, जिसने अपने पतिका सत्य-व्रत रखनेको राज्य छोड़ा और पराई चाकरी की। फिर आभूषणोंकी तो पूँछ ही क्या थी? पतिव्रता रानी चेलनाके समान कितनी स्त्रियाँ बुद्धिमती होंगी कि जिसने अपने बौद्ध पति राजा श्रेणिकको जैनी बनाया और उन्हें आत्म-कल्याणके सन्मुख किया।

शीलव्रतके प्रभावसे सुखानन्दकुमारकी स्त्री मनोरमाकी देवोंने रक्षाकी। इसी प्रकारकी अनेकों पतिव्रताओंके चरित्र शास्त्रोंमें लिखे हैं। सच है कि स्त्रियोंके सब धर्मोंमें—सब व्रतोंमें और सब कर्तव्योंमें—पातिव्रत्य सर्वश्रेष्ठ है।

पतिके सिवाय अन्य पुरुषोंको उनकी अवस्थानुसार पिता, भाई और पुत्र-सदृश समझकर यथायोग्य बर्ताव करना चाहिये। पातिव्रत्य धर्मकी महिमा शास्त्रोंमें इस प्रकार वर्णन की गई है—

श्लोक—तोयत्यग्निरपि स्रजत्यहिरपि व्याघ्रोपि सारंगति।
व्यालोऽप्यश्वति पर्वतोऽप्युपलति क्ष्वेडोपि पीयूषति।
विघ्नोऽप्युत्सवति प्रियत्यरिरपि क्रीडातडागत्यपाम्।
नाथोऽपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद् ध्रुवम्॥

अर्थ—शीलके प्रभावसे अग्नि जलके समान, सांप पुष्प-

मालाके समान, सिंह मृगके समान, विघ्न उत्सवके समान, शत्रु मित्रके समान, समुद्र छोटे कुण्डके समान और भयंकर वन घरके बगीचेके समान हो जाता है।

शीलकी प्रशंसा कहाँ तक की जाय? जो स्त्रियाँ बाल्य-कालसे ही शीलधर्मकी रक्षा करती हैं उनके गृहमें कभी कोई दुःख आदि नहीं होता; न कोई भूत-प्रेतादिक व्यन्तरोंकी बाधा होती है। पतिव्रताओंकी सन्तान रूपवान, बलवान, धार्मिक और आज्ञाकारिणी होती है। धर्मके और सब अंग बिना शीलके व्यर्थ हैं। कुसंगतिमें रहनेवाली मूर्ख स्त्रियाँ धर्मकी महिमा न समझ अपनी इज्जतमें बट्टा लगाती हैं, वे व्यभिचारिणियाँ मुख देखने योग्य भी नहीं हैं। जो स्त्रियाँ ऐसी स्त्रियोंसे किसी प्रकारका सम्बन्ध रखती हैं उनका चित्त मलिन और कलुषित हो जाता है। व्यभिचारीके जप, तप, तीर्थ, व्रत, पूजा और दानादि सब निष्फल हो जाते हैं, ऐसा विचारकर व्यभिचारको दूरसे ही छोड़ो और शीलव्रत तन-मनसे निरतिचार पालो, जिससे तुम सांसारिक सुखोंके अतिरिक्त मोक्षसुखकी अधिकारिणी होओ।

शीलगुणके साथ ही साथ स्त्रियोंका शान्त-स्वभावी और विनयी होना आवश्यक है। बुद्धिमती स्त्री वही है जो अपने सुस्वभावके कारण सारे कुटुम्बको प्रिय होती है, सबसे प्रिय वचन बोलती तथा सबका आदर करती है, किसीके कटु वचन

सुननेपर भी क्रोध नहीं करती और सदाकाल हँसमुख रहती है जिससे उसकी ही नहीं किन्तु उसके माता-पिताकी भी प्रशंसा होती है। कोई-कोई कर्कशाएँ अपने कुटुम्बसे तथा पतिसे सदा नाराज रहती हैं, कभी भी प्रेमसे नहीं बोलतीं। यदि बोलें भी तो शेरनीकी तरह खानेको दौड़ती हैं; परन्तु अन्य जनोंसे बड़े प्रेमसे बोलती हैं, ये लक्षण कुलटा स्त्रियोंके हैं। कोई-कोई स्त्रियाँ तो ऐसी जड़-बुद्धि होती हैं कि घरकी देवरानी, जेठानी, सास और ननद आदिसे बैर बाँधतीं, बोलतीं तक नहीं, पर दूसरी अयोग्य स्त्रियोंसे बड़ा ही सम्बन्ध रखती हैं, ऐसी स्त्रियोंकी गृहस्थी शीघ्र बरबाद हो जाती है और वे जन्मभर दुःख भोगती हैं। उन्हे चाहिये कि ससुरको पिताके और सासको माताके समान समझें तथा अन्य कुटुम्बीजनोंको को यथोचित आदर, स्नेह और विनयकी दृष्टिसे देखें, सबसे प्यारसे बोलें और उनकी उचित आज्ञाओंको भूलकर भी न टालें।

स्त्रियोंको विचारनेकी बात है कि हमारे पतिके बचपनसे ही सास-ससुर यह बात विचार कर खुश होते हैं कि वह आकर घरका सब काम सम्हालेगी और हमारी सेवा करेगी। इससे उन्होंने तन, मन और धन सम्बन्धी नाना कष्ट भोगकर भी तुम्हारे पतिकी सेवाकी है। उन्हें यही आशा थी कि ये हमारे बुढ़ापेमें काम आवेंगे। अब उनकी गिरती हुई अवस्थामें उन

की सेवा करनेका–उनकी की हुई सेवाका प्रतिफल देनेको अपने कर्तव्य-पालनका अवसर आया है। तुम्हारा सौभाग्य है कि सास ससुर आदि गुरुजनोंके कारण तुम्हारी गृहस्थी सुशोभित हो रही है। सदा हर्षपूर्वक उनकी सेवा करो, जिससे उनका मन किंचित् भी दुःखी न होने पावे। तुमको इतना तो विचारना चाहिए कि तुम्हारे सास, ससुर अपने लड़केको—तुम्हारे पतिको—पालन-पोषण करके हृष्ट-पुष्ट और पढ़ा-लिखा करके गुणवान न करते तो आज तुम अपने पतिका ऐसा सुख कहाँ से भोगतीं ? ऐसे ही अनेक कारण है जिनसे सास-ससुर का तुम्हारे ऊपर बड़ा उपकार है। जो स्त्रियाँ ऐसे परोपकार को भूल जाती हैं और उनकी सेवा टहल नहीं करतीं वे दुष्टाएँ कृतघ्न और निन्दनीय हैं।

जो स्त्रियाँ अपने दुष्ट स्वभावके कारण गुरुजनोंकी सेवा नहीं करतीं, वृद्धावस्थामें उनका निरादर करतीं, कठोर वचन कहतीं, गालियां देतीं, दुतकारतीं और जो देतीं भी तो रूखा-सूखा और बुरा-भला, अथवा रुपये-पैसे, कपड़े-लत्ते आदिसे तंग करती हैं, अति परिश्रमका काम लेतीं, पेटभर खानेको नहीं देतीं वे मूर्खाएं वृद्ध होनेपर अपनी बहू-बेटियोंद्वारा ठीक इसी तरह दुखित और तिरस्कृत होती हैं। संभवः निस्सन्तान होतीं और एक न एक आधि-व्याधिके पाले पड़ी ही रहती हैं। अतएव प्रत्येक बहू-बेटियोंको ऐसा बर्ताव करना चाहिए जिससे

कुटुम्बकी सुख-सम्पत्ति बढ़े। घरमें जैसी कुछ रूढ़ि चल जाती है फिर घरके छोटे-बड़े सब उसीके अनुसार चलने लगते हैं।

इस विषयमें एक कथा इस प्रकार है कि कंचनपुर नामक नगरमें एक कुटुम्ब रहता था। जिसमें धनपाल सेठ, सुभद्रा सेठानी, वसुपाल पुत्र और अविनीता नामक पुत्रवधू थी। एक समय सेठ धनपालने अपनी अति वृद्धावस्था जानकर घरका सब कारोबार अपने पुत्र वसुपालको सौंप दिया और आप शेष आयु निराकुलतासे धर्मध्यान-पूर्वक व्यतीत करनेके लिए उद्यत हुए थोड़े दिनोंके बाद पुत्रवधू अविनीता अपने पतिको सर्वस्वका स्वामी समझ अभिमानमें आगई और मूर्खतासे सास-ससुरका तिरस्कार करने लगी। उन्हें रसोईमेंका बचा-खुचा रूखा-सूखा भोजन देने लगी सो भी मिट्टीके ठीकरोंमें और थोड़ासा। उतनेसे भोजनमें उनका पेट भरेगा कि भूखे रहेंगे इसकी उसे चिन्ता नहीं थी। उनको पहिनने, ओढ़ने और बिछौनेको भी फटे पुराने कपड़े देती थी और नाना प्रकारके तिरस्कार-पूर्ण वचन कहती थी इस प्रकार सेठ-सेठानी अति दुःखित हुए। वसुपाल भी माता-पिताकी कभी सुधि न लेता क्योंकि वह पक्का स्त्री-भक्त था।

देखो तो संसारका स्वार्थ, कि जिन माता-पिताने जन्म दिया, बचपनसे पाला-पोषा और पढ़ा लिखाकर योग्य बनाया, उन्हींके लिये यह व्यवहार, उन्हींकी यह दशा, खेद! कितने

ही पूज्य पुरुषोंका इसी प्रकार पत्नी-सेवक कुपूतोंद्वारा तिरस्कार—अनादर हो चुकी है, हो रही है और होगी। सेठ बेचारेने तो शांतिमय जीवन विताना चाहा था, पर यह सारे संसारकी अशान्ति मानो उसपर टूट आई। भाग्यसे वसुपालको पुत्र-प्राप्ति हुई। पुत्रका नाम रक्खा गया गुणपाल। गुणपाल जब बड़ा हुआ तो श्रीनगरके सेठ जिनदासकी पुत्री विनय-सुन्दरीके साथ विवाहा गया। सेठ जिनदास बड़े धर्मज्ञ और अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ थे। उन्होंने अपनी पुत्री विनयसुन्दरी को लौकिक और धार्मिक दोनों प्रकारकी शिक्षाएं भलीभाँति दिलाई थीं; जिससे उसके गुण अन्य पुत्र-पुत्रियोंके लिये उपमा देने योग्य हो गये थे। जब यह विनयसुन्दरी पतिके घर आई, तो अपनी सास अविनीताका चरित्र देख दङ्ग रह गई, परन्तु करे क्या, प्रथम तो सासूकी विनयका ध्यान दूसरे नवागता होनेके कारण प्रत्येक बातके कहनेमें संकोच।

परन्तु उसे अपने अजिया ससुर—पतिके दादा और अजिया सास—पतिकी दीदी—का दुःख देखकर चैन न पड़ा। वह और सब ही बातोंसे चित्त हटाकर सदैव इस बातके विचारमें दत्तचित्त रहने लगी कि किस उपायसे इनका दुःख दूर करूँ। वह पढ़ी-लिखी और विदुषी थी। आखिर उसने एक युक्ति निकाल ही तो ली—वे ठीकरे जो उन वृद्ध दुखियों के भोजन कर लेनेपर फेंक दिये जाते थे, जोड़ २ कर घरके

एक कोनेमें रखने लगी। एक दिन अविनीताने उन घड़ोंके टुकड़ोंको इकट्ठा देख विनयसुन्दरीसे पूछा—तूने ये क्यों इकट्ठे किये है? उसने विनयपूर्वक उत्तर दिया कि सासूजी! अपने कुलकी रीति तो करनी ही पड़ेगी उसकी यह तैयारी है। आप और ससुरजी भी कभी बूढ़े होंगे तब रूखा-सूखा भोजन परोसनेके लिये इन ठीकरोंकी जरूरत पड़ेगी। इसलिये इन्हें एकत्र कर रही हूं। यह सुनकर अविनीताकी आंखें खुल गईं। उसने उसी घड़ीसे सास-ससुरके खान-पान और पहिनने ओढ़नेका उत्तम प्रबन्ध कर दिया और अपने पतिको भी उनकी सेवा करनेके लिए उत्साहित किया। फिर तो सेठ सेठानी धर्म में तत्पर हुए। सब कर्तव्य विनयसुन्दरीके सद्गुणोंका था, जिसके कारण कुटुम्बमें उत्पन्न हुआ एक महा-कुलक्षण शांत होगया। सेठ सेठानीने सन्तुष्ट होकर विनयसुन्दरीको लौकिक पारलौकिक सुखोंकी प्राप्तिके लिये आशीर्वाद दिया।

स्त्रीको अपने पतिका आज्ञाकारिणी और उसके सुख-दुख की साथिन होना योग्य है, क्योंकि पतिके सुखी रहनेसे ही स्त्रीका जीवन सफल है। जिस प्रकार प्राणियोंके शरीरका मूल भूत जीव है, उसी प्रकार स्त्रीका मूल भूत पति है। पतिके बिना स्त्रीका जीवन वृथा है। इस हेतु पतिको सदैव प्रसन्न रखना स्त्रीका कर्तव्य है। स्त्रीको कभी भी पतिकी आज्ञा भङ्ग नहीं करनी चाहिये। सदैव उसके योग्य सत्कार और

विनयका ध्यान रखना चाहिये। कभी भी पतिको कड़े स्वरसे नहीं बोलना चाहिये। पतिके आसनसे ऊंचे आसनपर भी कभी न बैठना चाहिये। पतिकी नाराजीसे स्त्रीको शांति धारण करना चाहिये, क्योंकि स्त्रीके शांत न रहनेपर कलह बहुत बढ़ जाता है। जब पतिका क्रोध ठंडा पड़ जाय तब नम्रतापूर्वक ठीक-ठीक बात समझाये। यदि अपना अपराध निकले तो पतिसे क्षमा मांगे। जब पति दो-चार मनुष्योंके पास बैठकर बातचीत करता हो, तो किसी वस्तुके लानेकी बात न कहे न कहलावे। यदि किसी वस्तुकी आवश्यकता हो तो उचित समयमें अच्छे ढंगसे कहे और प्रत्येक व्यवहार ऐसी नम्रता और सुशीलतासे करे कि पतिका चित्त प्रसन्न और संतुष्ट रहे। यदि घरमें सुयोग्य गृहिणी हो तो पति बाहरसे कैसा ही खेद खिन्न क्यों न आवे, घर आते ही प्रसन्न हो जायगा।

कोई-कोई मूर्ख स्त्रियां पतिकी भोजन-वेलामें अपने आभूषणोंका प्रस्ताव छेड़ती हैं, कोई किसी वस्त्र बनवानेकेलिये कहती हैं, अथवा देवरानी-जेठानीकी, घी-तेल और अनाजकी तथा न जाने कहां-कहांकी जिक्र छेड़ती हैं, जिससे पति भरपेट खा भी नहीं सकता। इससे या तो उस समय मौन रहना चाहिये अथवा कोई धार्मिक या व्यवहारिक कथा छेड़ना चाहिए। पर इस बातका खूब स्मरण रहे कि उस कथा में शोक, दुःख, चिन्ता व घृणा आदि बिलकुल न हों किन्तु

प्रेम, धर्म, नीति और किंचित् हास्य आदिकी मात्रा हो।

सारांश यह कि भोजन करते कराते समय पति पत्नी खूब प्रसन्न रहें। जो स्त्री अपने पतिके सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखी होती है—उसे प्राणोंसे भी अधिक प्यारा समझ उसकी सेवामें तत्पर रहती है वह कुल-लक्ष्मी है और बड़ी सती एवं पतिव्रता है। यदि पतिको व्यापारमें हानि हुई हो या कोई दैवी आपत्ति आई हो तो स्त्री अपने वस्त्राभूषणोंका मोह छोड़ दे पर यदि उनसे पतिकी कीर्ति रहती हो तो रक्खे—इज्जत बचावे। अपने घरकी बात भूलकर भी बाहिर न कहे। घरमेंसे न देने योग्य ऐसी कोई चीज किसीको न दे अथवा न बेचे, जसपर पति आदि कुटुम्बियोंके रुष्ट होनेकी सम्भावना हो।

सदा अपने गृहस्थी सम्बन्धी हानि-लाभका विचार रखे, क्योंकि पति कैसा ही कमाऊ क्यों न हो, यदि स्त्रियां घरको सम्हालके न चलावें तो बढ़ती नहीं हो सकती। प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है कि खर्च बड़ी ही सावधानी और चतुराईसे करे; सदैव समुचित बचत करती रहे। यदि दुर्भाग्यसे किसी स्त्रीको व्यसनी, आलसी और अधर्मी ऐसा पति मिले तो उसे नैतिक शिक्षा, उपदेश, प्रेरणा आदिसे सुमार्गपर लावे; परलोक व धर्म में रुचि उत्पन्न करनेका उपाय करे। किसीको धर्म मार्गपर लगा देना बड़े ही पुण्य का कार्य है फिर धर्म-मार्गपर लगानेवालोंमें भी इतनी योग्यता होनी चाहिये। गरज यह

कि स्त्रियोंको बचपनसे ही ज्ञान सम्पादन करना चाहिये ताकि समय-समयपर उसकी सहायतासे कठिनाइयोंपर विजय पाती रहें।

स्त्रियोंको साधारण—जितनी कि उन्हें आवश्यक है—वैद्यक विद्या सीखनेकी भी बड़ी आवश्यकता है। यदि इस विषयकी शिक्षा स्त्रियोंने नहीं पाई है तो अपने कर्तव्योंमेंसे एक सबसे बड़ा कर्तव्य-पालन, सच्ची माता होना, बालबच्चों की रोग-चर्य्या और औषधि आदि करना—नहीं कर सकतीं और रोगोंसे अपना भी बचाव नहीं कर सकतीं। इसलिए इस स्थानपर कुछ ध्यान देने योग्य बातें लिखी जाती हैं।

(१)—शरीरमें अधिक तापके लगनेसे हृदय सूख जाता है, जिससे दुर्बलता आदि नाना रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये बाल-बच्चोंका और अपना भी गर्मीसे बचाव करना चाहिये।

(२) सरदी—ज्वर, वात, शरीरमें दर्द और पेटमें पीड़ा इत्यादि रोग सर्दीके दोषसे होते हैं। उष्ण देशके रहनेवालों को बहुधा अधिक सरदी हो जाया करती है। इसका कारण यह है कि वे गर्मीसे व्याकुल हो असमयमें ही शरीरको ठंड लगा देते हैं। अधिक परिश्रम करके आनेपर शीघ्र ही कपड़े उतार डालना; अथवा जल पी लेना, ओस पड़नेकी जगह सोना, सोते समय अधिक ठंड लगने देना, वर्षाकालमें शरीर पर हवा लगने देना, ठंडमें कपड़ोंको कम पहिनना और शीत

ऋतुमें ठंडे जलमें देर तक नहाते रहना आदि बातोंसे सरदी हो जाया करती है। कभी-कभी इस सर्दीसे ही प्राणघातक रोग हो जाते हैं अतएव इससे बचनेका सदा ध्यान रखना चाहिए।

(३) पीने का जल—जीवन धारण करनेके लिये जल एक मुख्य पदार्थ है। बहती हुई नदी और अधिकतर गहरे कुओंका पानी साफ होता है। जलको सदा छानकर पीना चाहिये; जिससे कूड़ा-कचरा और जीव-जन्तु आदि पीनेमें न आवें। जलके पात्रोंको सदा ढके रक्खो। पाखानेसे आकर कभी पानी मत पियो। भोजन करते समय भी अपनी प्रकृति के अनुसार पानी पीना चाहिये, जिससे कि पाचनक्रिया अच्छी हो। निराहार या खड़े-खड़े पानी पीने, एवं धूपमेंसे आकर एकदम पानी पी लेने आदिसे तिल्ली (प्लीहा) बढ़ जानेका डर रहता है और दूसरे संघातिक रोगोंके भी हो जानेका भय रहता है, इसलिये पानीकी अशुद्धता और दुरुपयोगसे बचना चाहिये।

(४) भोजन—यह मनुष्य-जीवन का आधार है, अतः इसपर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है। भोजनका स्थान साफ हो, छतमें कीड़े-मकोड़ोंसे बचावके लिये एक कपड़ा बंधा हो, प्रकाश और वायुके लिए पूरा-पूरा प्रबंध हो। सामग्री प्रकृति और ऋतुके अनुसार ताजी हो। भोजन करने

के पीछे ही नहा लेना मंदाग्नि-रोगको उत्पन्न करता है। भोजन करते ही काममें लग जाना भी हानिकारक है। भोजनके पीछे किंचित् विश्राम लेना—दाएँ-बाएँ करवटसे लेटना—चाहिये, परन्तु यह विश्राम पन्द्रह बीस मिनिटसे अधिक न हो अथवा नींदके रूपमें भी न हो। फिर परिश्रममें लगना चाहिए। कच्चा और बासा भोजन करनेसे पाचनशक्ति घटती है और उदरके रोग पैदा होते हैं, बुद्धि भी न्यून हो जाती है। भोजन उतना ही बनाना चाहिए जितना आवश्यक हो और बासा न बचे।

(५) वायु—प्रत्येक मकानमें वायु और प्रकाशका पूरा प्रबन्ध हो। पाखाना (टट्टी घर) सोने और खानेके घरसे दूर हो तथा उसके झाड़ने आदिका पूरा प्रबन्ध हो। गोशाला भी हमारे शयन-गृहसे जुदी हो। सोनेके घरमें ज्यादा और व्यर्थका सामान नहीं रहना चाहिये। घरके आसपास कोई ऐसी मैली नली या गली कूचा न होना चाहिये जो मैला रहता हो। मकान प्रतिदिन पूरा झाड़ा पोंछा जाना चाहिये। खिड़कियोंका भी यथोचित प्रबन्ध रहना चाहिए।

(६) निद्रा—दिनभरके परिश्रमकी थकावटको दूर करने के लिये विश्राम लेना आवश्यक है और वह बात निद्रासे भलीभाँति पूर्ण हो जाती है। यथोचित निद्रा आनेसे बहुतसे रोग नहीं होने पाते। रातमें बहुत जागने या भलीभाँति निद्रा

न लेनेसे शरीर अकड़ने लगता है, देह टूटती और आलस्य आता है तथा काम करनेमें जी भी नहीं लगता; अतः योग्य रीतिसे निद्रा लेना जरूरी है। सीले स्थानमें अथवा बिना कुछ ओढ़े सोना हानिकारक है। पौ फटनेके पहिले ही शय्या त्याग देना आरोग्यप्रद है।

(७) व्यायाम-कसरत—अंगप्रत्यंगोंको चलाये बिना शरीर में फुर्ती नहीं आती। बच्चोंको भी भले प्रकार कुदकने और खेलने देना चाहिए; यही उनका व्यायाम है। दिन-रात उन्हें गोदीमें लिए रहना जान-बूझकर बीमार बनाना है। स्त्रियोंको पुरुषोंकी नाईं दण्ड पेलना और बैठकें लगानीं आवश्यक नहीं है, किन्तु घरका झाड़ना, बुहारना, पानी भरना, कपड़े छाँटना (धोना) और पीसना आदि ही उनका व्यायाम है। जो स्त्रियाँ गृहके इन कामोंसे बचती रहती हैं वे ही प्रायः अधिक रोगी हुआ करती हैं और थोड़े समय जीती हैं। काम-धाम करनेवाली स्त्रियाँ नीरोग रहती हैं, इसलिए उन्हें इस जीवनमें सुख मिलता है, परलोकको भी नीरोग रहनेके कारण वे सुख की कमाई कर सकती हैं।

कुछ साधारण और शीघ्र हो जाने वाले रोग और उनकी औषधियां भी जान लेना स्त्रियोंको जरूरी है। बचपनमें बच्चों को दांत, ज्वर और खांसी आदि हो जाया करते हैं तथा यदि उपाय न किया जाय तो बड़े रोगोंमें बदल जाते हैं। मूर्ख माताएँ

भूत-प्रेत या नजर आदिके भ्रममें पड़, कभी-कभी अपने बच्चों से हाथ धो बैठती हैं। कुछ रोगोंकी पहिचान और उनकी औषधियाँ नीचे लिखी जाती हैं—

सॉँसकी पहिचान—जब साँस लेते समय बालककी नाकसे सुर जल्दी-जल्दी चलकर फैलता हो तो जान लो कि उसकी छातीमें दर्द है। छातीमें दर्द होनेसे आँखें पथराने लगती हैं, साँस लेनेमें पीड़ा होती और पेट फूल जाता है। होंठ पीले पड़ जाते तथा मुँह लाल और सफेद पड़ जाता है। ऐसी अवस्थामें घबराना नहीं चाहिए, किन्तु योग्य वैद्य, डाक्टर या हकीमसे इलाज कराना चाहिये।

आँखोंकी पहिचान—जब शरीरकी हालत अच्छी होती है तो आँखें साफ रहती हैं। जब चेहरा म्लान या आँखें मैली रहें तो जानना चाहिये कि बच्चेके सिरमें बीमारी होने वाली है।

नींदका न आना—जब बालकको ठीक-ठीक नींद न आवे, तब जानना चाहिए कि उसका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ है। इसी प्रकार जब बालक मामूलीसे ज्यादा रोवे, तो जानना चाहिए कि बालक बीमार पड़नेवाला है।

खाँसी—बालकको जब सरदी होती है तब वह बारबार खाँसता है और उसकी आवाज बैठ जाती है। खाँसनेसे कभी कभी पसली भी चल निकलती है।

माता या चेचक—बच्चोंको चेचक निकलनेके पहले टीका लगाना आवश्यक है।

जो लोग लाड़-प्यार या मूर्खतासे टीका नहीं लगवाते वे पीछे पछताते हैं। माता निकलनेके दो-तीन दिन पहिलेसे ज्वर आता है, दिलपर घबराहट और बेहोशी होती है, तीसरे दिन बदन लाल पड़ जाता है और माथेपर खसखस जैसे छोटे-छोटे दाने (फुंसियां) दिखाई देते हैं। यह दशा उस चेचककी है जो टीका लगानेसे भी कभी-कभी निकलती है। यदि टीका न लगा हो तो चेचक बड़े जोरसे निकलती है। मूर्ख स्त्रियां इसका मूल कारण तो जानती नहीं; समझती हैं कि यह शीतला देवीका प्रकोप है और इसलिये शीतला देवी की पूजा-अर्चा किया करती हैं, जिससे कोई लाभ नहीं होता। माताकी बीमारी, बच्चोंमें माताके पेटकी गर्मीसे होती है। माताकी पेटकी गर्मी ही कारण पाकर इस विकारके रूपमें निकलती है; इसीलिये इसका नाम 'माताकी बीमारी' पड़ा है। तर और शीतल भोजनादि देने से शीघ्र और सरलता-पूर्वक यह विकार निकल जाता है—शान्त हो जाता है।

यदि बालककी टूंडी (नाभि) किसी कारण पक जाय तो दीपकका तेल लगावे या हल्दी, लोध (पंसारियोंके यहां मिलनेवाली एक औषधि) और नीमके फूल बारीक पीसकर लेप करे। यदि बालक दूध न पीता हो, तो पहिले यह

जानना आवश्यक है कि किस पीड़ासे दूध पीना बन्द हुआ है? जिस अंगपर बालक बार-बार हाथ फेरता हो, उसी स्थानपर दर्द समझकर शीघ्र ही उसका योग्य इलाज करना चाहिये। यदि हँसली चल गई हो तो दाईको बुलाकर मलवा देनेसे आराम हो जाता है। यदि कागला बढ़ गया हो तो चूल्हे की राख और काली मिरच पीसकर अंगुलीपर लगा चतुराईके साथ उसे दबा दे।

कभी-कभी बालककी आँखें गर्मी, सर्दी या दांत निकलने के सबबसे दुखने लगती हैं, तब रसोत (पंसारियोंके यहां मिलनेवाली एक औषधि) पानीमें घिसकर आँखपर लेप करे। आँखके भीतर भी एक बूँद डाले। संभवतः इसी दवाईसे बालककी आँखें अच्छी हो जाएँगी अथवा पीली मिट्टीकी टिकियां बनाकर घड़ेपर रख दें और रातको सोते समय आँख पर बांध दें। इस रीतिसे आँखोंका दुखना शीघ्र आराम हो जाता है।

यदि बालकको खांसी हो जाय तो सोते वक्त उसके मुँहमें अनारका छिलका दबा दे अथवा भूभलमें सिके हुए— भुने हुए—बहेड़ेके छिलकेका चूर्ण बालकको चटावे। यदि बालकको पेशाबके साथ खून आता हो तो पाषाण-भेद और साँठी पानीमें पीसकर पिलावे। यदि दस्तमें आंव आती हो तो वायविडंग, पीपल, अजमोद, कुड़कुड़ेके बीज और सफेद

जीरा पानीमें पीस मिश्री मिलाकर पीनेको दे। यदि आंव खून के साथ आती हो तो कच्ची पक्की सौंफ पीसे और उसमें कच्ची खांड मिलाकर चूर्ण की भाँति खानेको दे अथवा सोंठ का मुरब्बा खिलावे। यदि बालकको ज्वर आता हो तो ऐसी दवा देनी चाहिये, जिससे कुछ दस्त होकर पेटका विकार निकल जावे।

दाँतोंको सहज रीतिसे निकालनेका यह उपाय है कि धावड़ेके फूल और पीपलको आंवलेके रसमें मिलाकर बच्चेके मसूड़ोंपर मले। यदि पेशाब बन्द हो गई हो तो टेसूके (पलाश-छेवला) फूलोंको बालकके पेड़ूपर लेप करदे। जहाँ तक हो सके बालकोंको जल्दी पचनेवाला ताजा भोजन देना चाहिये, जिससे ये रोग-रहितनिरोग रहें। यदि कोई रोग भी हो जाय तो धीरतापूर्वक आप ही या किसी अच्छे वैद्यद्वारा दवाई करावे, क्योंकि मूर्खतावश अधीर होने और धूर्त ढोंगियोंके मंत्र-जंत्रोंमें पड़नेसे हानिके सिवा लाभ कुछ भी नहीं है। इसलिये प्रत्येक बातकी वास्तविकता जानने के लिए सदैव अच्छी पुस्तकें पढ़ते रहना चाहिये, इससे सांसारिक सुखोंके सिवाय पारमार्थिक सुखोंकी प्राप्ति होती है।

यहाँ प्रसंगवश यह बात कह देना भी योग्य है कि कोई स्त्रियाँ बिना आगा पीछा सोचे ही दो-दो चार-चारवर्षसे अधिक तककी व्रत आदि करनेकी प्रतिज्ञा कर लेती हैं। ऐसी ही अवस्थामें

यदि गर्भ रह जाता है तो गर्भको इन व्रत उपवासादिकोंसे बड़ा ही कष्ट होता है। उस समयमें वे बेचारीं बड़े धर्म-संकटमें पड़ जाती हैं—प्रतिज्ञाभी तोड़ नहीं सकतीं और गर्भका कष्ट भी नहीं देख सकतीं। उत्साहके वशवर्ती हो हमें कोई प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिए। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, संहनन वा शक्ति देखकर ही कोई प्रतिज्ञा करो। कुछ मेरा यह कहना नहीं है कि व्रत उपवास न किये जाएं, परन्तु भले प्रकार आगा पीछा सोचकर ही किए जावें।

महिलाओं के दैनिक कर्तव्य

दोहा—गृह श्रावककी क्रियाको, चाहिये यत्नाचार।
ताको वर्णन करत कछु, निरखि श्रावकाचार॥
जल छानन, तजि निशि-अशन, श्रावक चिन्ह जु तीन।
प्रतिदिन दर्शन जो करे, सो जैनी परवीन॥

स्त्रियोंको उचित है कि सूर्योदयके पूर्व शय्यासे उठकर पंच परमेष्ठीका स्मरण करें। विस्तरोंको सम्हाल कर यथा-स्थान रक्खें। मल-मूत्र आदिकी बाधाओंसे निश्चिन्त होवें। अनेक आलसी स्त्रियाँ दिन चढ़े उठती हैं और विस्तरोंको ज्यों-का-त्यों छोड़कर दूसरे काम धंधेमें लग जाती हैं, यह बड़ी अज्ञानता है। स्त्रियोंको पतिसे पीछे सोना और पहिले उठना चाहिये।

गाँवके बाहर शौच जाना आरोग्यप्रद और अहिंसाका पोषक है। शौच कपड़े बदलकर जाना चाहिये; क्योंकि अपवित्र

हाथों व अपवित्र-स्थानके स्पर्श हो जानेका भय रहता है। शौचादिकका पानी छना हुआ होना चाहिये। जो बर्तन शौच जानेका हो उससे दूसरा कार्य—पानी पीना आदि—न किया जाय। शौचके लिये जितना पानी आवश्यक हो उतना ही लेना चाहिये। बहुतसे लोग जलकायिक-जीवोंकी हिंसाके ख्यालसे पानी थोड़ा लेते हैं जिससे अपवित्रता ज्योंकी त्यों बनी रहती है। ध्यान रखनेकी बात है कि गृहस्थके लिए स्थावर कायिककी हिंसाका सर्वथा त्याग करना अशक्य है, परन्तु इसका मतलब कुछ यह नहीं है कि व्यर्थ ही स्थावरकायिक जीवोंकी हिंसा की जाय। शौचके अंतमें अधोस्थानको प्रासुक जलके सिवाय अन्य ठंडे जलसे शुद्ध करना अच्छा है। इसी प्रकार लघुशंकाके पीछे इन्द्रिय व हाथ-पांव धोना आवश्यक है।

शौच क्रियासे—निपटकर घरको कोमल बुहारीसे बुहारना चाहिए। जितने भी जीव बुहारने पर निकलें, एक सुरक्षित स्थान रख दिये जाएँ। खजूरकी कांटेदार बुहारी छोटे-छोटे जीवोंका बहुत ही संहार करती है। या तो उससे बुहारा ही न जावे या बुहारा भी जावे तो उसकी एक-एक पत्तीको फाड़-कर चार-चार छः छः भागकर देना चाहिये जिससे बुहारी कोमल हो जावे। उरई अथवा अम्भारीकी बुहारी बड़ी ही अच्छी होती है। पश्चात् और भी जो ऐसे काम हों उन्हें दया-धर्मका खयाल करते हुए पूर्ण करके छने-हुए प्रामाणिक—

शुद्ध—जलसे स्नान करे। बहुतसे मनुष्य और स्त्रियाँ विषय-सेवन, लघुशंका और दीर्घशंकाके पीछे स्नान और दन्तधावन नहीं करतीं, यह कितनी मलिनताकी बात है?

हाँ, यह जरूर है कि इन कामोंमें अनछने पानीका उपयोग न करना चाहिये। जल छाननेकी आज्ञा दूसरे धर्मोंमें भी पाई जाती है।*

इस प्रकार पवित्र हो अपनी योग्यतानुसार मोटा या पतला, मँहगा या सस्ता, स्वदेशी कपड़ा जो कि शुद्ध और साफ हो पहिनकर प्राशुक द्रव्य—लवंग, बादाम और चावल आदि लेकर जिन मंदिर जावे। जिस ग्राममें जिन मन्दिर नहीं उसमें जैनियोंको वास करना उचित नहीं। यदि यात्रा या देशाटनके समय दर्शन न मिलें तो अशुभका उदय विचार एक रस छोड़ भोजन करे, पर जो ग्राममें जिन मन्दिरके होते हुए दर्शन-पूजन नहीं करतीं वे अनुचित करती हैं। प्रत्येक व्यक्तिको भोजनके पहिले भगवानके दर्शन और आत्म-चिन्तन करनेकी आवश्यकता है। मंदिरको जाते समय कीड़े-मकोड़े और मल-मूत्र आदिको बचाता हुआ चले, जिससे जीवोंकी रक्षाके

*दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं, वस्त्रपूतं पिबेज्जलं।
सत्यपूतं वदेद्वाक्यं, मनःपूतं समाचरेत्॥
संवत्सरेण यत्पापं, कुरुते मत्स्यबंधकः।
एकाहेन तदाप्नोति, अपूतजलसंग्रही॥ (स्मृति)

साथ-साथ अपनी रक्षा और पवित्रता रहे। चमड़ेके जूते पहिन कर मंदिर जाना बुरा है। अच्छा हो यदि उस समय जूते पहिने न जायँ और जो पहिने भी जाएँ तो कपड़ेके। मदिरमें प्रवेश करनेके पहिले जूतोंको उतारकर पैरोंको जलसे खूब धोना उचित है। फिर सब प्रकारकी उद्धतता और संकल्प-विकल्प छोड़कर जय जिनेन्द्र शब्द कहती हुई प्रतिमाजीके सम्मुख जावे और जय निस्सही, जय निस्सही, जय निस्सहीका उच्चारणकर श्रीजीको तीन वार नमस्कार करे (जय निस्सही ३ के उच्चारणका कारण ऐसा बताया गया है कि यदि कोई देव उस समय दर्शनको आया हो तो एक ओर हट जाय, तुम्हारा व उसका काम अविच्छिन्न रूपसे होता रहे किसीको वाधा न हो)।

श्रीजीके सम्मुख खड़े हो, विचारे—'मैं आत्मस्वरूपके बतानेवाले जिनेन्द्रका दर्शन कर रही हूं। इन्होंने किस प्रकार कष्ट सहन किये हैं! कैसे-कैसे कर्मोंपर विजय पाई है! कब वह दिन आयगा जब मैं ठीक उसी मार्गपर चलने लगूँगी जिसपर जिनेन्द्र गए हैं, मैं कैसे-कैसे पाप कर रही हूं, और संसारमें भटक रही हूं पराए को अपना समझ रही हूंऔर स्वप्नको सच्चामान रही हूं।

फिर कोई सुन्दर पद, जो तुम्हें तुम्हारी वास्तविकताकी ओर ले जाय, पढ़ो और भावोंकी निर्मलता सहित स्तोत्र पढ़ती हुई मस्तक नमाओ एवं द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार

एक द्रव्य या अष्ट द्रव्यसे भगवानकी भक्तिपूर्वक पूजा करो। फिर भगवानकी तीन प्रदक्षिणा× (भगवानकी दाहिनी ओरसे प्रदक्षिणाकी जाती है) दो। प्रदक्षिणा देते हुए प्रत्येक दिशा में तीन-तीन आवर्त* और एक एक शिरोन्नति=करो और पश्चात् यह पाठ पढ़ो—

श्लोक—दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥१॥

अर्थ—देवोंके देवका दर्शन पापोंका नाश करनेवाला, स्वर्गकी सीढ़ी और मोक्षका साधन है।

दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठति पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥

अर्थ-श्री जिनेन्द्रके दर्शन करनेसे और साधुओंकी वन्दना करनेसे बहुत दिनोंके पाप नष्ट हो जाते हैं, जैसे छिद्रयुक्त हाथ में पानी नहीं ठहरता ॥२॥

वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम्।
अनेकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥३॥

अर्थ—पद्मरागमणिके समान शोभित श्रीवीतराग भगवानका मुख देखकर अनेक जन्मोंके किये हुए पाप नाश हो जातेहैं ॥३॥

× प्रदक्षिणा देते हुए हाथ जोड़े रहना चाहिए।

* जोड़े हुए हाथ घुमानेको 'आवर्त' कहते हैं। =जोड़े हुए हाथोंपर झुकाकर मस्तक रखने को 'शिरोन्नति' कहते हैं।

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनम् ।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनम् ॥४॥

अर्थ—सूर्यके समान श्री जिनेन्द्र-दर्शनसे सांसारिक अन्धकार नाश होता है, चित्तरूपी-कमल प्रफुल्लित होता है और सर्व पदार्थ प्रकाशमें आते हैं—ज्ञात होते हैं।

दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्म्मामृतवर्षणम् ।
जन्मदाहविनाशाय, वर्द्धनं सुखवारिधेः ॥५॥

अर्थ—चन्द्रमाके समान श्री जिनेन्द्रदेवका दर्शन करनेसे उत्तम धर्म रूपी-अमृतकी वर्षा होती है, जन्म दाहका विनाश होता है और सुख-समुद्रकी वृद्धि होती है ॥५॥

जीवादितत्त्व-प्रतिपादकाय सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।
प्रशांतरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय॥६॥

अर्थ—जो जीवादि सात तत्त्वोंको बतानेवाले, सम्यक्त्व आदि आठ गुणोंके समुद्र, शान्त तथा दिगम्बर रूप हैं, उन देवाधिदेव श्री जिनेन्द्र भगवानको नमस्कार हो ॥६॥

चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥

अर्थ—जो ज्ञानानन्दरूप हैं, अष्ट कर्मोंको जीतनेवाले हैं, परमानन्दस्वरूप हैं तथा परमतत्त्व परमात्माके प्रकाश करनेवाले हैं, उन सिद्धात्माके लिए नित्य नमस्कार हो ॥७॥

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।

तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ! ॥८॥

अर्थ—हे जिनेश्वर! आपही मुझे शरणमें रखनेवाले हो और कोई शरणमें रखने वाला नहीं है, इसलिये करुणा करके आप संसारके पतनसे मेरा रक्षा कीजिये ॥८॥

नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥९॥

अर्थ हे भगवान मेरा तीन लोकमें कोई रक्षक नहीं है! नहीं है!! नहीं है!!! यदि कोई है, तो हैं वीतराग देव! आप ही हैं, क्योंकि आपके समान न तो कोई देव आजतक हुआ और न होगा।

जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्जिनेभक्तिर्दिनेदिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥१०॥

अर्थ—मैं यह आकांक्षा करता हूँ कि जिनेन्द्र भगवानमें मेरी भक्ति दिन-दिन होती जावे और प्रत्येक भावसे सदा बनी रहे ॥१०॥

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटो दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः ॥११॥

अर्थ—जिन धर्म-रहित चक्रवर्ती होना भी अच्छा नहीं। जिन धर्मका धारी होकर पराया दास तथा दरिद्री होना भी अच्छा है।

जन्म जन्मकृतं पापं जन्मकोटिमुपार्जितं ।

जन्ममृत्युजरातंकः, हन्यते जिनदर्शननात् ॥१२॥

अर्थ—जिनेन्द्रके दर्शनसे करोड़ों जन्मके किये हुए पाप तथा जन्म जरामृत्युरूपी तीव्ररोग अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं।

इस प्रकार मन लगाकर दर्शन पाठ पढ़ो। पश्चात् एक तरफ जहाँसे भगवानकी मुद्रा अच्छी तरह दिखाई दे, खड़े होकर स्थिर चित्त हो, पंचकल्याणक तथा ध्यानमुद्राका बार-बार स्मरण करे और भक्ति भावसे भगवानके गुण गावे—"कि हे त्रैलोक्यनाथ! हे सर्वज्ञ देवाधिदेव! हे अनंतचतुष्टय-मंडित अर्हंत भगवन्! तुम्हारी जय हो। धन्य है तुम्हारी ध्यान-मग्न-मुद्रा और धन्य है तुम्हारा पवित्र नाम! तुम तरण-तारण अधम-उधारण हो। संसार समुद्रसे पार करनेवाले हो। तुम्हें मेरा नमस्कार हो। इन्द्रादिसे सेवनीय तुम्हार गुण भला कौन कह सकता है?"

इसके पश्चात् नित्य या ऐसी ही कोई दूसरी स्तुति पढ़े।

स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरण आयो शरण जी।
या विरद आप निहार स्वामी, मेंट जामन मरणजी ॥१॥
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकारजी ॥२॥
भव-विकट वनमें कर्म वैरी, ज्ञान-धन मेरो हर्यो।

तब इष्ट भूलो भ्रष्ट होय, अनिष्ट-गति धर तो फिर्यो ॥३॥
धनि घड़ी अरु धनि दिवस यों ही, धनि जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दर्श प्रभुको लखि लियो ॥४॥
छवि वीतरागी नग्नमुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्तगुणयुत, कोटि रवि-द्युतिकों हरैं ॥५॥
अब मिटो तिमिर-मिथ्यात्व मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो हर्ष उर ऐसो भयो, मनु रंक चिन्तामणि लयो ॥६॥
मैं हाथ जोड़ नवाऊँ मस्तक, वीनऊँ तुम चरणजी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरनजी ॥७॥
जाँचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी।
बुध जांचहूँ तब भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथजी ॥८॥

इस भाँति स्तुति कर तीन आवर्त, एक शिरोन्नति और साष्टाङ्ग नमस्कारपूर्वक दण्डवत् करे। फिर नीचेका श्लोक-बोलते हुए गंधोदक—चरणोदक—हृदय, नेत्र और मस्तकमें लगावे।

श्लोक— निर्मलं निर्मलीकरणं, पवित्रं पापनाशनम्।
जिनचरणोदकं वन्दे, अष्टकर्मविनाशकम् ॥१॥
सोरठा—जिन तन परम पवित्र, परसभई जगशुचि करन।
सो धारा मम नित्त, पाप हरो पावन करो।

गंधोदक लगा अपना सौभाग्य समझे, परन्तु लेते समय इस बातका ध्यान रक्खे कि गंधोदक एक या दो अंगुलियोंसे

ही लिया जाय, जिससे वह जमीनपर न गिरने पावे और अशुद्ध हाथसे न लिया जाय, गंधोदकके पास जलका एक कटोरा अवश्य रक्खा जाय, जिससे गन्धोदक लेनेके बाद अँगुलियाँ धो ली जांय। इतना कार्य कर लेनेके पीछे अवकाशके अनुसार एकाग्रचित्त करके जाप, सामायिक और स्वाध्याय आदि करे। स्वाध्याय धर्मका मूल और शान्तिदायक है। ध्यानमें जो आनन्द है वह किसी भी सांसारिक वासना या पदार्थमें नहीं है। शास्त्रों-पुस्तकोंके विषयमें एक लेखकने लिखा है—वे (शास्त्र) हमें बिना कुछ वेतन लिये पढ़ाते हैं। बिना क्रोध किये और भूलोंपर बिना दंड दिये हमें सिखाते हैं। रात-दिन जब चाहे तब हमें पढ़ानेको तैयार रहते हैं। हमारी मूर्खतापर वे न तो हँसते और न चार जनोंमें हमारी दिल्लगी उड़ाते हैं। फिर भला बताओ, शास्त्रों जैसे गुरु और पुस्तकालयों जैसे स्कूल क्या और होंगे? जो मनुष्य धर्मको जानना चाहें; वे निर्दोष और सर्वज्ञ वीतराग कथित धर्मका अवलोकन करें, स्वाध्याय सब तपोंका मूल एक श्रेष्ठ सत्कर्म है।

मन्दिरमें विकथा—घर सम्बन्धी चर्चा, लेन-देन, हँसी और झगड़ा आदि नहीं करना चाहिये; क्योंकि धर्म-स्थानोंमें ऐसे कार्य करनेसे विशेष पाप-बन्ध होता है।

श्रावकाचार आदि आचार ग्रंथोंमें जहाँ-तहाँ ८४ आसादनाओंका वर्णन किया गया है। धर्मायतनमें जाकर उनका

करना उचित नहीं है। मन्दिरमें सबसे मैत्रीभाव रक्खे। अपने दुर्भावोंसे उस समय बिल्कुल छुट्टी पा लेनी चाहिये। बाल-बच्चोंको*शुद्ध—मल-मूत्रादिसे निश्चिन्त—कराके ले जावे और मन्दिरमें भी इस बातका ख्याल रक्खे कि बच्चे किसी प्रकारकी अपवित्रता या दूसरोंके धर्म-साधनमें कोई विघ्न न करने पावें।

धर्म-साधनसे निपटकर स्त्रीको गृहस्थीके कामोंमें लगना चाहिये; क्योंकि पुरुषके लिये धर्म-साधन और आजीविका ये दो मुख्य कार्य है—

कला बहत्तर मनुषकी, तिनमें दो सरदार।
एक जीवकी जीविका, एक जीव उद्धार॥ (नीतिकार)

और स्त्रीके लिये धर्म-साधन, गृह व्यवस्था और सन्तान पालन मुख्य कर्म हैं।

स्त्रियोंको भोजन शुद्ध बनाना चाहिये। रसोई बनाते समय नीचे लिखी बातोंपर ध्यान देना चाहिये—

चौकेकी क्रिया—पवित्र भोजन होनेसे मन और बुद्धि पवित्र होती है तथा अच्छे कार्योंकी ओर लगती है। उन्हींके हृदयमें धर्म ठहरता है जो मन, वचन और तनसे धर्माचरण

*पाँच वर्षके हो जाने पर बच्चोको मन्दिरमें ले जाकर भगवानको नमस्कार करावे। छोटा-दर्शन और णमोकार मन्त्र सिखावे। अनजान अवस्थामें—बहुत छुटपनमें—ले जाना ठीक नहीं है।

करते हैं। धर्माचरणोंके लिये आवश्यक है कि हम अपना खान-पान शुद्ध रक्खें—चौके-चूल्हेपर खूब ध्यान दें। जल, रसोईकी-आटा दाल आदि वा वर्तनादि सामग्री, ईंधन और रसोईका स्थान इन चारोंको चौका कहते हैं। इस पर ध्यान देना चाहिए।

जल-कुआँ, तालाव, नदी आदि पवित्र स्थानोंसे भली-भाँति छानकर लाया जावे। छाननेका वस्त्र उज्ज्वल, गाढ़ा ३६×२४ अंगुल हो। इस छन्नेको दोहरा करके छानना चाहिये। यदि वर्तनोंका मुँह बड़ा हो तो उसी परिमाणसे छन्नेको भी बड़ा रखना चाहिये, (प्रत्येक अवस्थामें दुहरा करनेपर भी छन्ना वर्तनके मुँहसे तिगुना हो)। सदा पवित्र और मँजे हुए वर्तनोंमें धीरे-धीरे पानी छाना जावे। अनछने पानीकी एक बूँद भी व्यर्थ न गिरे और छने हुए जलमें भी वह न मिलने पावे। अपने हाथसे पानी भरकर लाना सर्वोत्तम है। यदि ऐसा न हो सके तो मदिरा-मांसके त्यागी किसी विश्वस्त व्यक्तिसे भराना उचित है।

पानी छाननेके बाद जीवानी—बिलछानी—उसी स्थान में ही यत्नपूर्वक क्षेपण करनी चाहिये, जिसमेंसे कि पानी लाया गया हो। यदि पानी कुएँसे लाया गया हो, तो जीवानी कड़ेदार लोटेसे डाली जाय, जिससे वह बीच में ही न रह-कर पानी तक पहुँच जाय। जो लोग जीवानीको यत्नपूर्वक उसी जल-स्थानमें क्षेपण नही करते, जिसमेंसे कि जल भरा

हो, तो इससे जल छाननेका उद्देश्य अधूरा ही रह जाता है—उन जल-जीवोंकी रक्षा नहीं होती।

छने हुए जलमें लौंग, हरड़ और लकड़ीकी राख आदि द्रव्य शास्त्रोक्त प्रमाणसे डाल देनेपर उसके रस, गंध, वर्ण और स्पर्श आदि बदल जाते हैं तथा जलकायिक जीव चय जाते हैं और त्रसकी उत्पत्ति नहीं होती। इस भाँति शुद्ध (प्रासुक) हुए जलकी मर्यादा दो प्रहर की है। साधारण गर्म जलकी ४ प्रहरकी और उबाले हुए—अदहनके समान गर्म किये—जलकी मर्यादा ८ प्रहरकी। प्रासुक जल मर्यादा के भीतर ही उपयोगमें लाया जा सकता है। मर्यादाके पश्चात् वह किसी भी कामका नहीं रहता।

दुःखकी बात है कि जैनियोंमें जल छानने की विधिका आज कल प्रायः लोपसा होगया है। पानी छानने के लिये पतला, पुरानी धोतीका टुकड़ा जाति बिरादरीके भयसे रखते हैं, जिसमेंसे छोटे बड़े सभी जीव बराबर निकलते जाते हैं भला इस ढोंगसे क्या लाभ है? अनछना पानी पीनेसे अदयाके दोषके सिवाय शरारमें अनेक रोग भी घर कर लेते हैं। यही कारण है कि संसारके सभी विद्वान्—क्या जैन और क्या अजैन और क्या डाक्कर, वैद्य, हकीम वा वैज्ञानिक आदि पानीको छानकर पीनेकी सम्मति देते हैं। हमारे भारतीय वैद्यक शास्त्र तो न जाने कबसे पानी छानकर पीने

की आज्ञा देते चले आये हैं। लोकोक्ति है कि, 'जलको पीजे छानके, गुरुको कीजे जानके', इस युक्तिसे भी हमें छानके जल पीनेकी ही पुष्टि मिलती है। यूरोपियन जातियाँ यद्यपि अहिंसाका विचार नहीं रखतीं, तो भी स्वास्थ्यके विचारसे पानीको अनेक तरहसे साफ करके पीती हैं।

पानी छाननेका काम स्त्रियोंकी थोड़ी-सी सावधानीसे अच्छी तरह हो सकता है। सदैव घरमें दो तीन छन्ने रखना चाहिये। पुराने छन्नोंसे पानी बराबर छानते रहना ठीक नहीं। उन्हें अलग कर देना चाहिये। सबसे अच्छी बात तो यह है कि कुएँ आदिसे ही पानी छानकर लाया जावे और जिस समय पीनेकी इच्छा हो छानकर पिया जावे। सुबह शाम सब पानी छानकर एक चौड़े बर्तनमें जिवानी एकत्रित करे तथा यत्नाचारपूर्वक उसे जलस्थानमें पहुँचावे, स्मरण रहे, पानी उबालकर और पीछे ठंडा करके पीनेसे शरीरकी निरोगता बढ़ती है। यही प्रासुक जल पीनेका लाभ है।

भोजनसामग्री—अन्न अवींधा (बिना घुना हुआ) होना चाहिए। उसका साफ करना एवं पीसना उजेलेमें होना चाहिये। पीसते समय चक्कीको, कूटते समय ओखलीको और इसी भाँति दूसरे दूसरे पदार्थोंको पीसने कूटनेके पहले भली भाँति देखलो, साफ करलो, जिससे उनमें कोई जीव न रह जाय। चक्की आदिसे आटा आदि निकाल लेनेपर भी

उसमें आटे वगैरहका कुछ अंश लगा ही रहजाता है, उसे कोमल बुहारीसे निकाल डालना चाहिये। कितने ही लोग अनाजको धोकर खाते हैं, यह बातभी बहुत अच्छी है; परन्तु छने हुए पानीसे ही धोना चाहिए। बहुतसी स्त्रियाँ दाल-चावल आदिको बहुत पहिलेसे बीन रखती हैं और रसोईके समय नहीं शोधतीं। विचारती हैं कि संशोधित तो रक्खे हैं, पर यह उनकी बड़ी भूल है। उस समय भी जरूर शोधना चाहिये।

आटेकी मर्यादा शीतकालमें ७ दिन, गरमीमें ५ दिन और बरसातमें ३ दिनकी है। इसके पीछे जीवोंकी उत्पत्ति होजाती है। प्रायः प्रत्येक सामान ताजा लाकर ढका रखना चाहिए। वर्षाकालमें प्रत्येक वस्तुको बड़ी सावधानीसे रखना चाहिए, क्योंकि इस ऋतुमें जीवोंकी उत्पत्ति बहुत अधिक होती है। शक्कर, घी आदि मिष्ट और सचिक्कण पदार्थोंको तो सभी ऋतुओंमें सावधानीसे रक्खें, क्योंकि ऐसी वस्तुओंमें थोड़ीसी भी भूल होनेपर या तो बाहरसे अनेकों जीव आ जाते हैं, या स्वयं इन वस्तुओंमें भी उत्पन्न हो जाते हैं। वर्षाऋतुमें जहाँतक हो सके भोजनकी बहुत थोड़ी सामग्री रक्खी जावे।

ग्रीष्मकालमें स्त्रियाँ बहुतसी (दस-दस पाँच-पाँच सेर) सीमी (सिमैयाँ-बिया) तोड़कर रखती हैं, बरसात लगते ही

उनमें इल्लियाँ लग जाती हैं । यही हाल मर्यादासे बाहरके पापड़, अथाने (आचार), बड़ियों आदिका है, परन्तु लोग वही वर्षोंका आचार आदि बड़े मजेमें खाते हैं। कभी उन्हें सावधानीपूर्वक देखने दिखानेकी चेष्टा भी नहीं करते । हल-वाईके यहाँकी बाजारू मिठाई भी त्रस जीवोंका सत् ही है। उनके यहां भला क्रियासे बनानेवाला और सावधानीसे रखने-वाला कौन है? ऐसेही अनेक कारणोंसे तो जैन जातिमें अनेक घातक-रोग फैल गये हैं। इस तरहके अभक्ष्य-भक्षणको हमें शीघ्रही छोड़ना चाहिए।

पुनः खानेके पदार्थोंमें आलू, रतालू, शकरकन्द, पुष्प और द्विदल आदि २२ अभक्ष्य* और पाँच उदुंबर—बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर और पाकर फल तथा ३ मकार—मद्य, मांस और मधुको त्रस राशिका स्थान समझ करके कभी भूल-कर भी भक्षण नहीं करना चाहिये।

रसोई बनानेके पहिले सर्व भोज्य पदार्थ लेकर शोधे तथा

---

*२२ अभक्ष्योंके नाम—१ बैंगन, २. द्विदल—कच्चे छाँछ, दही या दूधके साथ दुफड़िया (द्विदला) अनाज खाना, ३. बहुबीज फल, ४ ओला, ५. रात्रि भोजन, ६. कन्दमूल, ७. मांस, ८. मधु, ९. मदिरा, १०. मिट्टी, ११. माखन, १२. विष, १३. अचार (अथाना), १४. पीपल फल, १५. बड़फल, १६. उदम्बर फल, १७. कठूमर फल, १८. पाकर फल, १९. अजान फल, २०. तुच्छ फल, २१. तुषार (बर्फ), २२. चलित रस—जिसका स्वाद बिगड़ गया है।

ठीक अन्दाज करके फिर रसोई बनावे। प्रथमही चौकेमें जल ले जाकर रक्खे और उसे प्रासुक करले क्योंकि कच्चे जलकी मर्यादा ¾ पौन घंटेकी है और रसोईमें २ या ३ घंटे लगते हैं। सारांश यह है कि पानी प्रासुक किये बिना काम नहीं चल सकता। आटा गूँदकर—माँड़कर शुद्ध-स्वच्छ गीले कपड़े से ढाँक दे। आटा गूँदते समय हाथकी अंगूठियाँ आदि उतार देनी चाहिये। पश्चात् अपनी योग्यतानुसार सरस, स्वच्छ और प्रकृति, ऋतुके अनुकूल भोजन बनावे। भोज्य वस्तुको कभी बिना ढाँकी न रक्खें, क्योंकि या तो भापसे अथवा वैसेही कई कारणों से जीव मरकर रसोईमें गिर जायेंगे। भोजन सदैव खूब देखभाल और पीस २—चबाकर करना चाहिये। रात्रिमें भोजन बनाना-खाना बुरा है। रात्रि-भोजनके विरुद्ध मार्कण्डेयपुराणमें एक जगह लिखा है:—

अस्तंगते दिवानाथे, तोयं रुधिरमुच्यते,
अन्नं मांससमं प्रोक्तं मार्कण्डेयमहर्षिणा ॥१॥
रक्तीभवंति तोयानि अन्नानि पिशितानि च,
रात्रौ भोजनसक्तस्य ग्रासे तन्मांसभक्षणम् ॥२॥

भावार्थ—यह है कि रात्रिभोजन मांस-भक्षण के समान और रात्रिमें जलपान रक्त-पानके समान है।

रसोई तैयार करके किसी संयमी धर्मात्मा पुरुषको (जो उस समय भाग्यसे प्राप्त होजावे) भोजन करावे, यदि न

होवे तो अपने ही घरके ज्येष्ठ योग्य पुरुषको भोजन करावे और हर्ष माने । आजकलके समयमें तो अत्यन्त दुखित, बुभुक्षित और हीनाङ्ग दो-एक व्यक्तियोंको भोजन कराना ही बड़े कल्याणका कारण है । धन्य हैं वे व्यक्ति जो प्रतिदिन इसी प्रकार दूसरोंको भोजन कराके भोजन करते हैं । पुरुषोंके भोजनोपरान्त स्त्रियाँ भोजन करें । भोजनके पीछे ही वर्तनोंको साफ करना और चौका लगाना चाहिए । जूठे बर्तन अधिक देर तक पड़े रहनेसे उनमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होजाती है । भिनभिनाती हुई मक्खियाँ उस जूठे पानीमें (धोवनमें) गिरती-मरती हैं, जिससे हिंसाका दोष लगता है । अथवा अपवित्र कुत्ते-बिल्ली उन्हें चाँटकर अपवित्र कर देते हैं ।

लड्डू, बाबर, घेवर, बूंदी, खारी सेव आदि पक्की रसोईकी मर्यादा---जिसमें पानीका अंश थोड़ा होता है--- आठ प्रहरकी है । पुआ, पूड़ी और भजिया आदिकी मर्यादा अधिक जल होनेके कारण चार प्रहरकी है । खाटा, कढ़ी, एवं खिचड़ी आदि कच्ची रसोईकी मर्य्यादा दो प्रहरकी है । जिस रसोईमें पानी न पड़ा हो जैसे मगद आदिकी मर्य्यादा आटेके बराबर जानो । दूध दुहकर तत्काल छानके औटा रखनेसे शुद्ध रहता है । इस दूधकी मर्यादा आठ प्रहरकी है । गर्म पानी डालकर तैयार की हुई छांछकी मर्यादा चार प्रहरकी है । कच्चे पानीसे बनाये हुए मट्ठे (छांछ) की मर्यादा कच्चे

पानीके बराबर दो घड़ीकी (¾ पौन घंटेकी) है । प्रासुक (गर्म) किये हुए दूधमें जामन देनेसे बने हुए दहीकी मर्यादा आठ प्रहरकी है । दही जमानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि, कल्दार रुपयेको सामान्य रीतिसे गर्म करके प्रासुक दूधमें डाल देनेसे चार प्रहरके भीतर दही अच्छा जम जाता है ।

इनके सिवाय अन्य पदार्थोंकी मर्यादा जाननेकी इच्छा हो तो क्रियाकोषसे जानना चाहिए । स्मरण रखना चाहिए कि मर्यादाके पश्चात् प्रत्येक पदार्थमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है । बिना औटाए हुए दही अथवा छांछके साथ द्विदल (बिदल) अन्न खानेसे अनेक दोष उत्पन्न होते हैं । बिगड़े हुए स्वादवाले पदार्थ खानेसे स्वास्थ्य बिगड़ जाता है । इसीलिए हमारे आचार्योंने हमें ताजा, शुद्ध और प्रकृति—ऋतुके अनुकूल भोजन करनेकी आज्ञा दी है; जिससे कि हम मोटे-ताजे और निरोग रहें तथा लौकिक और धार्मिक कार्योंको भलीभाँति सिद्ध कर सकें ।

वर्तन—पवित्र राखसे अच्छी तरह मँजे हुए हों । गाय, भैंस, कुत्ते या बिल्लीके छुए हुए न हों । पाखानेके लोटेसे यदि अच्छे वर्तन छू जाएँ, शूद्रादिने उनमें खाया-पिया हो, तो उन्हें अग्निमें डालकर शुद्ध कर लेना चाहिए । हां, यह बात ठीक है कि यदि खाते-पीते समय कुत्ता, बिल्ली आदि आजाएँ तो उन्हें दयापूर्वक कुछ भोजन डाल देना चाहिए ।

बाजारू दुकानोंपर बाजारू मिठाई खाना, जूते चढ़ाए भोजन या मिठाई खाना, कांच और चीनीके बर्तनोंमें जूठे इत्यादिका कोई दोष न समझना बड़ा ही हानिकर है। कम-से-कम अपनी आरोग्यता चाहनेवालोंको तो अवश्य ही इन बातोंसे बचना चाहिए।

चौका—रसोईका स्थान—कुत्ते-बिल्ली आदि हिंसक जीवोंके प्रवेश-रहित, कीड़े-मकोड़ोंसे शून्य, जाला-रहित, साफ-सुथरा, सींडसे रहित, प्रकाशयुक्त और सीमायुक्त होना चाहिये। उसपर ऊपरसे जीव जन्तु और कूड़ा करकट गिरनेके बचावके लिये चँदेवा* बाँधना चाहिये।

चौकाको नित्य दिनमें कोमल बुहारीसे बुहारकर चूल्हे-की राख निकालकर, विवेकपूर्वक देख-भाल करके—मिट्टी मिले प्रासुक जलसे पोतना उचित है। चौका रातको न लगायाजाय, क्योंकि उससे अनेक प्राणियोंका घात होना सम्भव है। आशय यह है कि भोजन-सामग्री एवं भोजन-स्थान आदिमें जितनी पवित्रता रक्खी जायगी, परिणाम—भाव—उतने ही पवित्र होंगे और इससे शरीर और मन उतना ही पुष्ट तथा स्वस्थ रहेगा। अनेक गृहोंमें चौका न लगाया जाकर पानी छिड़क दिया जाता है। कई स्थानोंमें एक ओर

---

*चँदेवा—चक्की, उखली, चौका, घिनोंची—पानी रखने का थान और शयन-गृह-आदि स्थानोंमें होना चाहिये।

रसोई बना करती है और दूसरी ओर राख आदि कूड़ा-करकट संचित रहता है, यह बड़ा ही घृणास्पद वा म्लेच्छ व्यवहार है, ऐसा करना स्वास्थ्य और आचार धर्मके प्रतिकूल है। चौका जिस कपड़ेसे लगाया जाय उसे नित्य ही निचोड़कर सुखा डालना चाहिए। बहुतेरी स्त्रियाँ उसे वैसा-का-वैसा मिट्टी-पानीमें भिगोकर रख देती हैं, जिससे उसमें बहुतसे कीड़े पड़ जाते हैं। दूसरे दिन उसी कपड़ेसे (पोतेसे) फिर चौका लगा दिया जाता है जिससे अनेक जीवोंका संहार—नाश हो जाता है।

गोबरसे चौका लगाना उचित नहीं क्योंकि वह देरसे सूखता है और उसमें कीड़े पड़नेकी संभावना रहती है। इस तरह यत्नाचारसे चौका लगाकर, स्नानकर शुद्ध—स्वच्छ—वस्त्र पहिने। फिर रसोईका सामान शोधकर चौकेमें रसोई बनावे। पुरुष भी हाथ-पाँव धोकर स्वच्छ वस्त्र पहनकर भोजन के निमित्त चौकेमें जावें। जो लोग चौकेमें बिना स्नान किये और मलिन कपड़े पहिने हुए घुसते हैं उनमें और शूद्रोंमें अन्तर ही क्या है? स्वच्छता—पवित्रता—हर जगह अच्छी और लाभप्रद है। गृहस्थके धनाढ्य होने पर भी उसे अपने कुटुम्बकी भोज्य-सामग्री स्त्रियोंसे ही बनवानी चाहिये। क्योंकि रसोई बनानेवाली घरकी स्त्रियोंके चित्तमें जो प्रेम और भक्तिभाव होता है वह नौकरोंमें नहीं हो सकता। स्वयं रसोई बनाई जाय तभी चौके

की शुद्धता रह सकती है। रसोई बनाना स्त्रियोंका एक व्यायाम भी है।

ईंधन-अवींध, निर्जन्तु, सूखी लकड़ीका एवं देखा-शोधा हो, इससे जीव-रक्षा होती है खास करके वर्षा-ऋतुमें ईंधनमें असंख्य जीव हो जाते हैं, इसलिए बरसातमें तो बहुत सावधानी करके ईंधन जलाना चाहिये। अच्छा हो यदि कोयला ही जलाकर उसीसे रसोई बनवाई जावे। गोबरके कंडे (छाने) जलाना सर्वथा अनुचित है, क्योंकि इनके बनानेमें ही हजारों कीड़ोंका नाश हो जाता है।

यत्नाचार-प्रवृत्ति—

इसी तरह गृहस्थीके अन्य कार्य भी बहुत विचारपूर्वक करने चाहिये। शिर साफ करनेके पीछे जो जूएँ आदि निकलती हैं, उन्हें मारना नहीं चाहिये किन्तु बाहर किसी घनी छायावाले स्थानमें सावधानी पूर्वक रख देना चाहिये। ऐसा ही व्यवहार अन्नमें निकले हुए जन्तुओंके साथ करना चाहिये। उन्हें भी कुछ अन्नके साथ किसी पात्रमें रखके छायायुक्त स्थानमें रख देना चाहिये।

नहाने-धोनेका पानी ऐसे स्थानमें डाला जाना चाहिए तथा पेशाब भी ऐसे स्थानमें की जानी चाहिए जहाँ जल्दी सूख जाय, क्योंकि किसी भी जगह बहुत गीलापन होनेसे कीड़े

उत्पन्न हो जाते हैं एवं दुर्गन्धि फैलकर नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति इन पांच स्थावरोंकी रक्षाके लिए आवश्यकतासे अधिक व्यर्थ उपयोग न किया जाय, जैसे कि व्यर्थ पानी डालना, व्यर्थ धरती खोदना, निरर्थक आग जलाना और झाड़, फूल, फल आदिका तोड़ना ये अथवा इन ही जैसे कृत्य अनर्थ दण्ड-पापके मूल हैं और गृहस्थका धर्म यही है कि आवश्यकतानुसार ही स्थावर कायिक काममें लावे। त्रस कायिककी संकल्पी हिंसा को छोड़े और भी हिंसा अर्थात् व्यापार धन्धे सम्बन्धी हिंसामें यत्नाचार पूर्वक प्रवृत्ति करनी चाहिये। जो इसके विपरीत चलते हैं वे रोगी और दुखी होते हैं, हिंसाके कटुक फल भोगते हैं। हमें धर्म-नीतिपर चलना चाहिये जिससे हिंसा-तिमिर-राशि नष्ट होकर दया-धर्मरूपी सूर्यका उदय हो। शरीर, कुटुम्ब और समाजकी रक्षा हो तथा लौकिक एवं पारलौकिक सुखोंकी प्राप्ति हो।

ऋतुक्रिया-विचार

जो नारी ऋतुक्रियामें, बरते सविध सयान।
ताके वर सन्तान ह्वै, सुख-यश-बुद्धि निधान॥

स्त्रियोंके उदरमें एक डिंव-कोष रहता है, जिसकी चर्म-स्थलीके रक्तसे प्रतिमास अंडेके समान एक छोटा पदार्थ उत्पन्न

होता है। क्रमानुसार महीना पूर्ण होनेपर यह अंडा फटकर गर्भस्थलीके ऊपर नाभिसे जा मिलता है। और रक्तादि योनि-मार्गद्वारा बाहर निकल जाता है। इस प्रकार किसीके दो तीन और किसीके पाँच-सात दिन तक निकलता रहता है, ऐसी ऋतु क्रियायुक्त स्त्रीको पुष्पवती या रजस्वला कहते हैं। मासिक धर्म होनेका नियम तीन दिनका है इससे कम या अधिक रोग का कारण होता है। इन दिनों उसे गृहस्थीके प्रत्येक कार्यसे अलग रहना चाहिये। किसी भी वस्तु और बालबच्चोंको नहीं छूना चाहिये। वह एकान्तमें एक जगह बैठे। कितने अफसोस की बात है कि आजकल रजस्वला स्त्रियाँ पानी-भरना, पीसना बर्तन-मलना आदि अनेक काम करती हैं। पर यह वैद्यक शास्त्र के विरुद्ध है। वैद्यकशास्त्र बतलाता है कि मासिक धर्मके समय स्त्रीको सुस्त और शांत रहना चाहिये, किसीका भी मुँह नहीं देखना चाहिये, क्योंकि घटनाओं और दृश्योंका प्रभाव आगे होनेवाली सन्तानपर अभीसे पड़ चलता है। पापियोंकी छाया पड़ जाने अथवा चित्त चलायमान हो जानेसे भावी सन्तानपर बुरा असर पड़ता है। इसी सम्बन्धमें एक मनोहर कहानी नीचे लिखी जाती है—

एक ग्राममें चार अन्धे रहते थे। वे चारों ही गुणवान और आपसमें मित्र थे। उन्होंने विचारा कि 'गाँवका जोगी अन्य गाँवका सिद्ध' अतः चलो अपन चारों कहीं बाहर चलें,

जिसमें आजीविका चले और गुण विख्यात हों। उनमेंसे पहिला रत्न-परीक्षक, दूसरा अश्व-परीक्षक, तीसरा स्त्री-परीक्षक, और चौथा पुरुष-परीक्षक था। वे चारों चलकर एक बड़ी राजधानीमें पहुँचे। वहाँके राजासे मिलकर आजीविका-प्राप्ति की प्रार्थनाकी। राजाने पूछा कि परदेसी सूरदासो! तुममेंसे प्रत्येकमें क्या-क्या गुण हैं सो बताओ। प्रत्येकने अपना गुण निवेदन किया, पश्चात् राजाने उनमेंसे प्रत्येक को १ सेर आटा, १ छटांक दाल, १ तोला घी और १ तोला नमक प्रतिदिन दिये जानेकी आज्ञा दे दी अतः चारों सूरदास खाते-पीते आनंद करते वहीं राजधानीमें रहने लगे।

संयोगसे एक दिन जौहरी बहुतसे जवाहरात लेकर राजधानीमें आया। तब राजाने रत्नोंकी परीक्षा करनेके लिए उस रत्न-परीक्षक सूरदासको बुलाकर कुछ अच्छे रत्न ले देनेको कहा। उस सूरदासने कुछ चोखे-उत्तम—रत्न ढूँढकर राजा को दिये और कहा कि ये चोखे हैं। यदि ये खोटे होंगे तो इन्हें घनकी चोट दिलवाकर देख लीजिये, फूट जायँगे। असली पक्के रत्न होंगे तो कभी भी फूटनेके नहीं। सूरदास के कहे अनुसार रत्नोंकी परीक्षाकी गई और वे चोखे पक्के रत्न सिद्ध हुए। तब राजाने उस रत्न-परीक्षक सूरदासको बहुतसा पुरस्कार दिया और घीकी मात्रा बढ़वा दी।

इसी प्रकार एक बार एक अच्छा हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर

घोड़ा राजाने अश्व-परीक्षक सूरदासको सौंप उसकी परीक्षा करने को कहा। सूरदासने घोड़ेके अङ्गोपाङ्ग टटोलकर कहा राजन्! इन सब सुलक्षणोंवाले घोड़ेमें एक यह कुलक्षण है कि जलमें घुसते ही यह बैठ जायगा। राजाने परीक्षाकी तो सचमुच जलमें घुसते ही घोड़ा बैठ गया। परीक्षा कर चुकनेपर राजा ने सूरदाससे पूछा कि तुमने घोड़ेका यह दोष कैसे जान लिया? तब सूरदासने कहा कि जिस तरह वैद्य नाड़ी टटोल कर रोग जान लेते हैं, उसी तरह इसके अंग और नाड़ियाँ टटोलकर मैंने इसका यह दोष जाना। बात यह है कि इसके पेटमें मुझे एक ऐसी नस मिली, जो अपने प्रमाणसे बहुत मोटी थी और तब मैंने सोचते-विचारते पता लगाया कि इस घोड़े की माँने भैंसका दूध पिया है; जिसकी गर्मीका अंश इस घोड़े के अंगमें भी है। राजाने पहले सूरदासकी तरह इसे भी पुरस्कार आदि दिये।

एकदिन राजाने तीसरे स्त्री-परीक्षक सूरदासको बुलाकर कहा कि आज तुम महलोंमें जाकर मेरी रानीकी परीक्षा करो और बिलकुल सच सच हाल मुझसे आकर कहो। पश्चात् राजा ने रानीको खबर करवाई कि थोड़ी ही देरमें एक सूरदासजी तुम्हारे महलमें आने वाले हैं, सो तुम सावधानीसे इनका आदर-सत्कार करना रानीने खबर पाते ही अपना खूब शृंगार किया और ऐसा शृंगार किया कि जिससे बढ़कर हो न सके।

शृंगार करके वह शय्यापर बैठने जा ही रही थी कि सूरदासजी आ पहुँचे। रानी हाथमें कुछ भेंट ले खांसती-खांसती खखारत हुई, जल्दी-जल्दी धमधमाती द्वार तक पहुँची। सूरदास इन ऊपरी बातोंसे ही उसकी परीक्षा करके राजाके पास लौट आया और राजाके पूछनेपर कहा—अपराध क्षमा हो, आपकी रानी किसी ओछे घरकी बेटी जान पड़ती है। यदि उसकी माता क्षत्राणी भी है तो पर-पुरुष-रता-व्याभिचारिणी है यदि पिता क्षत्रिय है, तो वह किसी नीच माँकी बेटी है। सुनते ही राजा ने सूरदासको तो घर जानेकी आज्ञा दी और आप शीघ्र ही, रानीके पास पहुँच एवं बड़ी खिन्नतासे बैठे।

रानीने पूछा, महाराज! उदास कैसे? राजाने कहा मैं जो बात पूछता हूँ उसे बिल्कुल सच-सच बताना, कुछ छुपाना मत। किसी भाँतिका डर मत रखना, क्योंकि उसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। पूछना यह है कि तुम किसकी पुत्री हो? अपने माता-पिताका वास्तविक परिचय दो। रानी-ने राजाके चरणोंपर गिरके कहा—महाराज! मैं बांदीकी कूँखसे उत्पन्न हूं। चाहे मारिये, चाहे पालिये। आपके साथ विवाह होनेका कारण यह है कि जिस कन्यासे आपकी मँगनी हुई थी वह ठीक विवाहके समय मर गई। तब इस मृत्युकी बात को छिपाकर मेरे साथ आपकी शादी करदी गई। राजा सुन-कर दरबारमें आया। सूरदासको बुलाकर पूछा कि सूरदास!

तुमने कैसे जाना कि मेरी रानीकी जाति-वंशमें कोई अन्तर है ? सूरदास बोला—"महाराज ! आदमीकी योग्यता-हैसियत दो बातोंसे जानी जाती है एक तो बोलनेसे और दूसरे शरीर-की क्रियासे—चलने, फिरने और बैठनेसे तथा वस्त्राभूषण आदि ठाठवाटसे। सो ही किसी कविने कहा है कि 'भले बुरे सब एकसे, जोलौं बोलत नाहिं' और 'बड़े बड़ाई ना करें, बड़े न बोलें बोल' मैंने भी रानीकी परीक्षा बोलने और चलने फिरनेसे की है। जो बड़े घरकी बेटियाँ हैं, जिन्हें मायके (पीहर) और ससुरालकी शरम है, माता-पिताकी और सास-ससुरकी प्रतिष्ठाका ध्यान है तथा जो अपयश और पापों से डरती हैं, वे चलने, फिरने, बैठने और उठने आदिमें मर्यादा उल्लंघन नहीं करतीं। छिछलापन—उथलापन नीचता-का द्योतक है।

कुटिल स्त्रियोंके विषयमें कहा है :—

१—अपने पिताके वासमें, जहं तहं फिरें मतिमन्द ज्यों।
डोलती घर-घर फिरें, बिन हेतु ही स्वच्छन्द त्यों॥
२—जहं होय मेला तथा कौतुक, देखनेको जावही।
पर पुरुष बैठे होंय बहुते, होंय तहं ठाड़ी सही॥
३—बहु भ्रमन पसंद विदेश जाको, एकली जहं तहं फिरें।
व्यभिचारिणी जे नारि कुलटा, नहिं प्रीति काहूतें करें॥
४—नहिंलाज काहूंकी करें, निज पति निरादर जासुके।

वे नारि कुलटा पापिनी, ये जान लक्षण तासुके ॥
५—क्षणमाहिं रोवें जो हँसे, उन्मत्त दिनमें नित रहें।
नहिं होय तोषित भोगसूं, नित कामकी बाधा दहें ॥
६—चलतीं भटकतीं चाल आतुर, स्वाद जिह्वाका चहें।
ऐसी कुनारी स्वतः नाशें, जयदयाल जैनी कहें ॥

हे राजन्! कुलवन्ती भार्या छुपाने योग्य अंगोंको सदा छुपाये रखती है। नीची दृष्टि करके चलती है। किसीसे भी चाहे जैसा सम्भाषण नहीं करती। कुटुम्ब भरसे प्रीति और जीव मात्र पर करुणाभाव रखती है। दुखित-बुभुक्षितका दुख दूर करती है। धर्मात्मा जीवोंसे पवित्र प्रेम रखती है। देव, धर्म और सच्चे गुरुकी भक्ति करती है। देवदर्शन एवं स्वाध्याय आदि धर्मकार्योंमें अनुरक्त रहती है। प्रत्येक सामान स्वच्छ सुव्यवस्थित और प्रत्येक काम पूरा करती। मकान भी बिल्कुल स्वच्छ और सजीला रखती है। रसोई सुस्वादु और शुद्धतापूर्वक करती है। ऐसी कुलवन्ती भार्या होनेसे गृह स्वर्ग बन जाता है, थोड़ीसी भी आय (आमदनी) से ऐसी गृहस्थीका निर्वाह बड़े सुचारु रूपमें बड़े अच्छे ढंगसे होता जाता है। और लोग कहते हैं कि यह स्त्री कैसी सती लक्ष्मी है, वही गृहस्थी सुखी है।

बहुतेरी श्रीमतियाँ ऐसी होती हैं कि जहाँ उन्होंने गृहस्थीमें पैर रखा कि गृहस्थी तीन तेरह हुई। जहाँ तहाँ

सामान बिखरा पड़ा रहता है, मकान मैला होता है, प्रत्येक कामर्में अधूरापन रहता है और प्रत्येक बातमें अव्यवस्था (ढील-पोल) होती है उनकी मूर्खतासे गृहमें फूट और नानाप्रकारके रोग फैलते हैं क्योंकि मैलापन और बुरी रसोई तथा चित्तकी अस्वस्थता ही रोगके कारण हैं। जहाँ आलसी, दरिद्र और मूर्ख स्त्रियाँ हुई वहाँ शोक, दुःख और अकीर्तिका गृह ही समझिये। ऐसी स्त्रियोंकी सन्तति भी इन्हीं जैसे कुलक्षणोंसे दूषित होती है। बुद्धि, विद्या, धर्म, सत्य, शील और संयम आदिसे तो वह बिल्कुल कोरी होती है। हाँ, सप्त व्यसनोंमें से कोई एक अथवा अनेक व्यसन, रोग और अनेक कुलक्षण अवश्य ही उसमें जन्मसिद्ध होते हैं। वह अल्पायु होती है। सो महाराज घबराइये नहीं। इन्हीं सब बातोंपर और बहुत कुछ अनुभवपर यह स्त्री-परीक्षा निर्भर है और इसी तरह मैंने भी परीक्षा की है। क्षमा कीजिए।"

राजाने इसे भी पुरस्कार दिया और घीकी मात्रा बढ़वा दी। राजाके मनमें बड़ा कौतूहल हुआ और उसने चौथे सूरदासको बुलवाकर कहा—सूरदास! तुमने कहा था कि तुम पुरुष-परीक्षा अच्छी जानते हो। अच्छा, निस्संकोच रहो, मेरी सच्ची परीक्षा करो। सूरदासने कहा— "महाराज! यदि आप पीछे 'क्यों और कैसे' करना चाहें, तब तो क्षमा कीजिए; मुझसे परीक्षा न कराइये और यदि जितना कहूँ उतने ही

पर सन्तोष कर लेना चाहें तो आज ही क्या करूँ, मैंने बहुत पहिलेसे आपकी परीक्षा कर रक्खी है;" राजाने इस बातको स्वीकार करके कहा कि अच्छा कहो। तब सूरदासने कहा—"महाराज! आपकी आज्ञानुसार निवेदन है कि आपका स्वभाव वैश्यों—बनियों—का-सा है।" सारी सभा समेत राजा बड़ा ही चकित हुआ। राजा विचारवान् था। सोचने लगा—"क्या मेरी माता दुराचारणी है? सच है, अग्नि, जल, नदी, सर्प, सिंह, स्त्री, जुआरी, चोर और जार आदि कुटिल स्वभाववालोंका विश्वास क्या?" इसीलिये तो किसी कविने कहा है—

"तीनों ही त्रिलोक बीच, जेती हैं वनस्पती,
लेखनी सम्हारे ताकी, करके तुरत जू।
तीनों ही त्रिलोक बीच, जेते हैं समुद्र द्वीप,
पर्वतकी स्याही कर, आनके भरत जू॥
तीनों ही त्रिलोक बीच, परी है जो जेति भूमि,
ताहीको सम्मार आछे, पत्र-पत्र करत जू।
शारदा सहस्र कर करके लिखित सदा,
कामिनी चरित्र तोऊँ, लिखे न परत जू॥"

राजा इसी भाँति सोचता-विचारता सभासे उठ गया और अपनी माताके पास पहुँचा। बड़ी नम्रताके साथ कहने लगा कि माँ! भवितव्य बलवान् है। बड़े-बड़े देव-चक्रवर्ती

आदि उसके चक्रमें आ जाते हैं। इसी भाँति यदि तुम भी आगई हो तो चिन्ता नहीं। सत्य कहना कि मेरे स्वभावमें क्षत्रियोचित उदारतादि गुण क्यों नहीं हैं? माताने कहा कि पुत्र! बात यह है कि एक दिन मैं छतपर बैठी-बैठी अपना शृंगार कर रही थी, उसी समय कल्याणराय सेठ अपनी छत-पर बैठा एक सुन्दर रागिनी गारहा था। अकस्मात् दोनोंने दोनोंको देखा; अवसर पा दुर्भावनाने जन्म लिया। ठीक उसी रातको तुम्हारे पितासे मैं गर्भवती हुई। अतः और कुछ नहीं है, केवल उस दुर्भावनासे ही तुमपर यह प्रभाव पड़ा है, क्योंकि ठीक उसी दिन मैं मासिकधर्मसे निश्चिंत हुई थी। पुत्र! तुम विश्वास करो। मैं किये हुए पापों को छुपा-कर घोर अपराधिनी नहीं होना चाहती। जो बात थी मैंने स्पष्ट कह दी है।

राजा वहांसे दरबारमें आया। चारों सूरदासोंका अच्छा वेतन बांधकर उसने उन्हें सभामें रक्खा। जरा सोचो! माताके विचारोंका, और विशेषकर ऋतुकालके समय उत्पन्न हुए विचारोंका सन्ततिपर कितना असर पड़ता है—कहां तो रणशूर, तपशूर और दानशूर क्षत्रियका पुत्र और कहां क्षुद्र-हृदय, अनुदार और स्वार्थ-तत्पर वणिकोंका सा स्वभाव?

ऋतुकालमें कैसी सावधानी रखनी चाहिये सो संक्षेपमें लिखी जाती है—

ऋतुस्राव होना प्राकृतिक नियम है, अतः वह स्त्रियोंको हर महीने हुआ ही करता है। कभी-कभी यह कुछ जल्दी और कभी कुछ देरीसे भी होता है, परन्तु जब नियमित रूपसे कुछ अधिक-कम दिनोंमें (पन्द्रह या बीस दिन में) अथवा अधिक ऊँचे दिनोंमें (डेढ़-डेढ़, दो-दो महीने या इससे भी ज्यादा दिनोंमें) आने लगे तो समझना चाहिए कि यह किसी रोगसे विकृत होगया है; तब इसकी किसी योग्य चिकित्सकसे चिकित्सा करानी चाहिए।

किसी रोग आदिके कारणसे यदि १८ दिनके पहिले रजोदर्शन हो तो उसकी शुद्धि स्नान मात्रसे हो जाती है और यदि १८ दिनके पीछे हो तो उसका पूरा अशौच मानना चाहिए।

रजोवती स्त्रीको किसी भी प्रकारकी कुचेष्टा और नदीमें स्नान करना सर्वथा वर्ज्य—छोड़ने योग्य—है।

जब स्त्रीको मालूम हो जाय कि रजोदर्शनसे मेरे कपड़े अशुद्धहो गए हैं, तो उसी समयसे किसी वस्तुको न छूना चाहिए। यदि भोजन करते समय रजोदर्शन हो तो भोजन छोड़कर स्नान करे पश्चात् भोजन करे। जो ऐसी अवस्थामें यदि बच्चेको किसीवस्तुके स्पर्श करानेकी जरूरत हो तो उसे स्नान कराले।

एकान्त स्थानमें रहे और आत्म-चिन्तवन करे। अपनी अवस्थाको विचारे और देश, जाति और धर्मकी उन्नतिके उपाय सोचे। शय्यापर शयन न करे, किन्तु चटाईपर सोवे

यदि चटाईपर न सो सके तो ऐसे कपड़ों पर सोवे जो नित्य धोए या धुलाए जाकर शुद्ध किये जा सकें। गरिष्ठ भोजन और पान-इलायची आदि मसाले भक्षण न करे, शृंगार न करे, आँखोंमें सुरमा न आंजे, न लगावे। गान न गावे। हँसी मसखरी न करे, मन्दिरमें न जावे। पतिसे भी बात-चीत या हँसी न करे, ऐसे समयमें यदि कोई मूर्ख पति काम-सेवन करता है तो उसे गर्मी सुजाक, आदि भयानक रोग हो जाने की अत्यधिक सम्भावना रहती है। वैद्यकके सिद्धान्तोंके अनुसार इस समयके काम-सेवनसे एक तो गर्भ नहीं रह सकता और यदि कदाचित् रह जाय तो बुद्धिहीन दुष्ट, हीनाङ्ग (अपूर्णाङ्ग) और कुमार्ग-प्रिय सन्तान होती है। रजस्वला स्त्रीके स्पर्शसे बहुत ज्यादा बचना चाहिए। उसकी परछाईं मात्रसे, ताजे बने और बनते हुए बड़ियाँ अचार बिगड़ जाते हैं।

रक्तस्राव जिस दिनसे आरम्भ हुआ हो उसके चौथे दिन (अर्धरात्रिके पीछे आरम्भ हुआ हो तो दूसरे दिनसे शुमार करना चाहिये) स्नानकर शुद्ध हो गृहस्थी सम्बन्धी कार्य और शृंगार आदि कर सकती है। पांचवें रोज नहा-धोकर भगवानकी पूजन, शास्त्र-स्वाध्याय और रसोई आदि भी कर सकती है। जो स्त्री इस प्रकार नियमपूर्वक आचरण करती है, वह यदि पहले दिन (ऋतु स्नानके पश्चात्) गर्भवती हो जाय तो सुन्दर सौभाग्यशालिनी, सुलक्षणा और धर्मात्मा सन्ततिको,

यदि दूसरे दिन गर्भवती हो तो किसी सुयोग्य एवं प्रतापयुक्त सन्ततिको और इसी तरह तीसरे और चौथे दिन आदिमें गर्भ धारण करनेपर भी योग्य सन्ततिको जन्म देती है। भगवज्जिनसेनाचार्यने आदिपुराणमें गर्भाधान-संस्कारसे लेकर मोक्षपर्यन्त संस्कारोंका विशद्-विवेचन किया है—उन्होंने आधान, प्रीति और सुप्रीति आदि ५३ प्रकारकी गर्भान्वय क्रियाएँ—संस्कार, २८ प्रकारकी दीक्षान्वय क्रियाएँ और ७ प्रकारकी कर्त्रन्वय क्रियाएँ निरूपण की हैं*। उनके अनुकूल प्रवृत्ति (संस्कारोंके समय दम्पत्तिद्वारा धर्मकी भक्ति, पूजन); गार्हपत्य आदि अग्नित्रय-संस्कारोंमें नियोजित मन्त्रोच्चारणपूर्वक हवन करना; शास्त्र-स्वाध्याय और अहिंसादि व्रतोंका धारण तथा पात्र-दान करना आदि आगमोचित कर्त्तव्योंका अनुष्ठान करनेसे धार्मिक दम्पति–स्त्री-पुरुष—भगवान अकलङ्क-निकलङ्ककी तरह धर्मवीर, कर्मवीर, उदार, स्वार्थत्यागी, सदाचारी और सुशिक्षित सन्तान उत्पन्न करनेमें समर्थ होते हैं। बहिनो! इससे ऋतुकालीन आगमोचित अशौचका पालनकर उक्त नैतिक और धार्मिक सत्कर्त्तव्योंके पालनमें प्रवृत्ति करो जिससे ऐहिक और पारलौकिक सुख प्राप्त हो।

———

मिथ्यात्व-निषेध

कुगुरु, कुदेव, कुधर्म औ, है अगृहीत मिथ्यात्व।
सेवन कर जग-जन दुखी भोगें कर्म असात॥

तुमने क्या कभी यह भी विचार किया है कि जीव-पुद्गल आदि षट्द्रव्यों और जीव, अजीव, आस्रव, आदि सात तत्त्वों-का स्वरूप क्या है? और इनका श्रद्धान करनेसे क्या होता है? क्या कभी यह भी सोचा है--मैं कौन हूं? कहाँसे आई हूं? मेरा इन कुटुम्बियोंसे सम्बन्ध होनेका कारण क्या है? इस पर्यायके पीछे मुझे कहाँ जाना होगा? मेरे साथ कौन-कौन सी सामग्री जाएगी? मैं रात-दिन जो कुछ बुरा करती हूं इसका फल क्या होगा? परलोक क्या है"? नहीं तुमने कभी इन बातोंको नहीं सोचा इसीलिए मूर्खों के समान मनमाने मार्गपर चल रही हो। तुम्हें आवश्यक है कि सुगुरु, सुदेव और सुधर्म की श्रद्धा करो, निःस्वार्थी विद्वानोंके व्याख्यान सुनो, एवं स्वानुभव बढ़ानेवाले—शास्त्रोंका अध्ययन-मनन करो तब तुम्हें मालूम हो जायेगा कि आत्मा किस तरह अपने आपको भूल रहा है, शरीरसे प्यार कर रहा है और उसके लिये—उसीके भरण, पोषण और रक्षाके निमित्त—मनुष्य, तिर्यंच और नर्क-पर्यायोंमें भ्रमण करता है, पुण्य-पाप उपार्जन करता है और

---

* देखो आदिपुराण पर्व ३७-३८

तदनुसार नानातरहके सुख-दुखोंको उठाता-फिरता है। कोई भी देवी-देवता, या परमेश्वर भी उसे रोकनेमें समर्थ नहीं हैं। प्रत्येक आत्मा अपनी भलाई और बुराई करनेमें स्वतन्त्र है। उसके मार्गमें स्वयंके सिवाय अन्य-कोई दूसरा काँटे नहीं बिखरा सकता—रोड़े नहीं अटका सकता। इसलिये हमें मिथ्या कल्पनाओंको छोड़कर गृहस्थके धार्मिक षट्कर्मोंमें दत्त-चित रहना चाहिये।

बहिनों! सबसे पहिले मिथ्यात्व-विषको ही आत्मासे निकालना चाहिए।

आचार्य सोमदेव सूरि × ने यशस्तिलकमें लिखा है कि जिन रागी, द्वेषी, मोही और अज्ञानी व्यक्तियोंमें सत्यार्थ—ईश्वर होने योग्य सद्गुण—सर्वज्ञता और वीतरागता आदि—नहीं हैं, उनको देव—ईश्वर मानना तथा मद्यपान, मांस-भक्षण और हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह आदि दुराचार—पाप-वृत्ति—को सदाचार-धर्म मानना एवं प्रतीति-बाधित तत्त्वोंको मोक्षोपयोगी तत्त्व समझना यही मिथ्यात्व है।

× अदेवे देवताबुद्धिमव्रते व्रतभावनाम्।
अतत्वे तत्वविज्ञानमतो मिथ्यात्वमुत्सृजेत्।
तथापि यदि मूढत्वं न त्यजेत् कोऽपि सर्वथा;
मिथ्यात्वे नानुमान्योऽसौ सर्वनाशो न सुन्दरः ॥२॥
यशस्तिलके सोमदेवसूरि.।

विवेकीको इसका त्याग करना चाहिए। उदाहरणार्थः—नदी और तालाब आदिमें धर्म समझकर स्नान करना, पत्थरों के ढेर लगानेमें धर्म मानना, पहाड़से गिरने और अग्निमें जलमरनेसे धर्म समझना, रागी, द्वेषी और मोही देवताओंकी ऐहिक—धन-पुत्रादिकी—लालसासे उपासना करना, संसारमें घुमानेवाले दम्भी और पाखण्डियोंका सत्कार करना, ग्रहणके समय सूर्य और चन्द्रमा आदिको पूजाके निमित्तसे स्नान करना, गौको अनेक देवताओंका निवास समझकर पूजना तथा उसके मूत्रको पीना; हाथी, घोड़ा और रथादिकी पूजा करना और पृथ्वी, यक्ष, शस्त्र और पहाड़ोंकी पूजा करना—इन सबको मिथ्यात्व समझना चाहिए। जो व्यक्ति उक्त मिथ्यात्वमें प्रवृत्ति करता है वह ऐहिक और पारलौकिक सुखोंसे वंचित रहकर अपना सर्वनाश करता है।*

अतः बहिनोंको उक्त प्रकार मिथ्यात्वका त्याग कर देव, गुरु और धर्मकी श्रद्धा करके सम्यक्त्व धारण करना चाहिये।

सच्चे देव, शास्त्र और गुरुको माननेसे चित्त निर्मल होता है, राग-द्वेष घटता है, जिससे पुण्यके साथ सुखकी प्राप्ति होती है, परन्तु रागी द्वेषी देव और गुरु तथा असर्वज्ञ

*नोट—उक्त प्रकरण नीतिवाक्यामृत-भाषाटीकाके पृष्ठ १९ पर से संकलित किया गया है।

भाषित धर्मके समागमसे कषायें बढ़ती हैं और पापका बन्ध होता है जिसके फलस्वरूप दुःख होता है। कहनेका सारांश यह है कि जैन सरीखी उत्तम जातिमें श्रावक सरीखे उत्तम कुलमें जन्म लेकर सर्वोत्कृष्ट सर्व-दोष-रहित और सर्व-गुण-सम्पन्न जिनेन्द्रके उपासक बनकर हम क्यों कुदेवआदिकी श्रद्धामें प्रवृत्ति करते हैं? यह तो वही हुआ कि अपने हीरेका कुछ भी मूल्य न करते हुए दूसरोंके कांच लेनेको दौड़ाजाय। उन्हें सोचना समझना चाहिए और जैनधर्मद्वारा अपना कल्याण करना चाहिए। दूसरोंकी देखादेखी हमें गड्ढेमें न गिरना चाहिए—कुगुरु, कुदेव और कुधर्मकी पूजाअर्चासे बचना चाहिए। थोड़ा विचार करना चाहिए कि जैन-धर्म और अन्य धर्मोंके सिद्धान्तोंमें कितना और कैसा अन्तर है? कहां तो जैनधर्म मोक्षका साधक और कहाँ अन्य धर्म मोक्षके बाधक—संसारके साधक। =यह जीव बिना पूरी वीतरागताके कदापि निष्कर्म—मुक्त—नहीं हो सकता और उसे वीतरागता प्राप्त करानेका साधन संसारमें एक जैनधर्म ही है, जिसमें मानों वीतरागता कूट-कूटकर भरी गई है। कवि भूधरदासजी-

---

=जीव जबतक शुभाशुभ कर्मोंको करता है तबतक नियमसे उसका जन्म मरण होता रहता है, इसको संसार कहते हैं, परन्तु जब यह जीव कर्मरहित हो शुद्ध अवस्थाको प्राप्त हो जाता है, तब मुक्त कहलाता है। दूसरे मतोंमें बहुधा स्वर्गको ही मोक्ष माना है। अथवा मोक्षका—

ने अपने जैन शतकमें एक जगह कहा है—

कैसे कर केतकी कनेर एक कही जाय,
आक-दूध गाय-दूध अन्तर घनेर है।
पीरी होत *रीरी पै न रीस ×करै कंचनकी,
कहाँ काग-वानी कहाँ कोयलकी टेर है॥
कहाँ भानु भारौ कहाँ आगिया विचारो,
कहाँ पूनोंकौ उजारो कहाँ △मावस-अँधेर है।
पच्छ छोरि पारखी निहारौं नेकु नीके कर,
जैन-वैन और-वैन इतनौं ही फेर है॥

सम्पूर्ण शास्त्र यही कहते हैं कि विष-खाना अग्निमें जलना वा जलमें डूब मरना आदि अज्ञानताके कार्य तो एक ही जन्ममें दुःख देनेवाले हैं, परन्तु आत्म-स्वरूपके भुलानेवाले, अकर्तव्यके करानेवाले ज्ञानशून्य एवं जगतको ठगनेवाले कुगुरु कुदेव आदिका पूजन-वंदन अनेक जन्मके, जन्म मरणका कारण होता है। उपदेश सिद्धान्त रत्नमालामें कहा है—

सप्पो इक्कं मरणं, कुगुरु अणंता देइ मरणाई।
तो वर सप्पो गहियं, मा कुगुरु सेवयं भद्द॥

अर्थात् सर्पके काटनेसे तो एक ही बार मरण होता है,

स्वरूप यथार्थ नहीं कहा है। इसलिये वे धर्म सच्चे मोक्ष व उसके कारणोंसे भी अनजान हैं और इसीलिये मान्य नहीं है।

*पीतल ×बराबरी △अमावस्या

पर कुगुरुके सेवनसे अनंत मरण होते हैं । इसलिये हे भद्र-सज्जनो ! साँपका ग्रहण करना तो भला, परन्तु कुगुरुका सेवन सर्वथा त्याज्य है ।

जो स्त्रियाँ पुत्र, सम्पदा और सुख आदिकी इच्छासे ढोंगियोंको पूजती और मानती हैं, वे उनद्वारा ठगाई जाती हैं शास्त्रोंमें कहा है:—

जह कुब्वेस्सा रत्तो, मुसिज्जमाणोवि मस्सये हरिसं ।
तह मिच्छवेस मुहिया, गये पि ण मुणन्ति धम्म णिहं ॥

अर्थ :—जैसे कोई वेश्यासक्त पुरुष अपने धनादिको ठगाता हुआ भी हर्ष मानता है. वैसे ही मिथ्यात्व भावसे ठगाए हुए जीव अपनी धर्म-निधिके नाश होनेका कुछ भी विचार नहीं करते ।

जो स्त्री-पुरुष मन्दिरको नहीं जाते, निश्चिन्त हो दर्शन नहीं करते, शास्त्र नहीं सुनते और विद्वान पंडितोंद्वारा कभी तत्त्वोंके स्वरूपका निर्णय कर कर्तव्य और अकर्तव्य स्थिर नहीं करते, भला उनका विश्वास एक जगह कैसे स्थिर रह सकता है ? वे कभी तो उन्हें नमस्कार करते, कभी इनकी पूजा करते, कभी अमुकको नारियल चढ़ाते और कभी अमुकके यहां भंडारा करते हैं जैसे सड़ा नारियल या खोटा पैसा अनेक घरोंमें चक्कर लगाता फिरता है तैसेही उन स्त्री पुरुषों का माथा अनेक देवियोंके आगे फूटता फिरता है । धर्म

परीक्षामें कहा है:—

छप्पय—सर्व देव नित नमे, भिक्षुक गुरु माने,
सर्व शस्त्र नित पढ़े, धरम अधरम नहिंजाने;
सर्व विरत व्रतकरे, सर्व तीरथ फिर आवे,
परब्रह्मको छोड़, अन्य मारगको ध्यावे,
इस प्रकार जो नर रहें, इसी भाँति शोभा लहे।
आश्चर्य! पुत्र वेश्या तनो, कहो पिता कासों कहे॥

अजैन लोग जैनियोंकी दिल्लगी उड़ाते हैं और कहते हैं कि जैनी हमारे देवी-देवताओंकी कितनी निन्दा करते हैं, परन्तु छिपे छिपे किस तरह पूजन अर्चन आदि करते हैं, कैसे निर्लज्ज और दंभी हैं। इतना सुनते रहनेपर भी जैनी अपने आचरणोंको नहीं सुधारते।

जैनियोंके घरोंमें स्त्रियोंकी इतनी चलती है कि उनके सामने पुरुष मानों गुलाम ही हैं। कहावत है "जैनी अंधे हिन्दू काने, मुसलमान सुझाखे"। बात भी ठीक है—अपने शास्त्रोंद्वारा सुदेव, कुदेव, सुगुरु,कुगुरुका स्वरूप सुनने समझनेपर भी खोटे मार्गपर चलते हैं, इसीलिये जैनी अंधे हैं। हिन्दू काने यों हैं कि बिना समझे लकीरके फकीर बने सब देवोंको मानते पूजते हैं, केवल जैन-धर्मसे दूर जाते हैं। अपने ही शास्त्रोंमें लिखे हुए ऋषभावतारकी भी निन्दा करते हुए कहते हैं 'हस्तिना पीड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैन-मन्दिरम्

अर्थात् हाथीके पैरके नीचे दबकर मर जाना भला, पर जैन मन्दिरमें जाना अच्छा नहीं। उनके ऐसा कहनेका यही प्रयोजन है कि अगर लोग जैनमन्दिरमें जाकर प्रत्येक मार्गको अच्छी तरह समझ जायँगे तो हिन्दू धर्मसे उनकी श्रद्धा उठ जायगी, और मुसलमान 'सुभाखे' इस तरह हैं कि अपने इष्ट, सिवाय खुदाके, दूसरेको मानने पूजनेका विचार स्वप्नमें भी नहीं करते। वे साफ साफ कहते हैं—'जिसके ईमानमें फर्क है उसके बापमें फर्क है'। इन बातोंसे जाना जाता है कि जैनी लोग हाथमें दीपक लिये हुए जान बूझकर कुएँमें गिरते हैं।

जैनियोंकी स्त्रियोंमें यह खूब देखा जाता है कि उन्हें जैसे ही कोई पीड़ा हुई कि फौरन ओझा और जोगियोंकी पुकार हुई। वे लोग भी कोई तो पितरोंकी कुनट, कोई भूत प्रेत या चुड़ैलका लगना और कोई शनैश्चर आदिका प्रकोप बताते हैं और मनमाना लूटते और खसोटते हैं। भोली स्त्रियाँ भी पाखंडियोंके पाखंडमें आजाती हैं और शीतला, भैरों और महादेव आदिको नाना प्रकारसे पूजतीं, अंडे चढ़वातीं, दूसरोंसे बलिदान करवातीं, कब्रस्तानोंकी मानता मानतीं और ताजियोंको रेवड़ी चढ़ाती हैं। तावीज बंधवातीं, भभूत खातीं और न जाने क्या-क्या दंडे-डोरे करवाया करती हैं। गनीमत थी, यदि वे इससे सुखी भी होतीं, पर ऐसा नहीं होता है। इस तुच्छ

भ्रम-जालमें पड़कर वे केवल दुःखी ही हैं और होती हैं। यदि जरा भी विचारशक्तिको काममें लावें तो स्वयं सोच सकती हैं कि ये तुच्छ देव और गुरु जब स्वयं ही दुःखी होते हैं तो दूसरोंके दुःखको क्या दूर करेंगे। फिर 'होनहार होके रहे' सुख-दुःख कर्मानुसार होते हैं, उसमें अन्तर डालनेको कोई भी समर्थ नहीं है।

हिन्दुओंके यहाँ एक कविता कही जाती है और वह यह है :—

देवी दुरगा सेढ़ शीतला, सब मिल हरिपै जाँय।
बोलीं हरि! सब तुमको पूजें, अब हम कैसे खाँय॥
तब हरिजी झट यों उठ बोले, भूमण्डलमें जाओ।
जिस घर मेरो नाम नहीं हो, उसको लूटो खाओ॥

जिससे मालूम होता है कि हिन्दू लोग भी और खासकर समझदार हिन्दू लोग इन्हें—देवी देवताओंको—नहीं मानते। कोई जैन धर्मके तत्त्वोंको न समझनेवाली स्त्री यहाँ कह सकती है कि बाल-बच्चेवाले आदमी यदि ऐसा न करें तो चल नहीं सकता। हम ऋषि मुनि तो हैं ही नहीं जो सब त्यागकर बैठ जाँय। बालबच्चोंका साथ है, यदि दुर्गा और शीतला आदि-को न मानें तो उनकी—बालबच्चोंकी--रक्षा कौन करे? उनसे मैं पूछता हूं कि देव देवियोंके पुजारियोंकी—उन स्त्री-पुरुषों की—जिनकी नाक देवी देवताओंके आगे नमस्कार करते २

रगड़ गई हैं—घिस गई हैं, सन्तति (बालबच्चे) क्यों मर जाती है ? माता शीतलाके पूजनेवाले--बड़ी भक्ति करनेवाले स्त्री-पुरुषोंके बालबच्चे माताकी ही बीमारीमें क्यों मर जाते हैं ? क्या शीतला उनकी रक्षा नहीं कर सकती। (हाँ वास्तवमें नहीं कर सकती) तो फिर पूजा पाठ किसलिए ? अच्छा, अब दूसरी तरहसे सोचें। अंग्रेज, मुसलमान और दूसरे २ वे मनुष्य जो देवी देवताओंको नहीं मानते---नहीं पूजते, उनकी उल्टी निन्दा और अविनय करते हैं, उनकी सन्तान क्यों भली चंगी रहती है ? शीतलाके रोगसे अच्छी क्यों हो जाती है ? सबकी सब मर क्यों नहीं जातीं ? जो कुछ भी अच्छा या बुरा होता है सब अपने भाग्यसे, सब अपने शुभ या अशुभ कर्मके फलसे; कोई देवी, देवता, पीर, पैगम्बर कोई क्षेत्रपाल या कोई तीर्थंकर तुम्हारे भाग्यको बदल नहीं सकता। अपने कर्मोंका बुरा-भला फल तुम्हें देखना ही पड़ेगा, भोगना ही होगा। उसको कोई भी टाल नहीं सकता। प्राकृत पिङ्गलसूत्र २ परिच्छेद १०२ में कहा हैः—

पाण्डव वंसहि जन्म करीजे।
संपअ अज्जिम धम्मक दीजे॥
साउ जुहिट्ठिर संकट पाआ।
दैविक लिलिअ केण मिटाआ॥

अर्थ—पाण्डववंशमें जन्म लेने वाले, उत्तम सम्पदा

और धर्मका धारण करनेवाले युधिष्ठिर सरीखे महाराज भी जब संकटको प्राप्त हुए, तो कहिए भाग्यको कौन मेट सकता है ? स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षामें कहा है—

आउक्खयेण मरणं, आउ दाऊण सक्कदे कोवि ।
तह्मा देविन्दो विया मरणाउण रक्खदे कोवि ॥१॥

अर्थ—आयु कर्मके क्षय होनेसे मरण होता है। आयु-कर्म देनेको कोई समर्थ नहीं है। इसी कारण देवपति–इन्द्र–भी किसीको मृत्युसे नहीं बचा सकता।

और भी देखिए। भगवान आदिनाथ—प्रथम तीर्थङ्कर कर्मभूमिके प्रवर्तक ब्रह्मा, भरत चक्रवर्तीके पिता और इन्द्रादि देवोंके पूज्य थे, वे भी अन्तराय कर्मके प्रबल उदयसे छः महीने तक निराहार विहार करते रहे। परम पुरुषोत्तम रामचन्द्रको वनवास और सती सीताको वियोग प्राप्त हुआ। इसी प्रकार नवम नारायण श्रीकृष्णकी उत्पत्तिके समय न तो किसीने गाया और न मृत्युके समय किसीने रुदन ही किया। इन दृष्टान्तोंसे जान पड़ता है कि जैसे अच्छे और बुरे कर्म किये जाते हैं, उनके अच्छे या बुरे फल स्वयमेव मिलते ही हैं। जो स्त्रियाँ इतना जानकर भी योग्य उपाय नहीं करतीं वे दीपक हाथमें लेते हुए कुएँमें गिरती हैं। कैसी मूर्खताभरी बातें हैं कि बच्चोंको शीतला निकलनेपर इलाज तो करती नहीं, करती क्या हैं—माता दुर्गाके गीत गाती हैं, उन्हें पूजती हैं,

पूआ पूरी ले और माथेपर अंगीठी रख माताके मठमें, उसे मनाने जाती हैं, दण्डवत् करते करते मठ तक दौड़ती हैं। उन्हीं अपनी मूर्ख बहिनोंके लिए, माताकी बीमारीकी उत्पत्ति संक्षिप्त में लिखता हूं। आशा है, वे अपनी अज्ञानता और कुदेवादिका पूजन—भजन छोड़ेंगी।

प्रकट हो कि माताके पेटकी गर्मीका कुछ अंश सन्तानमें आ जाता है। वही विकार ऋतु, खानपान या और कोई ऐसा ही कारण पाकर बालकके शरीरसे चेचकके दाने-फुन्सियों द्वारा बाहर निकलता है, जिसे लोग चेचक, भवानी, माता और शीतला आदि नामोंसे पुकारते हैं। यह केवल शारीरिक विकार है। किसी देव-देवीका कोप नहीं है। इसके लिए लोग टीका को अच्छा उपाय बताते हैं। कभी-कभी टीकेकी सामग्री अच्छी न होनेसे जितना फायदा होना चाहिए, उतना नहीं होता। अर्थात् टीका लगनेपर भी माताकी बीमारी कभी-कभी निकल ही आती है।

इस बीमारीमें पहिले दो-तीन दिन तक ज्वर आता है। फिर सिरसे फुन्सियोंका निकलना आरम्भ होता है और थोड़े दिनोंमें सारे बदनपर फुन्सियाँ हो जाती हैं। जब इस तरह चेचक निकलनेका हाल मालूम हो, तो घरमें कोई पक्वान्न न बनाना चाहिए। रोगीकी माताके सिवाय दूसरी रजस्वला स्त्रियोंकी दृष्टिसे उसे—माताके रोगीको बचना चाहिए। सर्व-

ठण्डी—चीजें अधिकतर न खिलानी चाहिए, किन्तु तर भोजन उसे देना चाहिए और सफाईके साथ रखनी चाहिए। मातक्के गीत गा-गाकरके अपने पुत्रको हाथसे न खोना चाहिए, या अन्धा, बहरा आदि न बनना चाहिए। देखा गया है कि इन दिनों बहुतेरी स्त्रियाँ इसलिए मन्दिर नहीं जातीं कि, कहीं जिनेन्द्रके दर्शन करनेसे मातादेवी रुष्ट न हो जाय! चलो अच्छा हुआ। यों ही दर्शन करने, जाप्य देने और स्वाध्याय की इच्छा न थी, अब उसके लिये मूर्खतापूर्ण पूरा कारण (कहने-सुननेमें) मिल गया। सच है 'विनाशकाले विपरीत-बुद्धिः' अर्थात् जब बुरे दिन आते हैं तब बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है। सारांश यह कि यदि वे ही भोली स्त्रियाँ मन्दिर जाएँ, शास्त्र-स्वाध्याय करें और विद्वानोंके व्याख्यान सुनें तो ऐसी मूर्खताओंमें न पड़ें, क्योंकि कर्तव्य अकर्तव्यका ज्ञान उन्हें उन्हीं बातोंसे—शास्त्र-स्वाध्याय और धर्मोपदेशसे—हो जाय व वे अपना भला और बुरा समझने लगें। कोई बहिन प्रश्न करती है कि कुगुरु, कुधर्म और कुशास्त्रसे यदि कुछ नहीं होता तो फिर क्यों इतने मनुष्य उन्हें मानते हैं? इसका उत्तर यह है कि बहुतसे आदमी यदि शराब पीते हैं तो कुछ शराबका पीना अच्छा नहीं समझा जा सकता। अथवा यदि बहुतसे आदमी चोरी करते हैं तो चोरीका करना अच्छा नहीं समझा जा सकता। कुदेव आदिकके पूजन आदिका इसलिये

विरोध है कि उनके पूजनसे राग, द्वेष आदि दुर्भावोंकी वृद्धि होती है, जिनसे पापकर्मोंका बन्ध होता है, जो दुःखका कारण है। पर सुगुरु, सुदेव और सुधर्मकी पूजा—वंदना-से विषय,कषाय घटकर परिणाम निर्मल होते हैं। जिससे पुण्य कर्मके बन्धसे इष्ट सामग्रीका समागम होता है।

बालकोंके अज्ञानी, दुर्बुद्धि और अनाचारी होनेका एक कारण कुसंस्कार भी है। जो स्त्रियाँ नीच, व्यभिचारी और जगतके ठगनेवालोंके फन्देमें पड़ती हैं, वे अपना धर्म, कर्म, शील और श्रद्धान रूपी धन खो बैठती हैं। आजकल साधु, फकीर, भट्टारक और ऐसे ही अन्य श्रद्धा-भक्ति-भाजन व्यक्ति महा अवगुणोंकी खानि हो रहे हैं— महा बने हुए होते हैं, अतः स्त्रियोंको चाहिए कि स्वप्नमें भी इन लोगोंके हाथ न आवें, ये पाखण्डी और ठग लोग—ये रंगे हुए लड़ैये, ये बगुलाभक्त जानबूझकर स्त्रियोंको बिगाड़ते हैं। ये लोग धर्मात्माओं-सरीखे नाम और वेश रक्खे हुए खूब माल खाते और मजा उड़ाते हैं। ये इन्द्रियों और मनको वशमें करना तो दूर रहा, उल्टे व्यभिचारके साज सजते हैं और धर्मकी ओटमें चोट खेलते हैं, टट्टीकी आड़में शिकार करते हैं। धर्मबुद्धि और सच्ची मित्रताके सामने उनकी दाल नही गलती। जब समाज का यह हाल है, तो क्यों न सारे दुर्गुणोंसे युक्त सन्तान होवे, परन्तु उन धर्मप्राण सच्ची स्त्रियोंकी सन्तान पुण्यके प्रसादसे

सुशील, बलवान, गुणवान और विद्वान होती है। धर्मके प्रभाव से ऐसी स्त्रियोंकी सन्ततिको रोग, पीड़ा आदि भी नहीं होती और जो होती भी है तो शीघ्र शान्त हो जाती है। पुरुषोंको चाहिए कि ऐसे ढोंगी मायावी लोगोंके पास अपनी स्त्रियोंको व बहिन-बेटियोंको जानेसे बचावें।

धर्मात्माकी तो परछाईं मात्रसे दूसरोंके विघ्न, कष्ट, रोग और शोक दूर हो जाते हैं। धर्मकी महिमा अचिन्त्य है। पद्म-पुराणमें परम शीलवती श्री विशल्याकी कथा लिखी है कि उसके पूर्व जन्मके जप और शीलके प्रभावसे उसके स्नानोदक के—स्नान किए हुए पानीके—स्पर्शसे देशमें फैला हुआ मरी रोग शांत हो गया। उसीसे लक्ष्मणकी शक्ति और घायल सैनिकोंके घाव—कष्ट दूर होगए—घाव भर गए। यह सब सम्यग्दर्शनका ही प्रभाव है। और सच भी है क्योंकि जिससे सम्यग्दर्शनके प्रभावसे मोक्षरूपी अक्षय सम्पदा प्राप्त हो जाती है—जन्म-मरण जैसा अद्वितीय प्रबल रोग दूर हो जाता है, तो साधारण शारीरिक रोगोंका कहनाही क्या है?

इस प्रकार संसारमें भटकनेवाले मिथ्यात्वको छोड़, अर्हंत देव, निर्ग्रन्थ गुरु और दयामयी धर्मको सेवनकर षट्द्रव्य सप्त तत्त्व, नव पदार्थका स्वरूप जानो। आत्माके सच्चे धर्मका श्रद्धान कर सच्चा सुख पाओ। मनुष्य-जीवनका यही लाभ है।

समयकी आवश्यकताके अनुसार स्त्रियोंकी कुछ और भी

शिक्षाएँ यहाँ लिखी जाती हैं। आशा है स्त्रियां ध्यान देंगी।

अविद्याके प्रभाव और कुसंगतिके प्रभावसे जैन स्त्रियाँ भी विवाह और पुत्र-जन्मके समय ऐसे बुरे गीत—निर्लज्ज गालियाँ—गाती हैं, जो उच्च जैनकुलके सर्वथा विरुद्ध है। सोचो तो कि जहाँ अपने माता, पिता, सास, श्वसुर आदि गुरुजन बेटा-बेटी और जातिके जेठे नरनारी आदि बैठे हों वहां गालियां गाकर; उन फूहड़; कर्णकटु, सद्भाव-भंजन और क्षुद्रता-व्यंजक शब्दोंकी धारा बरसाकर, स्त्रियाँ क्या लाभ सोचती हैं? उन्हें कुछ लाज नहीं आती? जिन घरकी बहू बेटियां, और तो और, भरे बाजारमें, सभी तरह जेठे बड़े स्त्री पुरुषोंके सामने कुछ भी संकोच न करें, यह कितने गजबकी बात है। बड़ी प्रसन्न हो होकर सदाचारिणी स्त्रियोंको गालियाँ देना—लांछन लगाना—व्यभिचारिणी कहना, कितने दुःखकी बात है। यह केवल उन स्त्रियों या उनके पतियोंकी अज्ञानता है। इन निर्लज्जता भरे फूहड़ गीतोंके गानेसे छोटी पुत्रियोंके कोमल हृदयोंपर उनकी इन बातोसे बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

विवाह सरीखे पवित्र कार्यों में तो, इसका पूरा-पूरा मौका मिलता है। फेरेके दिन पुरुष तो वरको साथ ले कन्या-पक्षके यहाँ फेर फिराने चले जाते हैं और यहां अवसर पाकर स्त्रियां अपनी कौटुम्बिक सहेलियों और नीच जातिकी स्त्रियोंके साथ

इकट्ठी हो एक सुन्दर युवतीको पुरुषके वेषमें करके, उसका एक दूसरी स्त्रीसे काल्पनिक सम्बन्ध जोड़ती हैं। अथवा कभी कभी यह सम्बन्ध नहीं जोड़तीं । केवल स्त्रीको बाबा बना देती हैं और उसके साथ मनमानी कुचेष्टा करती हुई, अटूट और लवालव शृंगारके गीत गाती हुईं, तथा ढोल बजाती हुई सारे बाज़ारमें फिरती हैं। इस कृत्यको देख और सुनकर लज्जाको भी लज्जा आती है।

बहिनो! ऐसे अश्लील कृत्योंसे शिष्ट पुरुषोंको उन स्त्रियोंमें चरित्र-हीनताका सन्देह उत्पन्न होता है। अतः हमारी कुलीन बहिनोंको ऐसा करना उचित नहीं। गीत गाओ, उनकी मनाई नहीं है। पर ऐसे गीत गाओ जो देश, जाति और धर्मके कल्याणका मार्ग बतावें, स्त्री-पुरुषोंको बुरे मार्गों-परसे खींचकर अच्छे मार्गोंपर चलावें और साथही उनके चित्त-को भी प्रसन्न रक्खें।

विवाहके समय बहुतेरी स्त्रियाँ अज्ञानता और अन्धपर-म्परा की नीतिसे अथवा अन्य मतावलम्बियोंकी देखादेखी, देवो, दिहाड़ी, चक्की, चूल्हा, देहली, गणेश, कुम्हारका चाक और गधे आदिको पूजती और साथ-साथ निर्लज्ज गीत गाकर समझती हैं कि इन बातोंसे विवाह निर्विघ्न समाप्त होता है, यह उनका बड़ा भ्रम है । भला मूर्खतापूर्ण अकार्योंसे कोई कब सफलता पा सका है? जो धर्मात्मा और बुद्धिमान

हैं, वे जन्मसे मरण तकके सम्पूर्ण संस्कार शास्त्रानुकूल करके पुण्य बन्धन करते हैं जिससे अपने आप विघ्न आते ही नहीं। वे विवाहादिक संस्कारोंको भी शास्त्रानुकूल ही करते हैं। वर्तमानमें विवाह सम्बन्धी जो नेंग या प्रथाएं बुरी समझी जाती हैं उनकी वास्तविकताकी ओर दृष्टि देकर देखा जाय, तो जान पड़ता कि सुरीतियां ही धीरे-धीरे इस रूपमें आगई हैं, जिन्हें अब हम बुरी और हानिकारक निगाहसे देखने लगे हैं अगवानी (आतिशबाजी) शब्द हमें स्पष्ट बताता है कि वर-पक्षकी बरातके आनेपर पेशवाई करना—स्वागत करना—ही अगवानी है। आश्चर्य नहीं कि, इस स्वागतकी प्रथामें कभी आतिशबाजी भी चलाई जाती रही हो। सो और आदर-सत्कार तो गया। रही ये मुँह झुलसा देनेवाली और रुपयों का धुआँ उड़ा देनेवाली आतिशबाजी। और क्या जाने किसी मनचले रईसजादेने ही शायद इस हत्या कारिणी प्रथाको जन्म दिया हो। समयके फेरसे न जाने कितनी अच्छी प्रथाएँ उन्हीं पूर्व प्रथाओंके बचेखुचे ईंट-रोड़े के रूप में रह गईं। अथवा अनेकों नई प्रथाएँ उत्पन्न हो गईं। उन्हींमेंसे अनेकों के नाम भी अपभ्रंश हो गए। किसी देशमें विवाहके पूर्व कुम्हारके चक्केकी पूजन की जाती है, क्या जाने, शायद इसका प्रयोजन सिद्धचक्र—यन्त्रकी स्थापना हो। इसी यन्त्र को भाँवर-फेराके एक दिन पूर्व विवाह मण्डपमें लानेका नाम

गणावना—विनायकी है और भी कई क्रियाएँ ऐसी हैं जो अर्थका अनर्थ हो गई हैं। यदि उनके विषयमें छानबीन की जावे तो वे कोई अच्छी प्रथाएँ निकलेंगीं। चतुर व्यक्तियोंको चाहिये कि वे प्रत्येक कार्यका यथार्थ—वास्तविक स्वरूप ही जानकर ठीक रीतिसे व्यवहार करें। विवाह आदिमें भोजन वगैरह शुद्ध सामग्री तैयार कराने और पानीके छाननेका पूरा यत्न रखना चाहिए जिससे उत्तम जातिका आचार नष्ट न होने पावे। विवाहमें कभी भी कुप्रवृत्तियोंके बढ़ानेवाले, अनर्थ-दण्डरूप, लज्जाजनक, लोकनिंद्य, भण्ड गीत भूलकर भी न गाये जायें। ऐसे गीतोंसे शीलमें दूषण लगता है, लोग निंदा करते हैं कि ये उच्च जातिकी निर्लज्ज स्त्रियाँ गली-गली कैसी निंद्य गालियाँ बक रही हैं और अपनी जाति तथा धर्मको लांछन लगा रही हैं। जो बुद्धिमान स्त्रियाँ अपने लोक-परलोकको सुधारना चाहती हैं, वे ये भंड गीत गाना और अन्य मिथ्यात्व सेवन कुछ भी निंद्य कार्य नहीं करती, शुभ क्रियाएँ करती हैं और सुन्दर बोधप्रद और धार्मिक गीत गाकर पुण्य-लाभ लेती हैं, जिससे उनका, उनके कुलका और उनके धर्मका यश जगतमें फैलता है।

विधवा-कर्त्तव्य

नरभव यौवन, धान्य अरु सद् विवेक विज्ञान।
पाय धर्म सेवन करहु, काटहु कर्म सुजान॥

जो कदापि दुख आ परे, तो न करहु कछु सोग।
पूरव करनी विधि करो, धरि धीरज फल भोग॥
धर्म-कर्ममें अटल रहु, कटैं पूर्वकृत पाप।
पुण्यकर्म नूतन बँधे, सुख पावैं नित आप॥

यदि कोई स्त्री विधवा हो जाय तो अपने वय-प्राप्त पुत्रों के आधीन रहे और उन्हींकी आज्ञानुसार चले। यदि कुटुम्ब में कोई पालन-पोषण करनेवाला न हो तो उसे चाहिये कि अपने कुल और जातिके योग्य न्यायपूर्वक उद्योग करके अपना उदर निर्वाह करे और सन्तोष करके धर्ममें संलग्न रहे।

देखा जाता है कि कोई स्त्रियाँ विधवा हो जानेपर महीनों रोया करती हैं। माथा पीटतीं और छाती कूटती हैं, पर यह सब व्यर्थ है। उनका चिल्लाना सुनता कौन है? फिर इस दुखको कौन दूर कर सकता है? रोना तो मानो केवल मूर्खता दर्शाना है। बहुत जगह पुरुष और स्त्रियाँ फेरेको आती हैं, और मृत-व्यक्तिका गुणानुवाद करके उस बेचारीको और रुलाती हैं जिसमें उसे तीव्र आर्त परिणामोंद्वारा दुर्गति का बंध होता है।

उमास्वामी आचार्यने कहा है कि—

'दुःख शोक तापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थान्यसद्वेद्यस्य'

अर्थात्—दुःख करना, शोक करना, पश्चाताप करना, रोना, दूसरोंका वध करना और तीव्र करुणाजनक रुदन, ये

कार्य स्वयं करना और दूसरोंके प्रति करना अथवा उभय—दोनों—को करनेसे असाता वेदनीय कर्मका बन्ध होता है।

आचार्य सोमदेवने कहा है, कि—

अतीते वस्तुनि शोकः यद्यस्ति तत्प्राप्तिः।

अर्थात् इष्ट वस्तुके वियोग होनेपर यदि उसकी प्राप्ति होनेकी आशा है तो शोक करना उचित है।

परन्तु जब किसी प्रकार मिल नहीं सकती तब शोक करके पापबन्ध क्यों किया जावे। अतः हमारी विधवा बहिनोंको निरर्थक शोक करना छोड़ देना चाहिये—

और देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और त्याग इन ६ सत्कर्मोंमें प्रवृत्ति कर ऐहिक एवं पारलौकिक श्रेय—सुख प्राप्त करनेमें प्रयत्न भी होना चाहिये।

विधवा स्त्रीका बाहर न निकलना ही किसी तरह अच्छा है परन्तु कारणवश उसे निकलना ही पड़ता है। जैसे मन्दिर आदिको। उसे विचारना चाहिये कि पूजन, अर्चन, दर्शन और शास्त्र-पठन-भजन ही, तो पाप और दुःखके दूर करने वाले हैं। फिर मूर्खोंके कहनेमें लगकर दर्शन आदि करनेको न जाना कहाँकी बुद्धिमत्ता है। खाने-पीने, लेन-देन, आदि सांसारिक काम तो छूट ही नहीं सकते, होते ही हैं, परन्तु धर्मके लिए कोई प्रेरणा करनेवाला नहीं है। यदि तुम उसे भुला दो तो भले भुला दो, पर धर्मको भुलाकर तुम अपना

दुःख दूर नहीं कर सकती, प्रत्युत बढ़ाती ही है।

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार ॥१॥
दलबल देवी देवता, मात-पिता परिवार।
मरती बिरियाँ जीवको, कोई न राखन हार ॥२॥
आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कबहूँ इस जीवको, साथी सगा न कोय ॥१॥
मोहनींदके जोर जगवासी घूमें सदा,
कर्मचोर चहुँओर सरबस लूटें सुधि नहीं।

अतः बहिनो !'धर्मोरक्षति रक्षितः' अर्थात्— धर्मकी रक्षा करनेमे ही तुम्हारी रक्षा होगी इसे खूब समझलो। सदा धर्म का पालन करो। अनेकों विधवाएँ कुसंगमें पड़कर अपने धर्म को भूल जाती हैं। जिससे वे अपने दोनों कुलोंके नाम डुबोती हैं। उन्हें ऐसी पाप प्रवृत्ति- पुनर्विवाह और कुशीलसेवन आदिसे दूर रहकर अपने जीवनको त्यागरूप—आदर्श—बनाना चाहिये। उन्हें कुलटाओंकी छायासे भी दूर रहकर शृंगारके वर्धक भड़कीले वस्त्राभूषणोंको त्यागकर जैन शासनकी तरह शुद्ध शुभ्र वस्त्र पहिनना चाहिये।

अच्छे कुलीन घरकी बहू-बेटियोंकी प्रवृत्ति पापकी ओर कदापि नहीं जाती। क्या कभी अमृत जहर हो सकता है? नहीं हो सकता। उसी प्रकार कुलीन बहू-बेटियाँ कुलटाओं

के बहकावमें आकर क्या कभी पापमय प्रवृत्ति कर सकती हैं? नहीं कर सकतीं। वे बड़े ही धैर्यसे उस कर्मफलको—पति-वियोगके दुःखको—सहती हैं। और सहना ही चाहिये। कर्म फलका उदय अमिट है। प्राणी पंच पापोंसे लिप्त होते या लिप्त रहते समय तो इसका कुछ ख्याल नहीं करता, पर जिस समय उनके फलका उदय आता है, इष्टका वियोग और अनिष्टका संयोग होता है—तो हाय हाय करता है।

परन्तु उस समय हाय हायसे दुःख घटनेका नहीं, उलटा बढ़ता है। उसे तो कर्म फलको संतोष और प्रसन्नताके साथ भोग लेनेमें ही सार है। इस समय सोचना चाहिए कि पाप कर्मका उदय मेटनेको कोई समर्थ नहीं है। अंजना जैसी सती पूर्व पापके उदयसे २२ वर्ष तक पतिकी अवहेलना—तिरस्कार—सहती रही, कुटुम्बियोंने ही व्यर्थका कलङ्क लगाया, गर्भावस्थामें ही पहाड़ और जंगल-जंगल भटकना पड़ा—अनेक कष्ट सहे। सीता जैसी पतिव्रता को झूँठा कलङ्क लगाया गया, उसे पतिकी ही आज्ञासे नगरसे निकल वनमें जाना पड़ा और इसपर भी दुःखका अन्त न आया, अपने शीलकी परीक्षा देनेको अग्निकुण्डमें प्रवेश करना पड़ा।

अनेक महान व्यक्ति पापके उदयसे राजासे रंक और शूरसे क्रूर हो गये, तो हम सरीखोंकी तो बात ही क्या है? विचारना चाहिए कि कदाचित् मैंने पूर्व भवमें जिनेन्द्रके प्रति-

बिम्बका अनादर किया होगा, जिन मन्दिर या चैत्यालयके उपकरण चुराए होंगे, निर्माल्य-भक्षण किया होगा, अशुद्धिकी अवस्थामें माननीय पूज्य पुरुषों या ऋषियोंको भोजन कराया होगा, उसी अवस्थामें शास्त्र छुए होंगे, व मन्दिर गई होगी, मन्दिरमें अशुद्ध द्रव्य चढ़ाया होगा, जिन मन्दिरमें प्रमाद, मूर्खता या कोई कुचेष्टाकी होगी; मुनिदानमें अन्तराय डाला होगा, सच्चे धर्मात्माओंकी झूठी निन्दाकी होगी, झूठी चुगली खाई होगी; किसीको झूठा कलंक लगाया होगा, मिथ्यात्व सेवन किया होगा, हिंसाबके कार्य किये होंगे, जेठे पुरुषोंका—माननीय पुरुषोंका-अपमान किया होगा, अभक्ष्य-भक्षण किया होगा, प्रतिज्ञा—भंग की होगी, आशय यह कि अनेक प्रकारसे पाप कमाया होगा, तभी तो यह पति-वियोग-का दुःसह दुःख सहना पड़ रहा है।

अब मेरा यही कर्तव्य है कि धैर्य धारण करके इस विपत्तिको बिना किसी संकल्प-विकल्पके भोगूँ और आगेके लिये सावधानीसे धर्ममें तत्पर होऊं। यदि धर्ममें तत्पर न होऊंगी तो न जाने आगे मेरी क्या दुर्गति होगी, न जाने कैसे दुःख भोगने होंगे? अब तो मैं धर्मकी शरणमें हूं क्योंकि वही दुःखसे पार करनेवाला और भव-भवमें सुख देनेवाला है।

ऐसा ही विचार करके अशान्तिकी ओर अपने विचारोंको न ढुलने देवे। दान, व्रत, तप, नियम, पूजन और स्वाध्याय

पूर्वक अपनी आयु पूर्ण करे । सांसारिक विषयोंसे—पंचेन्द्रियोंके विषयोंसे—दूर रहे । अपनी इन्द्रियों और मनको वशमें करे । स्त्रीको शृंगार करना सधवा होनेपर ही शोभा देता है । विधवाका शृंगार धर्म-विरुद्ध, लोक-निन्द्य और शीलका घातक है । विधवा अयोग्य वस्त्राभूषण धारण न करे । सधवाओं-जैसे चटकदार कपड़े और गहने न पहिने । अंजन आदि न लगावे । पान, इलायची और केशर आदि पुष्ट और कामोद्दीपक मसाले न खावे । माथेपर तिलक बिंदी रोरी न लगावे । बालों या कपड़ोंमें तेल या इत्र न लगावे, दूध, दही, घृत, मोदक आदि गरिष्ठ और पुष्टिकारक भोजन अधिक परिमाणमें न खावे, क्योंकि इससे इन्द्रियाँ प्रबल होकर अपने २ विषयोंकी ओर खींचती हैं । यदि वे अथवा ऐसे ही पदार्थ बिल्कुल न खाये जावें तो अच्छा है । किसी स्त्री या पुरुषसे हँसी मजाक तमाशे और कौतूहल आदि क्रियायें न करे । नाटक, सिनेमा, स्वाँग, रहस और भाँडोंके कौतुक और मेलों तमाशोंमें न जावे । बुरे गीत न गावे और बुरे वार्तालाप न सुने । सधवाओंके सधवापनके चिन्होंकी—अलंकार आदि की—इच्छा न करे नीचे लिखी कविताओंको सोचे और समझे—

दुःख और सुखके बीचमें, पछतावे क्यों भ्रात ।
माशा बढ़ै न तिल घटे, जो कुछ लिखा ललाट ॥

पूरब भोग न चितवै, आगम बांछा नाहिं।
वर्तमान वर्ते सदा, सो सुखिया जग माहिं॥

एकासना, उपवास, नीरस भोजन, बेला तेला आदि उपायों द्वारा इन्द्रियोंके वेगको रोके—उन्हें वशमें करे। पूजा, दान, स्वाध्याय, पठन-पाठन और धर्मध्यान आदि शुभ कार्यों में अपना समय लगावे, जिससे पुण्य बन्ध हो और दुःखकी कुछ शान्ति हो। मतलब यह है कि जो स्त्रियाँ समता-भाव धारणकर सदा धर्मध्यान करती हैं, और अन्तिम समय समाधिमरण करती हैं वे फिर स्त्री पर्याय धारण नहीं करतीं। वे भरसक स्वर्गमें महर्द्धिक देव होती हैं, मध्यलोकमें राजा महाराजा होती हैं और फिर मुनिव्रत धारण कर कर्मका नाश करके मोक्षके अनन्त, अनुपम, अक्षय, अलौकिक और अप्रमेय सुख को प्राप्त करती हैं।

विधवा स्त्रियोंको परिग्रहका प्रमाण करके रहना चाहिये; भूषण न पहिनना चाहिए; कपड़ोंसे अंग ढके रखना चाहिए, सिर ढके रहना चाहिए; खाट पर न सोना चाहिए, अंजन न लगाना चाहिए; हल्दीका लेप न करना चाहिए, शोक व रुदन न करना चाहिए, काम-सेवन, राज्य व चोरोंकी कथा कहानी न कहना चाहिए, परन्तु श्राविकाश्रमों द्वारा ज्ञान-लाभ करके अपने और पराये हितमें लगाना चाहिए। विद्या-हीन जैन स्त्री-समाजको शिक्षित करनेके लिये हजारों अध्यापिकाओं

की आवश्यकता है । यदि विधवाएं इस कामको हाथमें लेलें तो उनका जीवन सच्चे परोपकारमें लग सकता है, उनके व्यर्थ जीवनसे समाजका बड़ा उद्देश्य सिद्ध हो सकता है। समाज-सेवा करनेसे उनका जीवन दिव्य वन सकता है। अमेरिका आदि देशोंमें ऐसी अनेकों समाजसेविका विधवाएँ हैं । भारतीय विधवाएँ यदि स्त्री-शिक्षाका काम हाथमें ले लें, तो स्त्री जातिके सारे अज्ञान और कष्ट शीघ्र हीं मिटा सकती हैं। वे स्त्रियाँ धन्य हैं जो विधवा होनेपर इस प्रकार अपने और पराये हितमें तत्पर हो जाती हैं।

बहिनो ! यदि स्त्री पर्य्याय और जैन कुल तुम्हें किसी भाग्यसे मिला है, तो इस समयका एक भी क्षण तुम्हें व्यर्थ न खोना चाहिये । यदि दुर्भाग्यसे विधवा हो गई हो, तो भी अपने परिणामोंको सम्हालके रक्खो। धर्मध्यानमें अपना समय बिताओ। यह पर्याय, संसारसमुद्रके किनारे लगनेकी है यदि इस समय तुम भूल गईं—चूक गईं तो ठिकाने लगना मुश्किल है। उठते-बैठते, खाते-पीते, चलते-फिरते और प्रत्येक काम करते या न करते समय यह न भूलो कि 'हम मनुष्य हैं और हमारा काम धीरे-धीरे कर्मोंके जजालसे छूटना है।'

मनुष्य पर्यायके विषयमें एक कविने कहा है—

जाकों इन्द्र चाहें अहमिन्द्रसे उमा हैं जासों;
जीव मुक्ति जाय, भव-मलको बहावे है।

ऐसो नर जन्म पाय खोयो विष विषै खाय;
जैसे कांच साँटे मूढ़ माणिक गमावे है।
माया नदी बूध भींजा, काय बल तेज छीजा,
आया पन तीजा अब कहा बन आवे है।
तातें निज शीश ढोलें, नीचे नैन किये डोलें,
कहा बढ़ बोलें, वृद्ध वदन दुरावै है ॥१॥

* * *

जोई क्षण कटै सो तो आयुमें अवश्य घटे,
बूँद २ बीते जैसे अंजलिको जल है।
देह नित चीण होत नैन तेज-हीन होत;
यौवन मलिन होत छीन होत बल है।
आवै जरा नेकी तकै अन्तक अहेरी आवें;
परभौ नजीक जात, नरभौ निफल है।
मिलके मिलापी जन, पूँछत कुशल मेरी;
ऐसी दशामांहि मित्र, काहेकी कुशल है ॥२॥

* * *

काहू घर पुत्र जायो काहूके वियोग आयो;
कहूं राग रंग कहूं रोयारोयी करी है।
जहाँ भानु ऊगत उछाह गीत गान देखे;
सांज समै ताही थान हाय हाय परी है।
ऐसी जग-रीतिको न देख भयभीत होत;

हा हा नर मूढ़ तेरी मति कौने हरी है।
मानुष जनम पाय, सोवत विहाय जाय;
खोवत करोरनकी एक-एक घरी है॥३॥

* * *

देखो भर यौवनमें पुत्रको वियोग भयो;
तैसे हो निहारि निज नारि कालमगमें।
जो जो पुण्यवान जीव दीसत हैं जगमांहि,
रङ्क भये फिरें तिन्हें पनहीं न पगमें।
ऐसे पै अभाग, धन जीतवसे धरैं राग,
होय ना विराग जानै रहूंगो अलगमें।
आंखिन विलोके अन्ध मुस्सेकी अंधेरी कर;
ऐसे राज-रोगको इलाज कहाँ जगमें॥४॥

ऐसी हम संसारी जीवोंकी भ्रम-बुद्धि और अज्ञानदशा देख श्रीगुरु करुणा करके इस प्रकार समझाते हैं—

जौलों देह तेरी काहू रोग ने न घेरी जौलौं,
जरा नाहिं नेरी जासों पराधीन पर है।
जौलों जम नामा वैरी देय न दमामा तौलौं,
माने आन रामा बुधि जाय न बिगर है।
तौलौं मित्र मेरे ? निज कारज संभार लेरे,
पौरुष थकेगो सिर पिछे कहा करिहै।
अहो आग आए जब झोंपड़ी जरन लागे,

कूपके खुदाए कहो कहा काज सरहै ॥५॥

इसलिये हे जाति-सुधारक भाइयो और बहिनो ! ऐसा यत्न करो जिससे समाजकी ये विधवाएँ अपने निस्सार जीवन को उपयोगी जीवन बना डालें। मनुष्य या स्त्री जन्मका कर्तव्य समझें। मिथ्यात्व और प्रमाद छोड़ धर्ममें तत्पर होवें और अपना अगला जन्म मंगलमय बनावें। यदि ये अभी आत्म-कल्याण न करेंगी तो पीछे पछताना होगा और दुखमें पड़ना होगा।

मानुष तन श्रावक कुलहिं, पावो दुर्लभ फेर।
यह अवसर मत चूकियो, सद्गुरु भावें टेर॥

गार्हस्थ्यजीवन को सुखी बनाने का उपाय

****

एक वर्णवाला या जातिवाला घर अपने गोत्र को टालकर दूसरे सजातीय और भिन्न गोत्रवाले पुरुषकी कन्यासे विवाह कर लेता है, तब वे दोनों पति-पत्नी या दम्पति कहलाते हैं।

यदि दोनों साथियोंने बाल्यकाल में ललितकलाओं—नैतिक, धार्मिक और लौकिक शिक्षाओं—का अभ्यास किया है तो उनका गार्हस्थ्यजीवन सुखी रहता है अन्यथा नहीं।

नीतिकार सोमदेव सूरिने मूर्खकी कड़ी आलोचना की है—

न ह्यज्ञानान्दन्यः पशुरस्ति (नीतिवाक्यामृत)

अर्थात्—संसारमें मूर्खको छोड़कर दूसरा कोई पशु नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार पशु घास आदि भक्षण करके मल-मूत्रादि क्षेपण करता है और धर्म-अधर्म-कर्तव्य-अकर्तव्य को नहीं जानता उसी प्रकार मूर्ख मनुष्यको भी खान-पानादि क्रिया करके मल-मूत्रादि क्षेपण करता है और धर्म-अधर्म—कर्त्तव्य अकर्त्तव्य को नहीं जानता।

महात्मा भर्तृहरिने भी 'साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः' द्वारा उसे बिना पूँछ और सींगोंका पशु बताया है।

अतः गार्हस्थ्यजीवनको सुखी बनानेके लिए दम्पतिको नैतिक, धार्मिक और लौकिक शिक्षाओंसे सुशिक्षित, सदाचारी और कर्तव्य-परायण होना चाहिए। ऐसा होने से वे कौटुम्बिक सामाजिक और राष्ट्रीय कल्याण करनेमें समर्थ हो सकते हैं।

गृहस्थको सबसे प्रथम जीविकोपयोगी साधनों—कृषि और व्यापार-आदि—से, न्यायसे धन कमानेमें प्रवीण - चतुर होना चाहिये। क्योंकि समस्त लौकिक कुटुम्बकी रक्षा आदि और पारलौकिक—दान, धर्म और परोपकार आदि—सभी प्रयोजनोंकी सिद्धि धनके सदुपयोगसे ही होती है।

एवं आय—आमदनीके-अनुकूल खर्च करना चाहिए। क्योंकि आमदनीको बिना सोचे समझे, अधिक खर्च करनेवाला

कुबेरके समान धनाढ्य होनेपर भी दरिद्र हो जाता है। अतः कुटुम्ब रक्षाके साथ २ पात्रदानादि परोपकारद्वारा धर्मोन्नति करते हुए भविष्यमें आनेवाली आपत्तियों—बीमारी-बेकारी आदि—से बचाव करनेके लिये अपनी आयका कुछ हिस्सा बचा कर रखना चाहिये। जहां तक हो सके अपनी आयका आधा कौटुम्बिक-निर्वाहमें और चौथाई या आठवां भाग दान-पुण्यादि परोपकारमें खर्च कर, शेषकी बचत करनी चाहिये।

समस्त सुखोंका मूलकारण नैतिक-धार्मिक-कर्त्तव्य पालन है। अतः देव, गुरु और धर्मकी भक्ति, गुरुजनोंकी उपासना और शास्त्र-स्वाध्याय आदि गृहस्थधर्मका पालन करना चाहिये।

उसके साथ न्याय प्राप्त धनका संचय और सदुपयोग करते हुए, धर्म और धनकी क्षति न करते हुए—परस्त्री और वेश्या-सेवन आदि अन्यायोंसे हटकर उदासीन दृष्टिसे न्याय प्राप्त काम-पुरुषार्थ में प्रवृत्ति करनी चाहिये।

वादीभसिंह आचार्यने भी कहा है कि—

परस्पराविरोधेन त्रिवर्गो यदि सेव्यते।
अनर्गलमतः सौख्यमपवर्गोऽप्यनु क्रमात् ॥१॥

अर्थात्—यदि गृहस्थलोग धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थोंको परस्परमें बाधा न डालकर सेवन करें, तो उन्हें स्वर्ग-सुख प्राप्त होते हैं और क्रमसे मोक्ष-सुख - समस्त दुःखोंकी आत्यन्तिक निवृत्तिकी भी प्राप्ति होती है। अतः

गार्हस्थ्यजीवनको सुखी बनानेके लिये उक्त कर्त्तव्य-पालन आवश्यक है।

सूतक-निर्णय

-*:०:*-

सूतकं वृद्धिहानिभ्यां, दिनानि दश द्वादश।
सूतिस्थानस्य मासैकं, दिनानि पंच गोत्रिणाम्॥

अर्थ—जन्मका सूतक दश दिनका और मृत्युका बारह दिनका होता है। प्रसूति स्थानको एक माह और गोत्र के मनुष्यका पाँच दिनका सूतक होता है।

प्रव्रजिते मृते काले, देशांतरे मृते रणे।
सन्यासे मरणे चैव, दिनैकं सूतकं भवेत्॥

अर्थ—जो गृहत्यागी—दीक्षित—विदेशवासी या सन्यासी मरे अथवा जिसने संग्राममें प्राण छोड़े हों तो इनका एक दिन का सूतक मानना चाहिये (यदि अपने कुलका हो तो)। यदि अपने कुलका कोई विदेशमें मरा हो और बारह दिन पीछे खबर मिले तो एक दिनका सूतक मानना चाहिये। यदि बारह दिन के पहले खबर मिले तो बारह दिन पूरे होनेमें जितने दिन बाकी रहे हों उतने ही दिनका सूतक माने।

चतुर्थे दशरात्रि स्यात्, षड्रात्रिं पुंसि पंचमे।
षष्ठे चतुःरात्रिशुद्धिः, सप्तमे च दिनत्रयं॥

अष्टमे पुंस्यहो रात्रि, नवमे प्रहरद्वयं।
दशमे स्नानमात्रं स्यात्, एतद्गोत्रस्य सूतकम्॥

अर्थ—तीन पीढ़ी तक बारह दिन, चौथी पीढ़ीमें दस दिन, पांचवीं पीढ़ीमें छः दिन, छटवीं पीढ़ीमें चार दिन, सातवीं पीढ़ीमें तीन दिन, आठवीं पीढ़ीमें एक दिन-रात्रि, नवमी पीढ़ीमें दो प्रहर और दसवीं पीढ़ीमें केवल स्नान न करने तक सूतक जानना चाहिये।

यदि गर्भे विपत्तिः स्यात् स्रावणं चापि योषितां।
यावन्मासस्थितो गर्भस्तावद्दिनानि सूतकम्॥

अर्थ—स्त्रीका गर्भ पतन हो तो जितने मासका गर्भ हो उतने दिनका सूतक पालना चाहिये।

पुत्रादि सूतके जाते, गते द्वादशके दिने।
जिनाभिषेकपूजाभ्यां, पात्रदानेन शुद्धयति॥

अर्थ—पुत्रोत्पत्ति आदिके सूतकसे बारहवें दिन उपरान्त भगवानका अभिषेक, पूजन तथा पात्र-प्रदान करनेके पीछे शुद्धि होती है। (यहां सूतक शब्दसे जन्म, मरण दोनोंके सूतक समझना चाहिये।) कभी-कभी जन्मका द्वादश दिन और मरण-का बारह दिनका सूतक माना जाता है।

अश्वा च, महिषी, चेटी गौः प्रसूता गृहांगणे।
सूतकं दिनमेकं स्यात्, गृहबाह्ये न सूतकं॥

अर्थ—घोड़ी, भैंस, दासी और गौ आदि जो अपने घर

के आंगनमें (घरके भीतर) जनें; तो एक दिनका सूतक होता है। जो गृह बाहर जनें तो सूतक नहीं लगता है।

सतीनां सूतकं हत्या पापं षण्मासकं भवेत्।
अन्या सामान्यहत्यानां, यथापापं प्रकाशयेत्॥

अर्थ—अपनेको अग्निमें जला लेवे, ऐसी सती होनेका पाप (सूतक ?) छः मासका होता है। और हत्याओंका पाप (सूतक ?) भी यथा योग्यजानना चाहिए।

दासीदासस्तथा कन्या, जायते म्रियते यदि।
त्रिरात्रिं सूतकं ज्ञेयं गृहमध्ये तु दूषणम्॥

अर्थ—जो दासी दास, तथा कन्या जन्मे या मरे, तो तीन रात्रिका सूतक है। (यदि गृहके बाहर हो तो सूतक नहीं होता है) यहां मृत्युकी मुख्यतावश तीन दिनका सूतक कहा है।

महिष्यः पाक्षिकं क्षीरं, गोक्षीरं च दशे दिने।
अष्टमे दिवसेऽजायाः, क्षीरं शुद्धं न चान्यथा।

अर्थ—जननेके बाद भैंसका दूध पन्द्रह दिनमें, गायका दूध दश दिनमें और बकरीका दूध आठ दिनमें खाने योग्य शुद्ध होता है।

जातदन्तशिशोर्नाशे, पित्रोर्दशाहसूतकम्।
गर्भस्रावे तथा पाते, विनष्टे च दिनत्रयं॥

अर्थ—जिस पुत्रके दांत आगये हों उसके मरणका सतक

माता-पिताको दश दिनका लगता है तथा गर्भस्राव, गर्भपात और विनाशका सूतक ३ दिन का मानना चाहिए।

त्रिपक्षे शुद्ध्यते सूती, दिने पंच रजस्वला।
परपुरुषरता नारी, यावज्जीवं न शुद्ध्यति ॥

अर्थ—जिस स्त्रीके बाल बच्चा हुआ हो वह डेढ़ महीने में और रजस्वला पांच दिनमें शुद्ध होती है, परन्तु व्यभिचारिणी स्त्री कभी शुद्ध नहीं होती। सदा अशुद्ध—अस्पृश्य रहती है।

करि सन्यास मरे जो कोय, अथवा रणमें जूझो होय।
देशान्तरमें छोड़े प्राण, बालक तीन दिवस लौं जान ॥
एक दिवस हो इनको सोग, आगे और सुनो भविलोय।
प्रौढ़ा बालक दासी दास, अरु स्त्री सूतक इमि मान।
दिवस तीन लौं कह्यौ वखान, इनकी मर्यादा इमि जान ॥

भावार्थ—आठवर्ष तकके बालकका तीन दिनका सूतक जानो। देशपद्धति—रूढ़िसे इसमें कितने ही भेद हैं, इसलिये देश-पद्धति—रूढ़िसे इसका पालन करना चाहिये।

ससुराल जाते समय-पुत्री को माताका उपदेश

सन्मति पद सन्मति करण, बन्दूं शीस नवाय।
जा प्रसाद शिक्षा लिखूं, पुत्रिनको सुखदाय ॥१॥

(१) विवाह होनेपर प्रथम वार जब पुत्रीको अपने पिता के घरसे ससुरालमें जानेका समय आवे—विदाका समय हुआ—तब माताने पुत्रीको सम्पूर्ण वस्त्र-भरण पहिराकर मस्तक

में रोलीका तिलक लगाया और नवीन-फल श्रीफलादि झोली-में देकर कहा—बेटी ! अपने हाथ-पर आदिके सम्पूर्ण आभूषण सम्हालो और सुखपूर्वक जाओ ।

(२) माताके ये वचन सुनकर पुत्री लज्जा सहित नीचा सिर करके बोली—'हे माता ! मैं जाती हू, मेरी बात मत भूलना ।' इतना ही कहने पाई थी कि उसका गला भर आया और आंखोंसे टप २ आँसू गिरने लगे । वह इससे आगे और कुछ भी नहीं कह सकी, किन्तु मन्द स्वरसे माता-पितादि स्व-जनोंके प्रेमसे अधीर होकर रोने लगी । ठीक है, जिन माता-पितादिकी गोदमें लालन-पालन पाकर वह इतनी वड़ी हुई है, उनसे एकाएक प्रेम छूट जाना सहज नहीं है । माता जिसने नव मास तक गर्भमें धारण करके जन्म दिया और तबसे अंचल-का दुग्धपान कराकर अब तक अनेक प्रकारसे लालन-पालन किया है—उसका तथा पितादिजनोंका प्रेम पुत्रीसे क्या यों ही एक-दम छूट सकता है ? नहीं—कभी नहीं, परन्तु यह अनादिकी प्रथा है कि पुत्रसे अपना और पुत्रीसे पराया वंश चलता है । अर्थात् पुत्री पर घरके लिये ही हुई हैं, इसमें हर्ष-विषाद ही क्यों करना चाहिए ? यह विचारकर माता पुत्रीके मस्तकपर हाथ रखकर प्रेमाश्रु टपकाती और अपने अंचलके छोरसे पुत्रीके आँसू पोंछती हुई मधुर गद्गद् स्वरसे बोली—

(३-४) 'मेरी प्यारी बेटी ! तू अपने मनमें किंचित् भी

खेद मत कर और हर्षित होकर जा। अब विलम्ब मत कर, मैं तुझे जल्दी ही रक्षाबन्धनके पवित्र पर्वपर बुलालूँगी। उठ! आँसू पोंछ, मनमें कुछ भी चिन्ता मत कर। तेरी सासूजी बहुत सरल स्वभाववाली दयालु और साध्वी स्त्री है। संसारमें उनके समान विरली ही स्त्रियाँ होंगी, तुझे तेरे सौभाग्यसे ही ऐसी सासू मिली है। ऐसा कहती हुई माता मानों हर्षसे फूली नहीं समाती—बोली—बेटी विजयालक्ष्मी! तू भाग्यवती है। जा और जिस प्रकार तेरी भक्ति तथा प्रेम मेरे ऊपर है उसी प्रकार भक्ति तथा प्रेम अपनी सासूमें रखना और उन्हीं को माता समझकर सदा विनयपूर्वक उनकी सेवा-शुश्रूषा व आज्ञा-पालन करते रहना।

(५) बेटी! मैंने तुझे जन्म दिया है और तबसे अबतक लालन-पालन किया है, इसलिये अबतक मैं तेरी माता थी, परन्तु अबसे जन्म-पर्यन्त तेरी माता तो सासूजी ही हैं। आज से तेरे लिये जो कुछ भी सुख आदि होनहार है, उस सबका भार तेरी सासूजीपर ही है। वे ही अब तेरी सच्ची माता हैं, ऐसा समझकर अब तू इस समस्तजनोंके वियोग-जनित दुःख-को भूलजा।

(६) बेटी! यद्यपि आजकल लोकमें प्रायः बुरी कहावत चल पड़ी है कि सासुएँ बहुओंको सतानेवाली, दुर्बुद्धिनी और कठिन वचन कहनेवाली कर्कशाएं होती हैं, परन्तु यह बात

सर्वथा कल्पित (मिथ्या) है; क्योंकि जो पुरुष-स्त्री अपने पुत्रों का वंशकी रक्षा व सुख-वृद्धिके अर्थ विवाह करते हैं, भला वे अपनी पुत्र-वधुओंको कैसे दुःखी करेंगे ? कदापि नहीं। इसलिये तू भी अपने अन्तःकरणको ऐसी २ घृणित बातोंसे मलिन मत होने देना।

(७) बेटी ! स्मरण रख कि मीठे नम्र और विनययुक्त बचन बोलनेसे प्रत्युत्तरके वचनभी मीठे नम्र और प्रेमपूर्णही मिलते हैं और कड़वे-कठोर बचनोंका उत्तर कड़वे व कठोर वचनोंमें ही मिलता है—अर्थात् अपनेको अपनी प्रतिध्वनि (झाई=Echo) सुनाई पड़ती है। इसलिये जो तू वहां (ससुरालमें) जाकर विनय, विवेक, हित, मित और प्रियवादितासे वर्ताव करेगी तो तेरी सम्पूर्ण मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी और जो दूसरोंका दिल दुखावेगी तो उसके बदले तुझे भी तिरस्कार सहना पड़ेगा।

(८) बेटी ! ससुरालमें जाकर अपने कुलकी लाज—मर्यादा—से रहना और जो तेरे कर्तव्य हों, उन्हें भले प्रकार पूरा करना। सबसे हिल-मिलकर रहना। 'यह देदो, वह लादो, अमुक वस्तु आज ही लूँगी, वह अभी लूँगी, शीघ्र मंगा दो' इत्यादि बातोंपर कभी भी किसी प्रकारका हठ मत करना, न कभी अपने घरकी कोई बात बाहर किसीसे कहना। कहा भी है—

'तुलसी पर घर जाय कर, दुःख न कहिये रोय।
नाहक भरम गमायवौ, दुःख न बांटे कोय'॥

क्योंकि इससे अपने घरका भेद (भरम) खुल जाता है और उस घरमें कलह बढ़ता है, जिससे अपना चित्त सदैव व्याकुल रहता है और लोगोंमें हँसी होती है। भोजनके समय जो कुछ भक्ष्य वस्तु तेरी थालीमें परोसी जाय, उसे तू रुचिपूर्वक ग्रहण करना (जीम लेना) कभी कोई वस्तु किसीसे छिपाकर न खाना, क्योंकि ऐसा करनेसे आचार व धर्म बिगड़ता है और घरमें परिपूर्णता नहीं होती।

(९) बेटी! सवेरे सबसे पहले उठना और रात्रिको सब के पीछे सोया करना। घरके बर्तन सदैव माँजकर साफ चमकते हुए सुखाकर रखना, नित्य चूल्हेकी राख निकालकर चूल्हा चौका मिट्टीसे पोतना कि जूठन न रहने पावे और न जीव-जन्तु होने पावें। घरको झाड़ बुहारकर सदा स्वच्छ रखना, घरके किसी काममें कभी आलस्य नहीं करना और न कहीं कभी घरका काम पूरा हुए बिना बाहर जाना। निष्प्रयोजन घरों-घर डोलना अच्छा नहीं होता है, इसलिए जब घरके धंदे से अवकाश मिले तो धर्म व नीतिके उत्तम ग्रन्थ और प्राचीन सती महिलाओं—सीता, द्रौपदी, अंजना, राजुल, मैना व मनोरमा आदि—के चरित्रोंको पढ़कर समय बिताना जिससे समय बीतनेके साथ-साथ मनोरंजन भी हो, और आत्माके भाव भी पवित्र हों। क्रिया कोष, रत्नकरण्डश्रावकाचार, द्रव्यसंग्रह, अर्थप्रकाशिका और मोक्षमार्गप्रकाशक, आदिका स्वाध्याय करते

रहना तथा नित्यप्रति सोते जागते समय पंचपरमेष्ठीका स्मरण किया करना, जिससे सर्व कार्य निर्विघ्नता-पूर्वक पूर्ण हों और सदैव चित्त भी प्रसन्न रहे।

(१०) बेटी! घरके सब काम हर्ष पूर्वक किया करना क्योंकि कहा है—

"अपने कारजके लिये, खरचत हैं सब दाम।
जगत कहावत है भली, काम भला नहीं चाम।"

ससुरालके बच्चोंको यदि वे सोना चाहें तो भले प्रकार ओढ़ना बिछौना करके सुलाना। उनको सुलाते, झूलना झुलाते अथवा थपथपाते समय अच्छे-अच्छे बालकोपयोगी गीत गाया करना। यदि बालक जागते हों, तो उन्हें बहलानेके लिये घरके खेल खिलौने व अन्य वस्तुएँ, जिनसे कि बच्चोंको उत्तम शिक्षा मिल सकती है, दिखाना, परन्तु कभी भी बच्चोंको भूतप्रेतादि का झूठा भय दिखाकर मत डराना, क्योंकि इससे बच्चे डरपोक और कायर बन जाते हैं।

(११-१२) "यह बच्चा हमेशा रोता ही रहता है, यह बड़ा दंगा करनेवाला लड़ाकू है, इसकी नाकसे रीट बहती है, आँखोंमें कीचड़ भरा है, बार २ चौंक उठता है, इसके माथेमें खाडा है, वह गोदमें नहीं आता, यह जोरसे चिल्लाता है।" इत्यादि कठिन और घृणित शब्द किसी बच्चेको न कहना। न कभी किसी बच्चेको व्यर्थ धमकाना, न मारना, न

उसपर चिल्लाना, किन्तु मीठे-मीठे शब्दोंमें समझाकर उसका हठ छुड़ाना। क्योंकि प्रेमसे बच्चे तो क्या देव, मनुष्य, पशु व पक्षी आदि सभी वशमें हो जाते हैं। कहा भी है—

मिष्ट वचन हैं औषधी, कटुक वचन हैं तीर।
श्रवणद्वार हो संचरें, सारे सकल शरीर॥

(१३) इसलिये निम्न प्रकारसे कार्य करना। सुन! अपना स्थान—भोजन, वस्त्राभूषण, स्व-शरीर और बच्चे, इनके मैले रहनेसे लोकमें निन्दा होती है और अनेक प्रकारके रोग भी आकर घेर लेते हैं, क्योंकि स्वच्छता आरोग्यताकी जननी है। भोजनके पदार्थ बहुत सावधानीसे शोध बीनकर तैयार करना, क्योंकि भोजनके पदार्थोंमें बहुतसे कीड़े-मकोड़े आदि जीव चढ़ जाते हैं, सो बिना शोधे भोजन बनानेमें एक तो इन बेचारे अवाक् जीवोंकी हिंसा होती है, दूसरे इन जीवोंका कलेवर तथा विषैले मलादिक पदार्थ पेटमें पहुँचकर रोगादि पैदा करके बहुत हानि पहुँचाते हैं और कभी-कभी तो इनसे प्राणों तकका भी घात हो जाता है।

(१४) बेटी! प्रातःकाल उठकर प्रथम ही घरको झाड़ बुहार तथा लीप पोतकर सामनेके मार्गमें स्वस्तिक (साथिया) निकालना, क्योंकि यह द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य आदि उत्तम वर्णों) के घरोंका चिह्न है। यह चिन्ह ऐसे स्थानमें बनाया जाय जिससे सर्व-साधारण लोगोंके दृष्टि-गोचर होता रहे

और जिसे देखकर मुनि आदि सत्पात्र भिक्षाके लिये भी आ सकें।

(१५) घर व चैत्यालयकी सम्हाल भले प्रकार रखना और नित्य तीनों समय अवकाशानुसार श्री अर्हंतदेवकी मूर्ति के प्रति दर्शन, स्तुति, पूजन व वंदन आदि द्वारा भक्ति प्रदर्शित करना और स्वप्नमें भी अन्य रागी-द्वेषी कुदेवोंका आराधन नहीं करना, न अन्यसे कराना, न करने वालोंकी सराहना करना। क्योंकि इन (कुदेवों) के आराधनसे लौकिक कार्योंकी तो सिद्धि होती ही नहीं वरन् इनकी सेवाके फल-स्वरूप परलोकमें जन्म-मरणादि अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं।

(१६) बेटी! अपने माथेके बाल बिखरे मत रखना किन्तु इस प्रकार गूँथकर बाँधना कि जिससे वे टूटकर इधर-उधर भोजनादि पदार्थोंमें न पड़ें और तेरी गणना उच्च कुलांगनाओंमें की जावे। अपने पतिमें श्रद्धा रखकर नित्य प्रातःकाल स्नानानंतर माथेमें कुंकुमकी टिपकी करना, यह सौभाग्यवती स्त्रियोंका चिह्न है। प्रायः स्त्रियाँ ललाटमें केवल भोडर व अन्यवस्तुओंकी बनी हुई टिकली रालमे चिपका लेती हैं सो यह केवल उनका प्रमाद है। टीकी कुंकुमकी ही मंगलिक मानी गई है। यदि गृहमें फुलवाड़ी हो और वह फूली हुई हो तो फूल बीनकर उनका हार आदि भी गूँथ लिया करो।

(१७) बेटी! तू सब वस्त्राभूषण उच्च कुलांगनाओंके

अनुसार ही पहिनना जिससे दोनों कुलकी लाज रहे। आज-कल प्रायः नवीन सभ्यतावाली उद्दण्ड स्त्रियाँ निकली (गिलट व मुलम्मेवाला) जेवर, अशुद्ध रबर, कचकड़ा व लाख आदि की चूड़ियाँ छल्ला और महीन विदेशी या रेशमके अपवित्र (पतले भिरभिरे) कपड़े पहिनतीं व वे ही कपड़े पहिने बाहर आया जाया करती हैं, जिससे उनका सारा शरीर दिखा करता है, जो कि उनके पवित्र शीलरूपी भूषणके लिये बड़ा भारी दूषण है। सर्वोत्तम और शुद्ध वस्त्र खादीका ही होता है। उसे इच्छानुसार स्वदेशी शुद्ध रङ्गोंमें रङ्गा जा सकता है। यह याद रहे कि विदेशी वस्त्रोंके रँगनेमें खून-चर्बीका उपयोग होता है, इसलिए विदेशी कपड़ोंसे मोह मत करना।

(१८) बेटी! तू निम्न प्रकार-'शील, धर्म और नैतिक-शिक्षाको अपने मन-मन्दिर में धारण कर उसीके अनुकूल अपनी प्रवृत्ति करना।

बहुत आभूषणोंसे अलंकृत होनेकी लालसा या प्रवृत्ति मत करना। सदा सद्गुणरूपी आभूषणोंसे अपनेको विभूषित रखनेकी चेष्टा करते रहना।

'शीलमलङ्कारो महिलानां न देहखेदावहो बहिः'

—नीतिकार आचार्योंने स्त्रियोंका मुख्य आभूषण शील-धर्म ही बताया है, बाह्य कनक-कुंडलादि आभूषण तो केवल शरीर को खेद उत्पन्न करनेवाले हैं।

महात्मा भर्तृहरिने कहा है—

> श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन,
> दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन।
> विभाति कायः करुणाकुलानां,
> परोपकृत्या न तु चन्दनेन॥
>
> (नीतिशतक)

मतलब यह कि कानोंकी शोभा शास्त्र-श्रवणसे ही होती है, कुण्डलोंके धारणसे नहीं। कर-कमल पात्र दानसे सुशोभित होते हैं, कङ्कण पहिननेसे नहीं, एवं दयालु पुरुषोंका शरीर परोपकार—दूसरोंकी भलाई—करनेसे ही शोभायमान होता है, चन्दनके लेपसे नहीं।

पतिसेवा करना स्त्रियोंका मुख्य धर्म है। इसलिये सदैव उमंगके साथ पतिकी सेवा और आज्ञा पालन करना। कभी भी ऐसी कोई बात न करना कि जिससे पतिको कष्ट पहुँचे, व उनका चित्त दुखे। तू हर प्रकार से पतिको प्रसन्न रखने की चेष्टा करते रहना क्योंकि संसारमें यही तेरा सर्वस्व है। स्वप्नमें भी पति सिवाय अन्य पुरुषोंसे हास्यादि भंड वचन-रूप व्यवहार न रखना, न किसीकी ओर कुदृष्टि डालना, न कभी बुरे गीत गाना, जो शीलधर्मके घातक हैं। तथा अपनेसे बड़े पुरुषोंको पिता, समवयस्कोंको भाई और लघुवयस्क युवा आदिको पुत्रवत् समझना। यही तेरा सच्चा आभूषण है।

सोमदेवाचार्यने कहा है —

विशीलः कामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जितः ।
उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत् पतिः ॥१॥

तथा च वानप्रस्थभावेऽपि सीता रामस्य सहधर्मचारिणी आसीत् द्रौपदी धनञ्जयस्य, सुदक्षिणा दिलीपस्येति । (यशस्तिलकसे)

अर्थात्—चाहे पति दुराचारी, कामी वा निर्गुण—मूर्ख ही क्यों न हो तो भी साध्वी—पतिव्रता स्त्रीको उसकी देवताके समान निरन्तर सेवा-शुश्रूषा करनी चाहिये। यथा मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी जब वानप्रस्थके वेषमें अपने पिता राजा दशरथकी आज्ञा-पालनके निमित्त वनमें वास करने जा रहे थे, उस समय उनकी पत्नी सहधर्मचारिणी सती सीता उनके साथ थी।

पाण्डवोंद्वारा जुएमें सारा राज्यपाट हराया जानेपर जब सब भाइयोंके समान अर्जुन भी वनवासको जा रहे थे, उस समय उनकी पत्नी सती द्रौपदी उनके साथ थी। राजा दिलीप कामधेनु नन्दिनीकी सेवाके लिये वनमें गये तब उनकी पत्नी सुदक्षिणा उनके साथ थी।

अतः पतिको सुख-दुःखमें साथ देकर अन्य पुरुषोंसे पिता, भाई और पुत्रवत् वर्ताव रखना यही शील-धर्मकी पहिचान है, इसे सदा हृदयमें धारण करो।

बेटी ! शकुन्तलाके ससुराल जाते समय उसके धर्म-पिता महात्मा कण्वने जो शीलधर्मकी नैतिक शिक्षा उसे दी थी

उसके प्रकाशसे अपने मन-मन्दिरको आलोकित रखना।

उसे महाकवि कालिदासने शकुन्तला नाटकमें इस प्रकार कहा है—

शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखी-वृत्तिं सपत्नीजने।
भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मास्म प्रतीपं गमः॥
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परजने भोगेष्वनुत्सेकिनी।
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः॥१॥

अर्थ—हे पुत्री! सास और ससुर आदि पूज्य बड़ोंकी सेवा-शुश्रूषा करना। सौतोंके साथ अपनी सहेलियोंका-सा प्रेमका वर्ताव रखना। ×यदि तुम्हारा पति तुमसे नाराज भी हो; तो तुम नाराज होकर उसकी आज्ञाके प्रतिकूल—विरुद्ध न जाना। सदा नौकर-चाकरोंसे प्रेमका—दयाका वर्ताव रखना और भोगोंको पाकर अभिमान मत करना। उक्त प्रकारके कर्त्तव्यों-का पालन करनेवाली युवतियाँ 'कुल-वधू' पदको प्राप्त होती हैं, परन्तु इसके विरुद्ध प्रवृत्ति करनेवाली युवतियाँ कुल-वधुएँ नहीं है; किन्तु वे कुलकी भयानक बीमारियाँ हैं।

प्यारी बेटी! यदि तुम उक्त नैतिक शिक्षाके अनुकूल प्रवृत्ति करोगी तो तुम्हारा दाम्पत्य-जीवन सुखी रहेगा, अन्यथा नहीं।

(९) शाक, भाजी, चटनी, अचार, मुरब्बा तथा अनेक

×प्राचीनकालमें ठेस पहुँचानेवाले बहु-विवाहकी प्रथा थी।

भांतिके पकवान व मिष्टान्न आदि समयानुसार जो अपने घर के लोगोंको रुचिकर, प्रकृतिके अनुकूल तथा धर्म व कुलाचार के अविरुद्ध हों, उन्हें मर्यादापूर्वक तैयार करना, क्योंकि मर्यादा-के बाहर इन वस्तुओंमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है, जिससे वे अभक्ष्य हो जाते हैं। पदार्थोंकी मर्यादा इस प्रकार है कि आटा, हल्दी व मिर्च--आदि पिसा हुआ मसाला शीत ऋतुमें सात दिन, उष्ण ऋतुमें पाँच दिन और वर्षाऋतुमें तीन दिन रहता है। अचार, मुरब्बा, मिठाई, पूरी, पकवान जिसमें जलांश कम हो चौबीस घंटे, बड़ी पापड़ व सेमई आदि जिस दिन बनाये जायें उसी दिन, और यदि घी, तेल आदिमें सेक रक्खी हों, तो दूसरे दिन तक, रोटी सबेरेकी शाम तक, दाल-भात और शाकादि दोपहर मात्र, तुरन्त छाना हुआ पानी दो घड़ी, लवंगादिसे प्रासुक किया हुआ पानी आठ पहर काम आ सकता है, पश्चात् मर्यादाके बाहर समझना।

पानी सदैव गाढ़े और स्वच्छ सफेद खादीके दोहरे छन्ने-से छानकर जीवानी उसी जलाशयमें भेजना।

रसोई-घर, परंडा, चक्की, ऊखली, भोजनशाला और अनाज आदि शोधने-बीनने, छानने व मसाला आदि पीसनेकी जगह शयनागार व बैठकखानेके ऊपर चँदेवा रखना। तात्पर्य कि जैसी धार्मिक गृह-क्रिया तूने यहां देखी व सीखी है, उसी प्रकार वहाँ वर्तना यदि वहाँ कुछ त्रुटि दिखे तो चतुराईसे ठीक करना और

रसोई बहुत चतुराईसे पाक-शास्त्रकी विधि अनुसार करना, ऋतु व प्रकृतिके अनुसार उसमें फेरफार करते रहना। कच्ची और सड़ी वस्तु बेस्वाद होनेके सिवाय रोगोत्पादक भी होती है। यदि घरमें रसोईदारिन हो तो उसके साथ भोजनकी सम्हाल चौकसी रखना, क्योंकि समस्त कुटुम्बका रक्षण व आरोग्यता भोजनपर ही निर्भर है। दोपहरको अवकाश मिलनेपर घरके फटे-पुराने वस्त्रोंको सुधारना अथवा बच्चोंकी भँगुलियाँ, टोपी, काँचली (अंगिया चोली) ओढ़नी, घाँघरा आदि सुधारना व नवीन सीना। बेल-बूटादि काढ़ना, गुलूबन्द, तोरण, वेष्टन आदि गूँथना, तथा रहटियोंसे सूत काढ़ना, क्योंकि स्त्रियोंको नियम-पूर्वक निकम्मा रहना ठीक नहीं है। निकम्मा रहनेसे मन इधर-उधर व्यर्थके विचारोंमें भटकने लगता है।

(२०) घरके छोटे-छोटे बच्चोंको अवकाश पाकर अपने पास बिठलाना और छोटी-छोटी चित्त प्रसन्न करनेवाली कथाएँ तथा प्राचीन वीर पुरुषों और सती स्त्रियोंके आदर्श-चरित्र सुनाया करना। परन्तु भय और शंका उत्पन्न करनेवाली भूत-प्रेतादिककी कथाएँ तथा दुष्ट नीच पुरुषोंद्वारा संगृहीत विषयो-त्पादक कुकथाएँ कभी नहीं सुनाना, न आप सुनना, क्योंकि इन विकथाओंसे बालकोंके तथा अपने चित्तपर बुरा प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक कथाके अन्तमें उसका उत्तम तात्पर्य निकालकर अवश्य समझना। जो कथा सुननेसे किसीको बुरी

लगे ऐसी कथा व पहेली तथा कहावत नहीं कहना, और न कभी कुतर्क रूपसे किसीपर कुछ कटाक्ष करके बोलना।

(२१) विवाह-कार्य लोकमें आजकल एक वजनदार बेड़ी समझी जाने लगी है। क्योंकि कुपढ़, अजान, स्त्रियाँ ससुराल में जाकर ससुरालवालोंको अपने दुष्ट स्वभावका परिचय देकर नाना भाँतिके नाच नचातीं और निरन्तर कलह करके घरमें फूट का अंकुरारोपण करतीं तथा एक ही घरमें कई चूल्हे कर डालती हैं। गृहस्थोंके घरोंमें कलह व फूटका होना ही उनके नाशका कारण हो जाता है। इसीसे अनेक घराने नष्ट होते देखे गये हैं। इसलिये तू ऐसा वर्ताव करना कि जिससे लोकमें तेरी प्रशंसा हो और स्त्री-जातिसे यह कलंकका टीका उठ जावे व विवाहको मनुष्य सांसारिक सुखका साधन समझने लगें। यथार्थमें देखा जाय तो जिस घरमें सती—पतिव्रता (सदाचारिणी) स्त्री रहती है, वहां ही लक्ष्मीका वास होता है और वह घर स्वर्गके तुल्य होता है और इसीसे लोग स्त्रीको ही लक्ष्मी कहते हैं और वास्तवमें है भी ऐसा ही। कुलीन, विदुषी व सदाचारिणी चतुर स्त्री ही लक्ष्मी है न कि कोई जड़ वस्तु।

(२२) लग्न (विवाह) के समय जो वचन तूने अपने पतिको दिये हैं, उनको तू सदैव स्मरण रखना, जैसे १. मम गुरोस्तथा कुटुम्बिजनानां यथायोग्यं विनय-शुश्रूषा करणीया (मेरे गुरु तथा कुटुम्बीजनोंकी यथायोग्य विनयशुश्रूषा करना), २.

ममाज्ञा न लोपनीया (मेरी आज्ञाका उल्लंघन नहीं करना), ३. वाक्यं कठोरं न वक्तव्यम् (वचन कटु न बोलना), ४. मम सम्बन्धिसत्पात्रादिजनानां गृहागते सति आहारादिदाने मनः कलुषितं न कार्यम् (मेरे हितू, सम्बन्धी, मित्र, बांधवादि सत्पात्रों तथा संयमी साधु-श्रावकों व अन्य साधर्मीजनोंके मेरे घर आनेपर आहार आदि दान देनेमें मन कलुषित नहीं करना) ५. अभिभावकस्य आज्ञाविना परगृहे न गन्तव्यम् (अपने गुरुजनों तथा संरक्षकोंकी आज्ञा विना किसी दूसरेके घर नहीं जाना), ६. बहुजनसंकीर्णस्थाने कुत्सितधर्मस्थाने तथा व्यसनासक्तजनानां गृहे न गन्तव्यम् (बहुत आदमियोंकी भीड़ जहां हो, ऐसे संकुचित स्थानमें, खोटे धर्मवालोंके स्थानमें तथा द्यूतादि सप्त व्यसनोंमें आसक्त पुरुषोंके घरमें नहीं जाना), ७ अस्मत्समक्षे गुप्तवार्ता न रक्षणीया तथास्मद्गुप्तवार्तान्याग्रे कथनीया (मुझसे कोई बात न छिपाना तथा मेरी व मेरे घरकी गुप्त-वार्ता किसीसे न कहना)। ये सात वचन देनेपर ही तुझे तेरे पतिने वामभागमें ग्रहण किया था अतः इसका सदैव पालन करते रहना।

आवश्यक-कर्त्तव्य

(२३) बेटी! लग्नका समय (मुहूर्त) न निकल जाय इसी चड़बड़से—जल्दी से—लोग ज्यों-त्यों कर विवाहकी रीति व

रसम पूरी करके गठजोड़ादि सप्तपदी कर देते हैं और गृहस्थाचार्यद्वारा पढ़े हुए पवित्र मन्त्र व पतिको पत्नीकी ओरसे वचन और पत्नीकोपतिकी ओरकी शिक्षा व वचनोंको समझने व समझानेकी फिकर नहीं रखते। इसलिये मैं उक्त सप्त वाक्योंके सिवायऔर भी कुछ उपयोगी शिक्षा खुलासा रीतिपर कहती हूँ, क्योंकि यह तेरी भलाईका कारण है। हे बेटी! सो तू ध्यानसे सुन—विवाहके समय तेरे पतिने कहा था—,

(क) "देवी! तुम मुझको अति आदरसे वरण कर रही हो। तुम मेरे साथ पूरा दुःख-सुखमय जीवन बिताते हुए वृद्ध होगी—समृद्धि सम्पन्न बनोगी। तुम्हें सौभाग्य देने के लिये मैंतुम्हारा कर ग्रहण करता हूँ। दैव (कर्म) ने मेरे गृह तथा वंशकी रक्षाके लिये ही तुम्हें मेरे आधीन किया है।

(ख) हे देवी! अब तक तुम अपने माता-पिताको ही प्रेम की दृष्टिसे देखती थीं, परन्तु आजसे तुम मेरे माता-पितादि कुटुम्बी जनोंसे भी प्रेम जोड़ो क्योंकि अब तुम्हें उन्हींके निकट अधिकतर रहना है।

(ग) हे देवी! हम दोनोंको परस्पर हितकारी तथा, सम्मतिपूर्वक वचन कहना चाहिये। दोनोंको हिलमिलकर रहना चाहिए। क्योंकि हम दोनोंको जीवनपर्यन्त साथ रहना है और इसीमें हम दोनोंका हित व सुख है।

(ङ) देवि ! आज तुम हमारे कुलमें सम्मिलित हुई हो; इसलिये तुम मेरे वाम भागमें आओ और अपने मनको अपनी प्रतिज्ञाओंपर दृढ़ करो।

(२४) बेटी ! तत्पश्चात् जब तेरी सप्तपदी (सात भांवर) हुई थी तब तुम्हारे पतिने प्रत्येक पदीपर तुमसे जो वाक्य कहे थे उन वचनोंको भी तू सुन।

(क) हे देवि ! आज तुम मेर साथ एक पद (प्रदक्षिणा चलीं, जिससे मेरी सहायक समझी गई हो, इसलिये तुम मेरे धर्म, अर्थ कामादि सम्पूर्ण कार्यों में सहायता करना और शुद्ध भोजनादिसे मेरी पूर्ति करते रहना। देखो, शुद्ध भोजन बनानेसे एक यह भी लाभ होगा कि यदि अपने पुण्योदयसे किसी मुनि, आर्यिका तथा संयमी (व्रती) श्रावकादि अतिथियों का समागम होगा, तो उनको निरन्तराय अनुद्दिष्ट आहार-दान दे सकेंगे। और कदाचित् कोई मुनि आदि संयमी महापुरुष न भी मिलें, तो भी शुद्ध भोजन बननेसे द्वारप्रक्षेण करने और अतिथिलाभकी भावना रखनेसे हमको पुण्य-लाभ तो होगा ही। क्योंकि सरस व नीरस किन्तु शुद्ध प्रासुक तैयार भोजन ही अतिथियोंके योग्य होता है।

(ख) हे देवि ! अब तुम मेरे साथ दूसरा पद चलीं। इससे स्नेहकी वृद्धि हुई। इसी प्रकार अपनी प्रीति द्वितीयाके चन्द्र-समान बढ़ती जावे और तुमसे मेरा बल भी बढ़ता रहे।

(ग) हे देवि ! इस तीसरे पदसे तुम मेरी सुमति और सम्पत्तिकी वृद्धि करनेवाली हो।

(घ) प्रिये ! इस चौथे पदसे मेरे मनवांछित सुखकी वृद्धि करनेवाली हो।

(ङ) वल्लभे ! इस पांचवें पदसे मेरी सन्ततिकी वृद्धि करनेवाली होवोगी।

(च) सङ्गिनि ! छठवें पदसे तुम मुझे ऋतुओंके समान क्रीड़ा-रूप और सन्मार्गमें स्थिर रखनेवाली हो।

(छ) हे सहधर्मचारिणि ! यह सातवां पद मेरे हृदयमें तुम्हारी ओरसे दृढ़ प्रीतिको प्रदान करनेवाला हो और हम दोनों गृहस्थाश्रममें सलाह (ऐक्य) से रहें।

(२५) बेटी ! इस प्रकारकी मधुरवाणीमें सप्तपदीका रहस्य कहकर तुम्हारे पतिने और भी कुछ विशेष सूचनाऐं की थीं उन्हें सुन—कहा था—

(क) हे देवि ! तुम सदैव मेरे सद्विचारोंमें सम्मिलित रहना। समस्त जीवमात्रको समान रीतिसे देखना। ऐसी कोई बात जिससे मुझे व तुम्हें दुःख उत्पन्न होवे, नहीं करना और न बिना मेरी आज्ञाके अपने मनोनुकूल कोई भी कार्य करना, इसमें तुम्हारा व मेरा कल्याण है।

मदीयचित्तानुगतं च चित्तं, सदा ममाज्ञापरिपालनं च।
पतिव्रताधर्मपरायणत्वं कुर्यात्, सदा सर्वमिदं प्रयत्नम्॥

सदैव मेरी इच्छानुसार चलने और मेरी आज्ञाओंको पालन करनेका ध्यान रखना और जिस प्रकारसे पातिव्रत्य धर्म पालन हो ऐसा प्रयत्न करते रहना।

(ख) मेरेद्वारा रक्षित जो पशु-पक्षी तथा आश्रित जन हों, उनका भले प्रकार पालन करना, उन्हें यथायोग्य संतुष्ट रखना, तुम भी संतोषवृत्तिसे रहना और कभी भी अपने चित्तको चंचल नहीं होने देना।

(ग) अपना सुख वा दुःख जो कुछ भी हो एकान्तमें मुझसे ही कहना और घरकी बात बाहर कभी किसी अन्य स्त्री-पुरुषोंसे नहीं कहना।

(घ) सदैव सास-ससुर, देवर-जेठ, देवरानी-जिठानी, ननद व बाल-बच्चोंसे बिना किसी प्रकारके द्वेषभावके, बर्ताव करना, जिससे तुम्हारी कीर्ति व यश हो, और घरमें फूट न पड़ने पावे।

(ङ) तुम मेरे कुलका भूषण बनकर मेरे तन, धन तथा जन—की पूरी-पूरी सम्हाल रखना। ये शिक्षाएँ (जो आज मैं तुम्हें दे रहा हूं) कभी मत भूलना। इसीमें तुम्हारा कल्याण व श्रेय है और इसीसे तुम सुख व यशको प्राप्त होवोगी।

(२६) बेटी! इस प्रकार लग्नके समय तुझे पति-द्वारा जो शिक्षाएँ प्राप्त हुई हैं उनको तू भले प्रकार पालन करना, जिससे तुझे सुख मिले और दोनों कुल वृद्धि तथा यशको

प्राप्त होकर संसारमें आदर्शरूप हों।

(२७) बेटी! तू बड़ोंकी आज्ञा-पालन करना और छोटों-पर प्रेम रखना। कहावत है—

'गुरुजनकी भक्ति सदा 'अरु छोटोंपर प्रेम।
समवय लख आदर उचित, करो निवाहो नेम॥

किसीसे ईर्ष्या नहीं करना, नौकरोंपर माताके समान क्षमा और प्रेम रखना, अपने पिता अथवा ससुरकी सम्पत्तिका मान नहीं करना और न उनकी गरीबीमें कभी घबराना। उत्तम पुरुष सम्पत्ति-विपत्तिमें सदा एक ही भांति समुद्रके समान गम्भीर रहते हैं, वे कभी मर्यादा नहीं छोड़ते। प्यारी बेटी! एक बात और स्मरण रखने लायक है कि—

यदि कदाचित् कोई स्त्रियाँ, चाहे वह तुझसे छोटी हों अथवा बड़ी पर अशुभोदयसे यदि वे विधवा हो गई हों—चाहे तेरे घरकी हों या केवल वहां रहती ही हों, उनसे बहुत प्रेम व आदर भावसे वर्ताव करना, उनके खान-पानादिमें किसी प्रकार की त्रुटि नहीं करना, न कभी घृणाकी दृष्टिसे देखना, क्योंकि वे घृणाकी पात्र नहीं किन्तु करुणाकी पात्र हैं।

देखो उनसे घृणा व तिरस्कारका व्यवहार करने या उनके खान-पान आदिमें त्रुटि करने, धर्मसाधनमें बाधक होने—से कभी-कभी बहुत बुरा परिणाम आ जाता है। वे असह्य यातनाएँ या तिरस्कारके कारण या अन्य दुष्ट स्त्री-पुरुषोंद्वारा

उत्तेजना मिलनेसे अपना सन्मार्ग छोड़ बैठती हैं और न केवल अपने दोनों कुलोंको ही, किन्तु धर्म व समाजको भी कलंकित कर बैठती हैं।

उनको प्रलोभन देनेवाले दुष्ट-जन पहिले तो मीठी-मीठी बातोंद्वारा प्रेम दर्शाते हैं और पश्चात् जब वे किसी प्रकार उनके जालमें फँस जाती हैं, तब पीछे उनको पहिले उनका धर्म और पश्चात् धन हरण करके निराधार अवस्थामें छोड़ देते हैं, जिसमें वे बेचारी वेश्यावृत्ति तक करके उदर-पूर्ति नहीं कर सकतीं और उभयलोकमें दुःख पाती हैं।

बेटी! ऐसे नीचप्रकृति के नर-नारियोंकी संसारमें कमी नहीं है, वे उजले रूप रंग वाले स्वाँगधारी बगुलावत् आचरण करते हैं। उनकी पहिचान जरा कठिनतासे होती है, ऐसे कुस्थलोंसे अपनी नारी जातिकी रक्षा करना हम लोगोंका कर्तव्य है।

यदि हम लोगोंका व्यवहार उनके साथ प्रेम पूर्ण रहेगा, हम उनको धर्म-साधनका सुयोग्य अवसर देंगी व घृणाकी दृष्टिसे न देखकर उनका यथोचित सत्कार करती रहेंगी, तो उन्हें किन्हीं दुष्ट नर-नारियोंसे मिलनेका समय ही न आवेगा, वे अपने साथ प्रेम-पूर्ण वर्ताव रक्खेंगी और अपने प्रत्येक कार्य में सहानुभूति रक्खेंगी तथा अपना सती साध्वीका जीवन व्यतीत करके उभयलोकको तो सुधारेंगी ही किन्तु अपने पवित्र आचरणसे स्व-धर्म व समाजका भी मुख उज्ज्वल रक्खेंगी।

जीवको संसारमें कर्म ही सुख व दुःखका हेतु है। यह कोई नहीं जानता कि कब किसको किस स्थलपर किस पुण्य पापकर्मका उदय आ जायगा और उस समय उसकी क्या दशा होगी। तब इस समय जो दूसरोंको हँसता, घृणाकी दृष्टि से देखता या अधिकार व अवसर पाकर उसे यातनाएँ देता है, पीछे उसकी भी उक्त दशा होती है। इसलिए बेटी! कभी किसीको तुच्छ न समझना चाहिये न निर्बल समझकर दुःख देना चाहिये, निर्बलोंकी हाय कभी-कभी बहुत अधिक दुःखदायक होती है। कहावत है—

निर्बलको न सताइये, जाकी मोटी हाय।
मुए ढोरके चामसों, लोह भस्म हो जाय॥

इसलिये सदैव उनसे योग्य व्यवहार करना तथा चतुराई से उनको उनके योग्य कर्त्तव्य बताते रहना। यदि वे पढ़ी हों तो उत्तमोत्तम नीति व धर्मकी पुस्तकें, सती साध्वी ऐतिहासिक या वर्तमान महिलाओंके जीवनचरित्र पढ़नेको देना, व्रतोपवासोंकी उत्तेजना देना। यदि पढ़ी न हों और बाल या तरुण वयवाली हों तो महिलाओंकी शिक्षणसंस्थाओंश्राविकाश्रमोंमें भिजवानेकी चेष्टा करना। यदि अधिक वयकी हों या अन्य किसी दूसरे कारणोंसे न जा सकें तो घरपर ही किसी सुयोग्य वृद्ध व सदाचारिणी महिलाद्वारा या अपने ही घरके बच्चों द्वारा अथवा चतुराईसे तू अपने आप ही उन्हें पढ़ानेकी चेष्टा

करना कि जिससे वे अपना समय जो गृहकार्योंसे बचता हो व जिसमें यहाँ वहाँकी संगति व गप्पाष्टकें होती हों उसे शास्त्र अवलोकनमें लगा सकें।

तथा जब तू अवकाश पाकर अपना स्वाध्याय करने बैठे तो उनको भी बुला लिया करना जिससे शास्त्र सुनकर वे संसारके विषयोंसे विरक्तिके भावको दृढ़ करती रहें।

और सुन—उनके सामने कोई ऐसी हँसी आदिके व्यवहार व चर्चाएँ कभी न करना कि जिससे उनको सांसारिक विषयोंकी ओर उत्तेजना मिले। यदि उन बेचारी विधवाओंको योग्य शिक्षा व सत्संगति मिलती रहती तो वे कभी भी अपने कर्तव्य व आचरणसे पीछे नहीं पड़ सकती हैं।

उनको सादे, मोटे, सफेद या कत्थई आदि रंगके वस्त्र, शुद्ध सादा हित-मित भोजन उचित व्यवहार, घरमें सत्संग और धर्मकी शिक्षा मिलती रहे व विरुद्ध संगति व स्वतंत्र आहार-विहार और उत्तेजक वस्त्राभूषण (जो एक ब्रह्मचारिणी या ब्रह्मचारीको अनुपसेव्य हैं) वर्तावमें न आवें, तो ऐसी भारतीय नारियां अपने आदर्शको यावज्जीवन सुरक्षित रख सकती हैं।

(२८) धर्म, नीति व सत्यमय हितोपदेशकी पुस्तकोंका स्वाध्याय तू अवश्य ही अवकाशानुसार करते रहना। परन्तु दंत-कथाओं व श्रृंगार-रससे भरी हुई पुस्तकोंको कभी हाथ भी नहीं लगाना और न नाटक आदि मनको बिगाड़नेवाले खेलोंको कभी

देखने सुननेकी इच्छा रखना। परन्तु हां, ईश्वर-भक्ति नीति व धार्मिक गीतोंको गाने तथा सुननेमें हानि नहीं है। इसलिये जब कभी जी चाहे तब ऐसे ही भजन-गान सुरतालसे गाया करना।

(२९) बेटी! अपने पतिके घरकी आमदनी देखकर उसी प्रमाणसे खर्च करना। आयसे अधिक व्यय करनेसे पीछे बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। इसीलिये किसी ने कहा है—

"अपनी पहुँच विचार कर, कर्तब करिये दौर।
उतने पाँव पसारिये, जितनी लम्बी सौर॥"

बेटी! प्रायः पुरुषोंकी बारीक दृष्टि नहीं रहती है इसलिये घरके कामोंमें मितव्ययिता रखना और बचत करना यह स्त्रियोंका ही काम है और यह लाभदायक भी है।

(३०) घरमें नौकर-चाकर प्रायः हल्की जातिके व कम वेतनवाले ही होते हैं। सो जब ये लोग बाजारसे कोई वस्तु लावें, तो तू कभी-कभी उन वस्तुओंकी नाप-तोलका तपास भी कर लिया करना ताकि ये लोग चोरीमें पकड़े जानेसे और ठगाई आदिसे बचे रहें तथा और भी किसी प्रकारकी ऐसी कोई बुराई न सीखने पावें जो अन्तमें उनके जीवनको पतित करनेवाली हो और देख! नौकरोंसे बार २ तकरार नहीं करना और न उन्हें अपने मुंह लगाना।

(३१) नौकर-चाकरोंसे ऐसा बर्ताव रखना कि जिससे वे

तुम्हें गम्भीर दंपति समझते रहें। उनके मनमें तुम्हारी ओरसे मान रहे, देख! आय तथा व्ययका हिसाब भी बराबर रखते रहना इससे ही तू बचत कर सकेगी और अपव्ययसे सदा बचेगी। तात्पर्य यह कि तू सब प्रकारसे गृहिणी शब्दको सार्थक करना।

(३२) बेटी! हरएक वस्तुका बाजार भाव प्रायः कम-ज्यादा होता रहता है, इसलिये अवसर देखकर तू घरमें अनाज, गुड़ व घी आदि पदार्थोंको भी संग्रह कर रखा करना तथा योग्य समयमें धनका व्यय भी यथायोग्य करके अपनी उदारवृत्तिका परिचय देते रहना। परन्तु 'अकाले दिवाली' अर्थात् व्यर्थ व्यय कभी नहीं करना।

(३३) बेटी! "कौड़ी २ खजाना और बूँद २ दहाना" भर जाता है, ऐसा करके गरीब भी पैसा इकट्ठा कर सकता है, इसलिये तू अपने घरकी आय-व्ययका विचार करके समयानुसार कुछ-न-कुछ बचत अवश्य करते रहना।

(३४) बेटी! तू निरन्तर अपनी शक्ति प्रमाण आहार, औषधि, शास्त्र और अभय ये चार प्रकारके दान भी करते रहना। धर्मायतनों और सत्पात्रादिकोंमें भक्ति और दीन-हीन पुरुषोंमें करुणा भाव रखना, क्योंकि हाथका दिया ही साथ जाता है। इसलिये इसमें संकोच न करना अर्थात् शक्ति नहीं छिपाना। मनुष्यको अपनी आयका चतुर्थांश विपत्तिकाल व वृद्धावस्थाके लिये और चतुर्थांश लग्नादि व्यवहारकार्योंके लिये

अवश्य ही संग्रह कर रखना चाहिये, और शेष भोजन वस्त्रादि में व्यय करना चाहिये। परन्तु निम्न वाक्य याद रखना कि—

नीति न मीति गलित भये, संपत्ति धरिये जोर।
खाये खर्चे (दानसे) जो बचे जोड़त रहिये करोर॥

—भूखे मरकर या व्यवहार बिगाड़कर जोड़ना भी अच्छा नहीं होता।

(३५) बेटी! तेरे घरमें जो सद्व्यवहार व उत्तम रीति-नीति कुल परम्परासे चली आती हो, उसे इकदम बिना समझे नहीं छोड़ देना, किंतु श्रद्धासहित पालन करना और जो व्रत-नियम स्त्रियोंके लिये आवश्यक हों उन्हें अच्छा समझकर बराबर करते रहना, क्योंकि वर्तमान कालमें ईश्वर (परमात्मा) की प्राप्तिका साक्षात् द्वार तो नहीं है और न स्त्रियोंको उसी पर्यायसे मोक्ष होता है इसलिये परम्परासे उसका द्वार केवल भक्ति-मार्ग ही है।

(३६) बेटी! कभी भी शांति, दया, क्षमा, शील, सन्तोष, विनय, सदाचार व भक्तिको नहीं भूलना और सदा उदारवृत्ति रखना, रीस करके नहीं बैठना, न निकम्मा बैठना और न कभी किसीसे कुछ मांगना व क्रोधके आवेशमें आकर कभी कटु वचन भी बोलना। हठ नहीं करना, छुपकर चोरीसे नहीं खाना, और अकेली कभी कहीं मत जाना। परपुरुषके साथ कभी मत हँसना, न उससे एकांतमें बात करना। परिचित परपुरुषों (समधी, ननदोई, देवर, बहनोई आदि) से हँसी करने

व होली खेलनेकी नीच प्रथा पापी-व्यभिचारी जनोंने चलाई है, ऐसा स्वच्छन्द वर्ताव दुःखदायी होता है। कहा है—
"महावृष्टि चलि फूटी क्यारी, जिमि स्वतन्त्र ह्वै विगरहिं नारी"
तात्पर्य स्त्रियोंको बाल्यावस्थामें माता-पिताके, तरुणावस्थामें पतिके और वृद्धावस्थामें पुत्रोंके अधीन रहना चाहिये।

(३७) बेटी! बहुत-सी स्त्रियाँ पतिको वशमें करनेके लिये व सन्तानकी इच्छासे जोगी, जोगड़ा, गुनियाँ, जोशी व भेषी आदिकी सेवा करने लगती हैं और उन्हें अपना धन देती हैं। यहां तक कि बहुतसी स्त्रियाँ उनसे गड़ा, फूँदरा व ताबीज आदि बनवाने तथा झाड़ा-फूँकी करानेके लिये एकान्तमें अकेलीअपने ही घरमें या किसी देवी देवताओंके स्थानोंमें व उनके स्थानोंमें जाकर मिलतीं और उनके फन्देमें फँसकर बलात्कारद्वारा अपना शीलाभरण गुमा बैठती हैं व कोई-कोई देवी, दिहाड़ी, यक्ष, यक्षिणी, भूत, प्रेत, भैरों, भवानी, हनुमान, चण्डी, मुंडी, पीर, पैगम्बर और ग्रहादिकी पूजा करती हैं, व इन्हें मनानेके लिये समय, कुसमय, ठौर, कुठौर, अकेली जाती हैं। वहांपर भी ये दुष्ट पुरुषोंद्वारा सताई जाकर अपना शील और द्रव्य दोनों खो आती हैं, क्योंकि ऐसे स्थानोंमें चोर और व्यभिचारी पुरुष प्रकट या लुके-छिपे रहते हैं, जो समय पाकर छक्का पौ कर डालते हैं।

बेटी! इसमें इष्ट-सिद्धि कुछ नहीं होती, केवल धन और

धर्म जाता है। यदि इन जोगी-जोगड़ोंमें पुरुष-वशीकरण और सन्तानोत्पादक शक्ति होती तो घर बैठे ही पुजते, घर-घर मारे-मारे नहीं फिरते। देवी-देवतामें यह शक्ति होती, तो वंध्याको, कुँवारीको और सदाचारिणी विधवाको भी पुत्र हो जाता। सो न कभी ऐसा देखा है और न सुना है। ये सब केवल झूठ पाखण्ड है। तू भूलकर किसीके हजार बहकानेसे भी इनके फेरमें न आना। कर्मकी गति कोई टाल नहीं सकता है। पतिके वशीकरणका मन्त्र 'पतिकी सेवा' है और यही (यदि शुभ उदय हो तो) सन्तानोत्पत्तिका तावीज है! इस-लिये मेरी प्यारी बेटी! तू सब व्यर्थके झगड़ोंको छोड़कर, अपने पतिदेवकी सेवा ही सच्चे मनसे करना, इसीमें तेरा कल्याण है।

(३८) बेटी! तेरा पति उत्तम, कुलीन, सुन्दर, रूपवान्, देवतुल्य, सौम्य मूर्ति, सदाचारी, सुशील, पुरुषार्थी और सज्जन पुरुष है सो प्रथम तो तुझे ऐसा कुअवसर ही नहीं मिलेगा जिससे कि तेरे पतिके सम्बन्धमें व्यसनादि सेवन करनेका समाचार सुन पड़े और (दैव न करे कि) किसी प्रकार तेरे पू० अशुभ कर्मके उदयसे तेरे पतिमें ऐसा ही कोई दोष कदाचित् उत्पन्न हो जाय, या तुझे उनके प्रति ऐसी शंका उत्पन्न हो जाय, तो तू उनसे घृणा, द्वेष, क्रोध व मानादि नहीं करना, क्योंकि तू उनसे जितना द्वेष व घृणादि करेगी; वे तुझसे

उतने ही दूर होते चले जायंगे और व्यसनोंमें फँसते जाएंगे। 'देख, कभी गरम लोहा गरम लोहेसे नहीं कटता है, किन्तु ठण्डेसे ही कटता है' ऐसा जानकर तू क्षमा व शान्ति धारण करना तथा उस अवसरमें पहिलेसे भी अधिक प्रेम बढ़ाना, ताकि उन्हें तेरी ओरसे शंका न रहने पावे और सुअवसर देखकर मृदु हास्य वचनोंमें तू उनके वे वाक्य जो उन्होंने तेरे मांगनेपर तेरा पाणिग्रहण करनेके समय दिये थे, स्मरण करा दिया करना, बस यही उनको सुमार्गमें लानेका सच्चा उपाय है। परन्तु बेटी! मैं तुझे निश्चयपूर्वक कहती हूं कि जो स्त्रियां अपने पतिकी तन-मनसे सेवा करतीं और अन्तःकरणसे उनपर सच्चा प्रेम रखती हैं तो उनके पति भी उन्हें प्राणेश्वरी देवी करके हृदयस्थ कर लेते हैं। देख सीता सती पतिव्रता थी तो रामचन्द्र भी शीलवान थे। जब सीता हरी गई तो उसके वियोगसे वे पागल होगये थे। तू यह न जान कि रामने सीताको वनमें छोड़ा था और अग्निमें प्रवेश कराया था, इससे उनका सीतापर कुछ प्रेम कम हो गया था। नहीं बेटी, वे राजा थे, इसलिये उनको प्रजाके सन्देह निवारणार्थ सीतापर अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रेम करते हुए और उन्हें सती जानते हुए भी वनवास और अग्निप्रवेश लाचार होकर कराना पड़ा था। पवनञ्जय, सुखानन्द, व जयकुमार आदि बहुतसे महापुरुषोंके चरित्र पुराणों में भरे पड़े हैं, जिनसे विदित होता है कि पुरुष भी अपनी

सती सुशीला स्त्रियोंको देवी करके मानते हैं। यदि स्त्री चाहे तो अपने पतिको अपनी सेवा तथा प्रेमसे सन्मार्गी तथा द्वेष-कलह इत्यादिसे कुमार्गी बना सकती है। सो हे मेरी दुलारी बेटी! तू उन्हें प्राणेश्वर देव करके ही प्रेम, भक्ति व सेवा करना।

(३९) बेटी! जब कभी तुझे बहुत खेद व रोगादिक-की वेदना अथवा अन्य कुछ भी दैहिक व्यथा उत्पन्न हो, तो तू अपने धैर्य और धर्मसे नहीं डिगना, किन्तु सीता, द्रौपदी, चेलना, मनोरमा, मैना, रयनमंजूषा आदि महासतियोंके चरित्र-को स्मरण करना अथवा नर्क व पशुगतिके दुःखोंका चिंतवन करके यह विचार करना कि 'देखो! इन सतियोंको व उन मुनियोंको कैसे घोर उपसर्ग व कष्ट आते थे, तथा नारकियोको कितना दुःख है? मुझे तो उसका असंख्यातवां भाग भी नहीं है।' इत्यादि विचारकर दृढ़ता रखना, समताभावसे सहन करना और योग्य उपचारसे उसे दूर करनेका यत्न करना।

'धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपतिकाल परखिये चारी।'

(४०) बेटी! विभव पानेपर अहंकार न करना और अपने से बड़े, धनी, मानी, ज्ञानी पुरुषोंके चरित्रों व स्वर्गकी सम्पत्ति व वैभवको विचारकर कि 'पुण्यके प्रभावसे इन्द्रादि देवों व राजाओं और अमुक-अमुक सेठोंके कितनी सम्पत्ति व रूप, बल, विद्या, संयम आदि थे, सो मेरे तो उसका अंश भी नहीं है।'

ऐसा विचारकर शान्त रहना। क्योंकि संसारमें छोटे, बड़े, धनी, निर्धन, मूर्ख, विद्वान् आदिका व्यवहार परस्पर सापेक्ष्य है। वास्तवमें सब कर्मकृत उपाधियां हैं। इनका मान करना व्यर्थ है। कहावत है—'जबतक ऊँट पहाड़के नीचे नहीं जाता, तभीतक अपनेको बड़ा समझता रहता है।' इसलिये आम्र वृक्षके समान विभवमें नम्र रहना ही उचित है।

(४१) बेटी! आजकल प्रायः लोगोंमें ईर्षाभाव बहुत देखनेमें आता है। वे लोग दूसरोंको सुखी देख निष्कारण उनमें तोड़-फोड़ मचाकर दुःखी कर देते हैं। इसलिये अगर कोई हजार सौगन्ध खाकर भी तुझसे तेरे घरवालोंकी कुछ बुराई बतावे तो कदापि उसे सत्य मत मानना और न ऐसी घृणित बातें सुननेकी इच्छा ही रखना। किन्तु उन कहने वालोंको ऐसा मुख बन्द उत्तर देना ताकि वे फिर कभी ऐसी बातें सुनानेका साहस न करें।

(४२) बेटी! यदि तू कभी कहीं किसीसे अपने घरकी भलाई बुराई सुनकर आवे, तो तुरन्त ही आकर अपने घरमें प्रकट कर देना ताकि उसपर विचार होकर योग्य प्रबन्ध किया जावे, क्योंकि अपने दोष अपने आपको नहीं मालूम होते। और देख, कभी भी अपने मुँहसे अपनी बड़ाई व दूसरोंकी बुराई मत करना। कितने लोग योंही चिढ़ाने चमकाने व हँसाने आदिके लिये कौतुक रूपसे भी स्त्रियोंको उनके माँ

बापकी भलाई बुराई कहने लगते हैं सो तू इससे मनमें खेद मत करना, क्योंकि जिसने बेटी दी है उससे नम्र और कोई नहीं है। संसारमें धैर्य (सहनशीलता) बड़ी गुणकारी वस्तु है, सदा उसका अवलम्बन करना।

(४३) बेटी! तू तो आपही सयानी है। तूने यहाँ सब कुछ देखा व सुना है। आजसे तेरा नवीन संसारमें प्रवेश होता है, इसलिए जो-जो बातें मैंने कही हैं अथवा तूने देखीं सुनीं हैं उनसे अब तुझे स्वानुभव करनेका समय आया है। अभी तक वे सब कोरी कथाएँ ही थीं परन्तु अब उनका सच्चा दृश्य तुझे दृष्टिगोचर होगा। लोग प्रायः थियेटरोंमें नाटक वगैरह देखने रुपया लगाकर जाते हैं परन्तु यह उनकी भूल है। इन्हें इन कृत्रिम भेषधारियोंके कल्पित खेलोंके देखनेसे कुछ लाभ नहीं हो सकता, इसके बदले उन्हें गृहस्थाश्रम-रूपी रंगभूमिमें रहकर ही संसारके सच्चे स्वरूपका अनुभव करके, सच्चे (आत्मिक-अविनाशी) सुखपर दृष्टि लगाना और इसी नरजन्मसे ही उसे प्राप्त करनेका उद्यम करना चाहिए, यही सार है।

(४४) हे बेटी! अब तू खुशी से जा। तू आयुष्मती, पुत्रवती, सौभाग्यवती और सीता सावित्री जैसी आदर्श रमणी हो। जा, तेरे लिये सवारी तैयार है समय भी होगया है, इसलिये देरी मत कर। इस प्रकार माताने शिक्षा देकर व

पुत्री के मस्तकपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और पुत्री भी माताके चरण स्पर्शकर प्रेमाश्रु गिराती हुई उक्त शिक्षाओंकी मणि-माला कंठमें पहिनकर धीरे-धीरे पालकीमें जा बैठी।

(४५) पश्चात् सासू अपने जमाई (दामाद) की ओर देखकर बोली—लाला जी! यह पाद प्रक्षालन करनेवाली दीन टहलिनी आपकी सेवाके लिये दी है इसलिये आप इसके गुण-दोषोंपर विचार न कर अपने बड़े कुलका ही ध्यान रखकर इसका जीवन निर्वाह कीजिये। हमलोग आपकी कुछ भी सेवा शुश्रूषा करनेमें समर्थ नहीं हुए, न कुछ दहेज (भट) ही दे सके हैं सो क्षमा कीजिए, क्योंकि आप बड़े हैं और बड़ोंके यहाँ सबका निर्वाह हो सकता है।

"आप बड़े सरदार हौ, जानत हो रस रीति।
ऐसें सदा निबाहियौ, तिलभर घटे न प्रीति॥"

ऐसा कह सासूने जमाईको नवीन फल (श्रीफल) तथा कुछ सुवर्ण, रुपया व मुद्रा भेंट देकर विदा किया।

(४६) सासूकी नम्र विनतीपर जमाईने भी सासूको मिष्ट वचनोंमें सन्तोष कराते हुए कहा—'सासूजी! आपने कन्या-रत्न दिया सो सब कुछ दिया है। इससे अधिक बहुमूल्य पदार्थ संसार में और क्या हो सकता है? जिस प्रकार वह यहां रहती थी उसी प्रकार वहां भी उनके लिए माताजी उपस्थित हैं। आप कोई चिन्ता न करें। हम लोगोंको सदैव अपने

पास ही समझिये। सासूजी ! संसारमें सब प्राणी अपने २ गुण-कर्मानुसार ही सुख-दुःख प्राप्तकर लेते हैं। यथार्थमें जीवको सिवाय उसके गुण-दोषों (स्वकृतकर्मों) के कोई भी सुख व दुःख देनेवाला नहीं होसकता, और वे तो हमारी गृह-लक्ष्मी ही हैं, तो भी मैं यथा शक्ति उनको सुखी बनानेमें कसर न रक्खूँगा। मुझे स्मरण है कि मैंने जो सप्त वचन विवाह समय आपकी प्यारी पुत्री और अपनी अर्द्धाङ्गनीको दिये थे, उनका भले प्रकार पालन करूँगा—

इस प्रकार जमाईने सासूको सम्बोधन करके उसे प्रणाम किया और पत्नीको लिवाकर ससुरालसे विदा हुआ। पश्चात् देखते २ दम्पति दृष्टिसे अदृश्य होगये। बिचारी माता व स्व-जनादि वियोगाकुल हो फिर २ देखते हुए पीछे लौटे। ठीक है—"बेटी अरु गाय, जहँ देवो तहँ जाय।"

माता की शिक्षा—

बेटो ! जब सुसरालै जाना, मत करना अपना मनमाना।
करना सो जो सासु सिखावे, वा जेठानी ननद बतावे॥
जो हों घर में जेठ जिठानी, करना उनही की मनमानी।
उनकी सेवा बन आवेगी, तो तू सुख सम्पति पावेगी॥
जेठी ननद सासु जेठानी, इन सबको तू समझ सयानी।
उनकी आज्ञा पालन करना, वधू-धर्म यह मनमें धरना॥

जितने जेठे होवें घरपर, उन्हें समझना पिता बराबर।
उनकी आज्ञा सिरपर धरना, मानो है सुखसे घर भरना॥
जो सुभाग्यसे हो देवरानी, करना प्रेम बहिन सम जानी।
उसको उत्तम काम सिखाना, अपने कुलकी चाल बताना॥
देवरको लखना लघु भाई, आदर करना प्रेम जनाई।
उनके दुखमें दुःख मनाना, सुखमें मिल आनन्द बढ़ाना॥
जब तुम उनसे काम कराना, अपना बड़पन नहीं जताना।
प्रेम सहित धीरे मुसक्याकर, आज्ञा देना शील जताकर॥
ऐसा करनेसे देवरानी, बात करेगी सब मनमानी।
देवर भी आज्ञा मानेंगे, तुमको गृहदेवी जानेंगे॥
छोटी ननद बहिन है छोटी, उससे बात न करना खोटी।
प्रेम सहित उसको आदरना, द्वेष विरोध कभी नहिं करना॥
यदि सुभाग्यवश तेरे घरपर, होवें कोई नौकर चाकर।
उनपर कभी न क्रोध जताना, कभी नहीं दुर्वचन सुनाना॥
शान्त भावसे आज्ञा देना, जो कुछ कहें उसे सुन लेना।
उनकी उचित प्रार्थना सुनकर, उचित होय सो करना गुनकर॥
समय समझकर डाँट बताना, उनको मुँह नहिं कभी लगाना।
उनके बच्चोंपर सुदया कर, उनका कभी न करो निरादर॥
उत्सव समय उन्हें कुछ देना, आशिष वचन उन्होंके लेना।
उनके दुखमें दया दिखाना, यों उनको निज दास बनाना॥
रखना चतुर दास अरु दासी, नेक चलन नीके विश्वासी।

लोभी रसिक मिजाजी तस्कर, ऐसे कभी न रखना नौकर ॥
ननद जिठानी देवरानीके, बच्चे लखना जैसे निजके।
शुद्धप्रेम उनपर नित करना, उत्तम शिक्षा यह मन धरना ॥
जाति बिरादरि घर मन भाये, मत जाना तुम बिना बुलाये।
यदि बुलाय भेजें आदर कर, जाना हुकम बड़ोंका लेकर ॥
पुर पड़ोस निवासी नारी, आये आदर करना भारी।
जाते समय प्रेमसे कहना, "आया करो" कभी तो बहना ॥
आपसमें कर कलह लड़ाई, मत करना उनकी कुबड़ाई।
जो तू घरमें कलह करेगी, दुनियाँ मुझको नाम धरेगी ॥
इससे मैं तुझको सिखलाती, मत होना कुबुद्धिमें माती।
काम वही करना दिन राती, जिसको सुन हो शीतल छाती ॥
गृह-कारज निज हाथों करना, इसमें लाज न मनमें धरना।
घर कपड़े बालक अरु भोजन, स्वच्छ रहें यह बड़ा प्रयोजन ॥
घरको लिपवाना पुतवाना, कपड़ोंको बहुधा धुलवाना।
लड़कोंको अकसर नहलाना, भोजन अपने आप बनाना ॥
इतने मुख्य काम नारीके, जो नारी करती है नीके।
वह सबको प्यारी होती है, सब पर अधिकारी होती है ॥
बूढ़ा बारा अथवा कोई, बीमारीसे व्याकुलता होई।
चित दे उसकी सेवा करना, दया धर्म यह मनमें धरना ॥
मत विचारना बुरा किसीका, तो तेरा भी होगा नीका।
परहितमें तू चित्त लगाना, फल पावोगी तब मनमाना ॥

बड़ी सीख यह उरमें धरना, सेवा पति चरणोंकी करना।
तेरा सुख उनके सुखमें है, तेर उनसे प्राण लगे हैं॥
पतिको भरसक राजी रखना, मनमें नाम उन्हींका जपना।
उनकी आज्ञा सिरपर धरना, रूखा उत्तर कभी न देना॥
देव जिनेन्द्र दयामई, धर्मा, गुरु निग्रन्थ हरे दुष्कर्मा।
श्रद्धा भक्ति इन्हींकी करना, चार दान दे पातक हरना॥
कभी भूल मिथ्यात्व न सेवो, ईर्षा, द्वेष त्याग तुम देवो।
बेटी दोनों कुलकी लाजा, जैसे रहे करो सो काजा॥
नार-धर्मकी कुञ्जी है यह, सुख-सम्पत्तिकी पूंजी है यह।
यह कर्तव्य जिससे बन आवे, सोई मनवांछित फल पावे॥
यह सब बातें चित्तमें धरना, अवहेलना इनकी नहिं करना।
जो इनके अनुसार चलोगी, सुखी रहोगी बहुत फलोगी॥८॥

यह शिक्षा न विसारियो, सुन बेटी चितधार।
तजो शोक जावो अबै, हर्ष सहित श्वसुरार॥
या विधि शिक्षा मातने, दई सुताका सार।
कुलवंती या विधि चले, मूरख देय विसार॥
यासे तन, मन, वचनसे, पालो निज कुल धर्म।
'दीप' लहो यश या जनम, परभव पाओ शर्म॥११॥

"स्वास्थ्योपयोगी मानसिक संयम व उपसंहार"

बहिनो! क्या यह तुमको मालूम है कि विवाहके पश्चात् ससुरालमें जाकर व गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेपर तुमको अपने

जीवनमें क्या-क्या करना है ? तुम किन-किन बातोंकी उत्तर-दाता हो ? क्योंकि प्रायः आजकलकी बहुएँ ससुरालमें पहुँचते ही सासू, श्वसुर, देवर, जेठ जिठानी, ननद तथा अपने पति को भी अपना आज्ञाकारी बनाकर स्वच्छन्द प्रवर्तनेकी चेष्टा करती हैं। वे सबपर आज्ञा करना, मनोनुकूल अच्छा २ खाना, पहिनना और सुखचैन उड़ाना ही अपना कर्तव्य व जीवनका सार समझती हैं। वे घरमें लड़-लड़ाकर वृद्ध सासू, श्वसुर व अन्य कुटुम्बियोंमें फूट उत्पन्न कर अपने पति सहित अलग रहनेमें ही भला समझती हैं। उनकी समझ है कि जब हम अपने माँ बापको छोड़कर आई हैं तो पतिको क्यों उनके माँ बापके साथ रहने दें ? इन सबकी सेवा कौन करे ? इत्यादि यहाँ तक कि कोई २ तो अपने पतिको लेकर अपने पीहर (माँ बापके घर) चली जाती हैं। परन्तु यह केवल उनकी भूल है, इससे न तो उन्हें सुख ही मिलता है, और न यश ही। किंतु कायरताका पोटला सिरपर पड़कर अपयश और दुःख का स्थान बन जाती हैं। इसलिये यदि तुम्हें अपने घरको स्वर्ग बनाकर देवों सरीखे सुख भोगना और यश प्राप्त करना है तो माताके उपदेशको ध्यानमें रखकर नीचे लिखी कुछ शिक्षाओंपर भी ध्यान दो और सच्ची गृहिणी बनकर गृहस्थाश्रममें सफल करो और सुखी बनो।

(१) बेटियो और बहिनो ! ज्यों ही तुम ससुराल जाओ,

त्योंही वहां अपने सब घरके लोगोंकी प्रकृति जान लो कि किसका स्वास्थ्य किस प्रकार ठीक रह सकता है, यही सबसे पहली बात तुम्हारे लिये होगी। परन्तु ध्यान रहे कि केवल शारीरिक स्वास्थ्यसे आरोग्य लाभ नहीं होता किन्तु उसका मनसे भी घनिष्ठ सम्बन्ध है अर्थात् बिना मानसिक संयमके शारीरिक आरोग्य कदापि नहीं रह सकता।

(२) आरोग्य केवल औषधिसे, शुद्ध खान-पानसे स्वच्छ हवा प्रकाशादि और सुगंधित वस्त्रोंसे ही नहीं मिलता है, किन्तु नीचे लिखी बातें भी बहुत आवश्यक हैं जिनपर पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये।

बहिनो! वह मानसिक संयम काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य इन अन्तरंग ६ शत्रु समूहोंपर विजय प्राप्त करनेसे प्राप्त होता है। अथवा अपनी विद्वत्ता, पूजा, कुल, जाति, रूप और धनादिके अभिमान (मद) का त्याग करनेसे, दूसरोंके गुण और सम्पत्ति आदि देखकर उनसे ईर्ष्या व द्वेष न करनेसे एवं दूसरोंका बुरा चिन्तवन और हिंसा, झूठ, चोरी कुशील व तृष्णाके त्याग करनेसे प्राप्त होता है। एवं अहिंसा (अपने समान दूसरोंमें कुशलवृत्तिका चिंतवन) सत्य—हित, मित, और प्रियभाषण, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और तृष्णाके त्याग से सुरक्षित एवं पल्लवित—वृद्धिंगत होता है।

बहिनो! इससे मानसिक और आत्मिक शान्ति प्राप्त

होती है, जो कि शारीरिक आरोग्य और ऐहिक व पारलौकिक सुखोंकी जननी है। इन सबमें अधिक महत्वकी और अत्यावश्यक बात यह है कि 'मनकी शांति रखना' इसीमें सब बातें समाई हुई हैं, इसलिये इसी सम्बन्धमें कुछ थोड़ी-सी बातें नीचे लिखी जाती हैं।

(क) अपने घरमें किसीसे कभी ऊंचे स्वर व क्रोधसे गर्व व मानसे व कटाक्ष करते हुए कपट भरे, कठिन, कड़ुवे वचन नहीं बोलना।

(ख) यदि तुमको कोई कटुक वचन क्रोध व मानके वश होकर कहे भी तो तुम उन्हें शांतिसे सुनकर अनसुने कर दो। क्योंकि अग्निके बुझानेके लिये पानी ही डाला जाता है न कि ईंधन। इसलिये तुम भी उस क्रोधरूपी अग्निको क्षमा शान्ति व सहनशीलता-रूपी पानी डालकर बुझा दो और नम्र (मिष्ट) वचनरूपी वायुमें उड़ा दो। क्योंकि वह क्रोधाग्नि उत्तरमें कटुक वचन कहने, तथा क्रोध व रीस करनेसे और भी धधकती है। यहाँ तक कि वह कभी-कभी घर जला डालती है। यह आरोग्यकी बड़ी भारी विघातिका है।

(ग) बहिनो! वशीकरणका नाम तुमने सुना होगा और तुम्हारे मुँहमें इस नामसे पानी भी भर आया होगा परन्तु तुमने सुना होगा कि लोग प्रायः ऐसा कहने लगते हैं कि न मालूम इस बहूने क्या जादू कर रक्खा है? जिससे सास,

ससुर, जेठ, देवर, पति, ननद आदि सबकेसब इसका कहना मानते हैं। यह जितना पानी पिलाती है, सब उतना ही पानी पीते हैं, इत्यादि। सो वह वशीकरण मन्त्र, सिवाय मिष्ट भाषणके और कुछ नहीं है। कहा है—

'सबके मन हर लेत हैं, तुलसी मीठे बोल।
यही मन्त्र इक जानिये, वशीकरण अनमोल॥
कागा किसको धन हरे, कोयल काको देत।
केवल मीठे वचनसे, जग अपनो कर लेत।

(घ) बहिनो! तुम साक्षात् प्रेमकी मूर्तियाँ हो, इसलिये तुम सर्वदा प्रसन्न चित्त रहो, ताकि सब लोग तुमसे प्रसन्न रहें। स्मरण रक्खो कि सांठा (गन्ना बोओगी तो मीठा, और नीम लगाओगी तो कड़ुवा रस पाओगी। बबूल बोनेसे कांटे ही फलते हैं। दर्पणमें जैसा मुँह करके देखो वैसा ही प्रतिबिम्ब दृष्टिगतहोगा। तात्पर्य यह है कि यदि तुम प्रसन्न रहोगी तो सब प्रसन्न रहेंगे।

(ङ) बेटियो! अदेखाई व ईर्षाभाव सर्वथा आरोग्यके घातक हैं। जिस घरमें इनका प्रवेश हुआ कि फिर उसे शत्रु की आवश्यकता नहीं रहती है। स्त्रियाँवहां परस्पर एक दूसरेको देख कर जलती भुलसती रहतीं हैं और इसी प्रकार बीमार होकर प्राणोंसे हाथ धो बैठती हैं। इसलिये कभी भी अदेखाई ईर्षाभाव नहीं करके, उनकी बढ़ती देखकर प्रसन्न होना चाहिये।

(३) बहिनो ! इस प्रकार प्रेम और सरल स्वभावसे तुम सबके साथ वर्ताव करोगी तो तुम्हारे मनकी शान्तिके साथ-साथ तुम्हारे शरीरकी निरोगता भी रहेगी, तुम अनेक रोगोंसे बची रहोगी। झगड़े टंटेसे ही रोग उत्पन्न होते हैं और फिर जीवन विषके समान दुःखरूप हो जाता है।

(४) मनकी शान्ति अर्थात् आरोग्यके लिये मुझे कई बातें कहनी हैं। उनमेंसे प्रथम स्वच्छता व सुघड़ता है। जितनी शान्ति वस्त्रालंकारोंसे नहीं होती उतनी स्वच्छता व सुघड़तासे होती है। इतना ही नहीं किन्तु वह स्वच्छता नव सुघड़ता अनेक रोगोंसे बचाती भी है।

(५) तुम अपना शरीर, अपने कपड़े, अपना गृह तथा गृहकी सम्पूर्ण वस्तुएं जैसे वर्तन नित्य वगैरह नित्य स्वच्छ रखना। बैठक व रसोईघर आदि स्थान स्वच्छ रखना। पहिरनेके व हाथ-मुँह पोंछनेके कपड़े जैसे रूमाल, अंगोछे, गंजी-फराक, धोती आदि नित्य धोकर स्वच्छ रखना। इसके सिवाय अन्य कपड़े चादर, कोट, कुरते आदि जो मैले हो गए हों; उनको धोबीके पास धुला लेना अथवा स्वयं धो लेना। बच्चोंको रोज नहलाना और उन्हें धोए हुए स्वच्छ कपड़े पहिराना चाहिये।

(६) घरका आंगन, संजोटा, घिनौंची, पलाना और हौज आदि अपने सामने व आप ही स्वयं साफ करना; क्योंकि

इनसे बदबू फैलकर हवाको बिगाड़ देती है, जिससे बीमारी फैल जाती है। जिस प्रकार कि दस्त न आनेसे पेट साफ न होकर बेचैनी होजाती है और स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उसी प्रकार घर भी साफ न होनेसे बिगड़ जाता है।

(७) घरमें खाने पीनेकी वस्तुएँ अपने आप नित्य शुद्ध (सशोधन) करना, यह तुम्हारा मुख्य कार्य है; क्योंकि बाजार से जो सामान आता है, उसमें प्रायः धूल, मिट्टी कंकर, भूसी मूसाकी लेंड़ी तथा और भी ऐसी ही बहुतसी हानिकारक अपवित्र वस्तुएं मिली रहती हैं। अथवा घरमें रखा हुआ अनाज आदि भी घुन जाता है। उसमें लट, कन्थु आदि जीव पैदा होजाते हैं। कीड़ी मकोड़ियां चढ़ जाती हैं। ऐसी दशा में बिना शोधे-बीने दलने, पीसने कूटने, रांधने, व खानेसे अत्याधिक हिंसा व रोग उत्पन्न हो जाता है। इसलिये जहांतक हो सके बाजारू चीजें बिना धोये सुखाये काममें मत लाओ।

(८) पकाया हुआ अनाज बहुत जल्दी बिगड़ने लगता है, इसलिये वासी भोजन नहीं रखना न किसी को खिलना। नरम वस्तुयें कि जिनमें पानीका भाग अधिक होता है, जल्दी चलित-रस होजाती हैं, इसलिये ऐसी वस्तुयें तुरन्त तैयार करके खाना व खिलाना चाहिए। तैयार किये हुए भोजनके पदार्थ कभी उघाड़े नहीं रहने देना चाहिये, क्योंकि मक्खी

आदि जीव अपने मुंह व पांवोंद्वारा अनेक अपवित्र और विषैले पदार्थ लाकर भोजनमें छोड़ देते हैं। चौकेमें सफाई रहनेसे वहां मक्खियां नहीं आवेंगी इसलिये इस प्रकारसे प्रबन्ध रक्खो जिससे चौकेमें सफाई रहे।

(९) रसोई करना तुम्हारा मुख्य काम है, इसलिये इस कार्यमें किसी प्रकार आलस्य न करके अच्छे प्रेम और उत्साहके साथ कि जिससे तुम्हारे भोजनकी प्रशंसा हो, किया करो ऐसी प्रेम और उत्साहसे बनाई हुई रसोई बहुत स्वादिष्ट और हितकारी होगी।

(१०) किसी को जिमाते हुए भोजन बड़े प्रेम और शुद्धभावसे कि "यह भोजन सबको हितकारी हो" परोसना; क्योंकि बिना मनसे व कुभावोंसे परोसा हुआ भोजन खानेवाले को विषका काम करता है। तात्पर्य यह कि परोसनेके समय जैसा भाव माता पुत्रके प्रति करती हैं, वैसा ही और भोजन करने वालोंके साथ तुम्हें रखना चाहिये।

(११) भोजन तैयार करनेके सम्बन्धमें एक आवश्यक बात यह भी है कि पुरुषोंका भोजनाधार प्रायः स्त्रियाँ ही होती हैं। ये उन्हें जैसा पवित्र, अपवित्र, स्वादिष्ट, सरस, नीरस, चटपटा या सादा भोजन बनाकर खिलावें वैसा ही उन्हें खाना पड़ता है और कभी-कभी प्रकृति-विरुद्ध कच्चा, चटपटा व निरुत्साहसे बनाया हुआ भोजन हानि भी पहुँचा

देता है। इसलिये सदैव ऋतु, उद्यम, प्रकृति, देश और रुचिके अनुसार फ़ेरफार करते हुए, सादा भोजन बनाना चाहिये कि जिससे शरीर आरोग्यवान् रहे, मनपर किसी प्रकार-का बुरा प्रभाव नहीं पड़ने पावे और कभी क्लेश उठानेका अवसर न आवे। मनके ऊपर भी भोजनका बहुत प्रभाव पड़ता है।

(१२) अधिक खारा खट्टा, चरपरा व मीठा भोजन छोटा-बड़ा—सबकी आरोग्यताको हानिकारक है। वह पाचन-शक्तिको बिगाड़ता; लोहूको तपाता, आंतोंके रसोंको बिगाड़ता, और बहुतसे चर्मरोगोंको उत्पन्न कर देता है। ऐसे भोजनसे खट्टी डकार आना, हिचकी आना, पेटमें पवनका रुकना और मरोड़ आना, शरीर व गलेमें खुजली आना, दस्त व पेशाबके स्थानमें व पेटमें पीलापनका होना, अरुचि रहना—इत्यादि व्याधियां बनी ही रहती हैं ये सब व्याधियां तुम्हारी पाक-शालासे ही निकलते हैं। इसलिये सादा और प्रकृति-अनुसार स्वादिष्ट भोजन बनाना चाहिये।

(१३) प्रायः लोगोंमें बलात्कार खींचतान करके अधिक भोजन खिलानेकी कुचाल पड़ जाती है। इससे हितके बदले वह अन्न सन्न (अजीर्ण आदि बीमारी) उत्पन्न करके उल्टा अहित कर देता है। इसलिये अधिक खींचतान नहीं करना चाहिए वैसे भूखा भी नहींरखना चाहिये; क्योंकि बहुतसे लोग

संकोचवश भूखे भी रह जाते हैं इसलिये उनसे अवश्य बार-म्बार पूछना चाहिए, और जिनकी प्रकृति या भोजनका अन्दाज तुम्हें मालूम हो उनको आग्रह न करके विचारके साथ ही परोसना चाहिए।

(१४) बहिनो! तुम घरकी भूषण और अन्नपूर्णा हो, तुम्हारे सिवाय किसी लकड़ी, पत्थर, धातु व मिट्टीकी मूर्तिका नाम अन्नपूर्णा लक्ष्मी, गृहदेवी या कुलदेवी नहीं है। तुम्हारे हाथमें पुरुषोंकी जीवनडोरी है, इसलिये तुम सच्ची गृहिणी बनो। स्वयं उत्तम मार्गका अवलम्बन करती हुई रानी चेलना आदिके समान अपने पति व अन्य पुरुषोंको भी सन्मार्गी बनाओ, यही तुम्हारा मुख्य कर्तव्य है।

(१५) घरमें यदि कर्मवश कोई बीमार पड़ जावे, तो तुम तुरन्त होशियारी, प्रेम, दया और उत्साहसे उसकी सेवा-टहल, करनेमें लग जाओ। यह काम प्रायः हरजगह दवा-खानों (होस्पिटल औषधालय) में परिचारिका (नर्स) ही करती हैं, कारण पुरुषोंसे स्त्रियोंका स्वभाव सहज ही नम्र व दयालु होता है। इसलिये घरमें तुम्हीं परिचारिका हो। तुम्हें इस काम में निपुण होना चाहिए, और इस विषयकी पुस्तकें पढ़कर तत्सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना तुम्हारा कर्तव्य है; क्योंकि यह काम जैसा आवश्यक है वैसा ही जोखम भर और जवाबदारीका भी है। तुम रोगीकी सेवाका पाठ मैना-

सुन्दरीसे सीखो। देखो, उसने अपने कोढ़ी पति राजा श्रीपाल-की कैसी सेवा की थी, जिसके प्रभावसे उसका पति कामदेव समान निरोग होगया था।

(१६) बीमारीके समय बहुत नरनारी व्यर्थ ही भ्रमोत्पादक बातें कल्पना करके बीमार की दवा आदिउपचार नहीं करते और धूर्तों (ठगों) के फन्देमें फंसकर झाड़-फूंक (मन्त्र-जन्त्र) कराते और इस प्रकार बीमारको हाथसे खो बैठते हैं। इसलिये तुम कभी ऐसे भोले लोगोंके बहकानेमें न लगो। और न कभी पाखंडियोंमें द्रव्य गमाओ; किन्तु सदा अपने व आसपासवालोंके घरोंकी रक्षा करना तुम अपना कर्तव्य समझो।

(१७) घरमें कोई बीमार हो तो बारीकीसे उस बीमारी-की जड़ ढूंढ़ निकालो। प्रायः दूषित हवा, अधिक शीत, अधिक उष्णता, गन्दा पानी, प्रकृति विरुद्ध अनुपसेव्य, अभक्ष व अनिष्ट अपवित्र या कच्चा भोजन, मर्यादा रहित भोजन, अधिक भोजन, कुसमय व रात्रि-भोजन ये सब रोग उत्पन्न होनेके कारण हैं इसलिये इस ओर ध्यान रक्खो।

(१८) हवा, पानी उजेला और पथ्य योग्य होनेसे ही औषधि काम देती हैं। अन्यथा कुसंयोगसे कभी अमृतयोग्य औषधि भी विषका काम कर जाती है, इसलिये उक्त चारों बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये। इसके अतिरिक्त एक

बात और ध्यानमें रखनेकी यह है कि तुम्हें रोगीका विश्वास करके उसके पास खाने-पीनेकी वस्तु कभी न रखना चाहिये; क्योंकि वह न मालूम कब क्या उठाकर खाले और रोग बढ़ जाय, क्योंकि रोगीका चित्त डांवाडोल रहता है, इससे कभी-कभी वह घबड़ाकर जानबूझके कुपथ्य कर बैठता है, इसलिये उसको बहुत चौकसी रखनी चाहिये।

(१९) बीमारके कमरेमें मन प्रसन्न करनेवाली अच्छी-अच्छी तस्वीरें उसके सामने लटकाना चाहिये, जिससे उसका चित्त उसमें लगा रहे। और वह रोगपर पुनः-पुनः विचार न करने पावे। क्योंकि निरन्तर रोगका विचार करते रहनेसे कभी-कभी रोगीका साहस घट जाता है, दवासे विश्वास उठ जाता और वह रोगको असाध्य मानकर निरन्तर चिंता चितामें भस्म होकर फिर कभी स्वास्थ्य लाभ नहीं कर सकता।

(२०) रोगीके पास बैठकर कभी कोई कायरता भय व शोकोत्पादक बात नहीं करना चाहिये, न उससे कभी यह कहना चाहिये, कि तुम्हारा रोग असाध्य है, किन्तु सदैव उसे मधुर वचनोंद्वारा सन्तोष ही बंधाते रहना, क्योंकि ऐसा न करनेसे कभी-कभी रोगी घबराकर प्राण तक छोड़ देता है। इसलिये सदैव दिल बहलानेवाली उत्तम पुरुषोंकी कथाएँ, धार्मिक उपदेश, तत्वचर्चा, वैराग्य भावना, ईश्वरके गुणानुवाद, कर्म और जीवका स्वरूप और उनसे छूटनेका उपाय इत्यादि-

की चर्चा करते रहना चाहिये ताकि रोगीका लक्ष्य रोगकी ओर जावे ही नहीं। वेदना हटानेका यह बड़ा भारी उपाय है।

(२१) सवेरे उठकर घरके सब किवाड़ खोलकर प्रत्येक स्थानमें नवीन हवा और सूर्यका प्रकाश पहुँचाना चाहिये; क्योंकि जिस घरमें हवा और प्रकाश बराबर नहीं पहुँचाया जाता है उस घरमें रहनेवाले और अधिकतर स्त्रियाँ पीली पड़ जाती हैं और सदैव रोगसे पीड़ित बनी रहकर वैसी ही निर्बल सन्तान उत्पन्न करती हैं, इसलिये हवा और प्रकाश सब मकानमें पहुँचाना आवश्यक है। रात्रिको ऊपरके भागमें रहनेवाली, जाजीदार खिड़कियाँ हवाके लिये सदैव खुली रखना चाहिये ताकि सदैव स्वच्छ हवा आती जाती रहे और पक्षी तथा चोर आदिका भी भय न रहे।

(२२) कभी-कभी गृहके आसपास मुहल्ले वगैरहकी हवा बिगड़ जानेपर उसे कुछ समयके लिए छोड़ देना चाहिये, अथवा हवा शुद्ध करनेवाले सुगन्धितपदार्थोंसे हवन कर पवन-शुद्धि करना चाहिये।

(२३) जिस प्रकार हवा आवश्यक है उसी प्रकार पानी का भी ध्यान रखना चाहिये। पानी उत्तम जलाशयसे जहाँ मैला आदि वस्तुएँ न पड़ती हों, वहाँसे मोटे कपड़ेके दो पुर्त वाले छन्नेसे छानकर लाना चाहिए और जीवानी उसी जलाशय में पहुँचना चाहिए। पानीका बर्तन भूमिसे ऊँचाई पर रखना

चाहिए। पानीमें जूठे वर्तन नहीं डुबोना चाहिये। पानीके वर्तन सदैव अन्दरसे खूब खरोंचकर मांजना व धोना चाहिए। पीनेके पानीसमान नहाने-धोनेके लिये भी शुद्ध छना हुआ पानी आवश्यक है। मैले-कुचैले हाथों व अपवित्र शरीरसे पानी नहीं लेना चाहिए, और पानी छाननेका छन्ना मैला व फटा हुआ नहीं रखना चाहिये; किन्तु सफेद स्वच्छ और मोटा होना चाहिए।

(२४) अधिक-सोना, दिनको सोना व नियमानुसार न सोना, सवेरे सूर्योदयके पीछे बहुत समय तक सोते रहना और रात्रिको विशेष जागना भी स्वास्थ्यको हानिकारक है।

(२५) निकम्मे बैठे रहनेसे भी शरीरमें प्रमाद उत्पन्न होकर अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये मानसिक व शारीरिक उभय प्रकारके रोगोंसे बचनेके लिये कभी भी निरुद्यमी नहीं रहना चाहिये। आजकल बहुतसे पुरुष अपनी स्त्रियोंसे घरका काम (कूटना; पीसना, झाड़ना, बटोरना, रोटी बनाना, बच्चोंको सम्हालना इत्यादि) न कराकर उन्हें पुरुषोंके समान टेनिस, क्रिकेट, हाकी आदि खेल खिलाकर व्यायाम कराना चाहते हैं परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है। इससे घरका काम ठीक न होकर बच्चोंकी सम्हाल भी ठीक नहीं होती। घरका खर्च बढ़ जाता है और छोटे-छोटे कामोंके लिये भी पराधीन होना पड़ता है। इसके सिवाय स्त्रियोंकी लज्जा भी नष्ट होजाती है। इसलिये कूटना,

पीसना, दलना, झाड़ना; पानी भरना; रोटी करना इत्यादि कार्य करना ही उत्तमोत्तम व्यायाम है। इससे एक पंथ दो काज होते हैं। घरका कार्य उत्तमतासे होता है, द्रव्य बचती है और स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है, समयका भी सदुपयोग हो जाता है। साथ-साथ घरके कामोंसे निवृत्त होनेके बाद शिक्षाप्रद धार्मिक व नैतिक पुस्तकोंका स्वाध्याय करना चाहिये व बच्चोंको कहलाते हुए मौखिक शिक्षा देनी चाहिए; ईश्वरका भजन करना चाहिए अथवा रहंटिया चलाकर सूत कातना, कपड़े सीना, बुनना आदि कला-कौशल सम्बन्धी शिक्षा लेनी चाहिये और यदि अवकाश हो तो कभी-कभी अपनी सास आदि गुरानियोंके साथ बाहर खुली हवामें भी जाना चाहिये। परन्तु तो भी घरके कामोंको अपने आप करनेकी अपेक्षा और कोई भी उत्तम व्यायाम नहीं हो सकता है।

(२६) बहिनो और बेटियो! मेरा यह सब कहनेका तात्पर्य यह है कि आरोग्यता प्राप्त करनेके लिये सबसे प्रधान कारण चित्तकी प्रसन्नता है, इसलिये वे कारण जिनसे अपना व परका चित्त प्रसन्न रहे, यथासंभव मिलाते रहना चाहिये।

(२७) स्त्रियोंको ऋतु (मासिक) धर्म-पालन करना अत्यावश्यक है। प्रायः बहुत-सी स्त्रियाँ इन दिनोंमें घरके सब कामकाज करती हैं, सिवाय रोटी पकानेके कूटना, पीसना, पानी भरना, कपड़े धोना, लीपना; बासन मांजना यहां तक

कि किसीके घर निमन्त्रणमें जीमने जाना, गाना, बजाना, अंजन-मंजन आदि शृंगार भी करती हैं। ऐसा करना सर्वथा वर्जित है इससे सन्तानपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। देखो, बरी, पापड़ आदि अचेतन पदार्थोंकी इनकी दृष्टि मात्र से क्या दशा होती है ? इसलिये उनको इन दिनोंमें उक्त सब कामोंसे अलग ही रहना चाहिए। अर्थात् ४ दिन तक एकांत स्थान (किसी हवादार कोठरी) में ही बिताना चाहिए और अपने भोजनके वर्तन व ओढ़ने-बिछानेके कपड़े बिल्कुल अलग रखना चाहिये। पश्चात् पांचवें दिन स्नान करके घरका काम करना उचित है। जिस घरमें रजोधर्मकी क्रिया बराबर नहीं पलती है, उस घरमें व्रती, श्रावक व मुनि आदि सत्पात्रोंके आहारकी विधि नहीं बन सकती है। इस विषयमें अन्य श्रावकाचार व वैद्यकके ग्रन्थोंमें बहुत विचार किया गया है, वहाँसे देखना चाहिये। यह बात स्वास्थ्यके लिए भी बहुत आवश्यक है।

(२८) गर्भवती स्त्रियोंको उपावासादि व्रत नहीं करना चाहिये और न मनमाने खट्टे, चटपटे, कड़ुवे आदि पदार्थ खाना चाहिये। क्रोध, आलस्य, विकथा कलह, मिथ्याभाषण, चोरी, कपट, मैथुन आदि निंद्यकार्य नहीं करना चाहिये। इससे गर्भस्थ बालकको बहुत कष्ट पहुँचता है और बुरा प्रभाव पड़ता है तथा अंगहीन व रोगी दुःस्वभाववाली सन्तान

होती है।

(२९) ऋतुकालमें गर्भाधान होनेसे भी विकल अंग व दुःस्वभाववाली असदाचारी सन्तान होती है। अतएव कमसे कम ५ दिन अवश्य ही बचा देना चाहिये।

(३०) प्रायः बहुतसी स्त्रियां जब कभी घरसे बाहर कहीं जीमन आदिके लिये मेले ठेलेमें जाती हैं तो बहुतसे वस्त्रा-भूषणोंसे सुसज्जित होकर (यदि घरमें न हों तोमांगकर भी पहिन) जाती हैं जो उचित नहीं हैं, परन्तु जब वे घर आती हैं तो अपने पतिके सन्मुख मैले-कुचैले कपड़े पहिनकर आभूषण रहित आती हैं। इससे ही उनके पति उनसे घृणा करने लगते हैं। इसलिये स्त्रियोंका मुख्य कर्तव्य है कि जब वे कहीं बाहर जाय; तब साधारण वस्त्राभूषण पहिनकर जावें यदि पति घर हो तो रात्रि समय सम्पूर्ण शृंगार करके जावें, जिससे आराध्य पतिका चित्त उनहीके पास बंध जावे और अन्यत्र न जाने पावे! शृंगार वास्तवमें पति ही के लिये होता है, न कि औरोंको दिखानेके लिये।

(३१) यदि पति विदेशमें हो, तो भी स्त्रियोंको शृंगार नहीं करना चाहिये। तथा घरसे बाहर अत्यन्त आवश्यकता होनेपर भी बिना किसी विश्वस्त गुरुजनको साथ लिये कदापि न जाना चाहिये।

(३२) अज्ञानतावश बहुतसी पुत्रियां अपने गुरुजनों

(माता, पिता, मामा, बड़ा भाई, काका, बड़ी भाभी, मौसी फुवा, फूफा, कांकी आदि) से अपने पैर पुजवाती हैं यह उनकी बड़ी भूल है। इसलिये उन्हें चाहिये कि अपने गुरुजनोंसे चाहे वे पितापक्षके होवें चाहे श्वसुर (पति) पक्षके हों, सबके स्वयं पांव पूजें।

(३३) अन्तिम निवेदन यही है कि गृहस्थाश्रम एक बड़ा भारी वृक्ष है। इसलिये इसकी छायामें आनेवाले व इसका आश्रय लेनेवाले सब जीवोंका यह हितकारी व मनोवांछित फलदाता होना चाहिये। तात्पर्य यह है कि परोपकार, दान, अतिथिसेवा, देवार्चन पठनपाठनादि कार्योंसे गृहस्थोंकी शोभा होती है जैसाकि निम्नलिखित श्लोकसे विदित होता है, इसलिये उसपर ध्यान देना चाहिये :—

सानंदं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ताऽमृतंभाषिणी।
इच्छा ज्ञानधनं स्वयोषिति रतिश्चाज्ञापराः सेवकाः॥
आतिथ्यं जिनपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे।
साधोः संगमुपासते हि सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः॥

अर्थात्—जिस घरमें नित्य आनन्दका वास हो (सब प्रसन्नचित्त हों) पुत्र बुद्धिमान हों। स्त्री मिष्टभाषिणी हो, ज्ञान धनकी ही जहाँ इच्छा हो, पुरुष अपनी स्त्रीपर प्रेम करने वाला हो, सेवक आज्ञाकारी हो, जहां आतिथ्योंका सत्कार (दान) तथा जिन-पूजनका लाभ हो; जहां मिष्टान्न

(स्वादिष्ट शुद्ध) भोजन बनता हो, और जहां साधुओंका समागम रहता हो, वह घर (गृहस्थाश्रम) धन्य है।

प्रिय बन्धुओ, बहिनो और बेटियो! कहाँ है आज वे माताएँ जो अपनी बेटियोंको उक्त प्रकारकी शिक्षा देती थीं? हाय! आज इस आर्यावर्तमें द्विज वर्णोंमें भी ऐसी महिलारत्नोंका एक प्रकारसे अभाव सा ही देखनेमें आता है। कहाँ गईं सीता, द्रौपदी, अञ्जना, मैना व मनोरमा? हाय भारतभूमि! आज तू ऐसी सतियों व रामचन्द्र, हरिश्चन्द्र, विक्रम, जैसे नररत्नों व उमास्वामी, समन्तभद्र अकलङ्क आदि धर्मप्रचारकोंको खोकर ही गारत हो रही है।

हे भारतके सभ्य नर-नारियो! जागो देखो, एक पहियेसे रथ नहीं चलेगा, इसलिये स्थान-स्थानपर पुत्र और पुत्रियोंकी पाठशालाएँ खोलो, रीति-नीति व सद्धर्म प्रचारकी शिक्षाका घर-घरमें प्रचार करो, ताकि ऐहिक सुखोंकी प्राप्ति हो, और पारलौकिक सुखोंके निकट भी पहुँच सको। इस समय हमको पुरुषोंमें जैसे सदाचार व्यापार आदिकी शिक्षा देना अभीष्ट है; उसी प्रकार स्त्रियोंमें भी कुल व्यवहार गृहस्थाश्रम सम्बन्धी सब प्रकार शिक्षा देना आवश्यक है। उन्नति या अवनतिका एक प्रधान कारण स्त्रियोंको समझना चाहिये।

॥ समाप्त ॥